भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (1975 से 2012)

शोध-प्रबन्ध

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा की

डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी
(सामाजिक विज्ञान)
हेतु प्रस्तुत

प्रस्तुतकर्ता
योगेन्द्र सिंह

शोध निर्देशक
डॉ. गोविन्दकृष्ण शर्मा
सह-आचार्य, राजनीति विज्ञान
राजकीय बिड़ला महाविद्यालय, भवानीमण्डी (राज.)

शोध केन्द्र
राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
2018

C E R T I F I C A T E

I feel great pleasure in certifying that the thesis entitled **"भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (1975–2012)"** by **Yogendra Singh** under my guidance. He has completed the following requirements as per Ph.D. regulations of the University

(a) Course work as per the university rules.

(b) Residential requirements of the University (200 days)

(c) Regularly submitted annual progress report.

(d) Presented his work in the departmental committee.

(e) Published / accepted minimum of one research paper in a referred research journal,

I recommend the submission of thesis.

Dr. Govindkrishan Sharma

Date:

Associate Professor- Political Science
Govt. Birla College, Bhawani Mandi
(Rajasthan)

Abstract

आपातकाल का सामान्य अर्थ ऐसी परिस्थितियों से लिया जाता है। कि "विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए विशेष संवैधानिक प्रावधान प्रयुक्त किये जाए"। आपातकाल के प्रावधान को जर्मनी के संविधान से लिया गया है। सविधांन के 18वें भाग मे अनुच्छेद 352 से 360 तक आपातकाल का वर्णन किया गया है। 25 जून 1975 को जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में साम्यवादी दल को छोडकर अन्य विरोधी दलों (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, समाजवादी दल और भारतीय लोकदल इत्यादि) ने इन्दिरा गाँधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए एक बडा व्यापक आन्दोलन छेड़ने की घोषणा की। इस पर प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने अपने सहयोगी मंत्रियों, मुख्यमंत्रियो और अन्त में राष्ट्रपति से विचार किया। इन्दिरा गाँधी के विचार में कानून तथा व्यवस्था के टूटने और अराजकता फैलने की पूरी–पूरी संभावना थी इसलिए उन्होने तत्कालीन राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद से आन्तरिक संकटकालीन स्थिति की घोषणा करवा दी। बाहरी संकटकालीन स्थिति 3 दिसम्बर 1971 से पहले की चल रही थी। इसके बाद आन्तरिक आपातकाल 25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 तक लगभग 21 महीने तक रहा। इन्दिरा गाँधी का 1 जुलाई, 1975 को प्रगतिशील सामाजिक, आर्थिक रूपान्तरणों के अन्तर्गत 20 सूत्रीय कार्यक्रम की शुरूआत मूलतयाः भूमि सुधार का कार्यक्रम तेज करने खेतिहार मजदूरों की स्थिति में सुधार करने, ऋणदासता आदि का उन्मूलन करने की ओर निर्देशित था। इसके अन्तर्गत मेरे द्वारा 1975 में विधायक एवं 1977 में सांसद पण्डित रामकिशन का साक्षात्कार लिया एवं 1975 में प्राध्यापक ओमप्रकाश गुप्ता का साक्षात्कार भी लिया गया।

आपातकाल की घोषणा के साथ ही विपक्षी दलों के नेताओं की गिरफ्तारियाँ शुरू कर दी गई। सुबह होने पर लोगों को पता चला कि लोकतंत्र का गला घोंटकर

देश में इंदिरा सरकार ने ''आपातकाल'' की घोषणा कर दी है। दूरभाष से पूर्व सूचना देकर दिल्ली में नानाजी देशमुख, श्री जगदीश प्रसाद माथुर प्रभृति शीर्षस्थ नेताओं को सजग कर दिया गया था ताकि वे आन्दोलन का नेतृत्व कर सकें। आपातस्थिति की अचानक घोषणा से देश में आतंक का वातावरण फैल गया क्योंकि गिरफ्तारी के बाद न उसके विरोध में अपील हो सकती थी, न वकील न अदालत में दलील पेश करने की गुंजाईश रखी गई थी। अपने घरों से फरार और गिरफ्तार कार्यकर्ताओं के परिवारों को भी प्रताड़ित करने में कोई कसर नहीं रखी गई। जेलों में कैद कार्यकर्ताओं को अकथनीय यातनाऐं दी गईं। पचासों उदाहरण देश की जेलों में उन दिनों संघ के ही कार्यकर्ताओं, छात्रों तथा विपक्षी दलों के बंदियों के जीवन में घटित हुए। अनेक तो यातनाऐं झेलते–झेलते ही जेलों में ही शहीद हो गये।

लोकतंत्र की मजबूती का मीडिया की आजादी से सीधा संबंध है। स्वस्थ्य लोकतंत्र की धमनियों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता रक्त की तरह बहती है और निष्पक्ष मीडिया लोकतंत्र का हृदय है जो सुनिश्चित करता है कि रक्त संचार सुचारू रूप से होता रहे। यही कारण है कि जब भी जहाँ भी लोकतंत्र को कमजोर करने या उसकी हत्या करने की कोशिश की गयी। पहला वार मीडिया की आजादी पर किया गया। कोई भी तानाशाह स्वतंत्र मीडिया का पक्षधर कभी नहीं हो सकता। तानाशाही में भय और आतंक के विरूद्ध डटकर खड़ी होने वाली मीडिया को बेरहमी से कुचला जाता है। भारत में भी आपातकाल के बहाने तानाशाही का ऐसा भी रूप देखा है।

छठें आम चुनाव कराये जाने की आकस्मिक घोषणा ने विभिन्न प्रतिपक्षी राजनीतिक दलों के समक्ष गहन चुनौती उत्पन्न कर दी और आपसी विलय की विचारणा को अनिवार्य बना दिया। आपातकाल के दौरान प्रतिपक्षी नेताओं को आपसी विचार–विमर्श का अनायास ही अवसर मिल गया था। जेल से छूट कर बाहर आये नेताओं के लिए यर्थाथ को टालने या बंटे–बिखरे रहने के कारण स्वयं

अपने अस्तित्व के विलोप का खतरा साफ था अतः अपने–अपने पृथक अस्तित्व को समाहित करने तथा देश में व्याप्त राजनीतिक अभिशाप की स्थिति को समाप्त करने की प्रेरणाऐं सबल बन गईं। सौभाग्य से जयप्रकाश नारायण जैसा प्रभावी नैतिक नेतृत्व भी सुलभ हुआ और जो कार्य वर्षों में नहीं हो पाया वह अवसरजन्य स्थिति के कारण कुछ दिनों में संभव हो गया अन्ततः चार विपक्षी दलों (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल, समाजवादी दल) ने मिलकर मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी का गठन किया एवं 1977 के लोकसभा चुनाव में जनता पार्टी चुनाव जीत गई और 1975 से लेकर 2012 तक अनेक पार्टीयों बनी जिनमें प्रमुख हैं – जनता पार्टी, लोकतंत्र कांग्रेस, कांग्रेस (एस), लोकतंत्रीय कांग्रेस (कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी), लोकदल (जनता एस), भाजपा, कांग्रेस तिवारी, राष्ट्रवादी कांग्रेस, एन.डी. ए., यू.पी.ए.।

1977 के लोकसभा चुनाव में जनता पार्टी की सरकार बनी जिसमें मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री थे।

1980 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस (आई) पार्टी की सरकार बनी जिसमें इंदिरा गाँधी प्रधानमंत्री थी।

1984 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस (आई) पार्टी की सरकार बनी जिसमें राजीव गाँधी प्रधानमंत्री थे।

1989 के लोकसभा चुनाव में जनता दल पार्टी की सरकार बनी जिसमें वी.पी.सिंह प्रधानमंत्री थे, लेकिन बाद में सरकार गिर जाने के कारण जनता दल (सोशलिस्ट) के चन्द्रशेखर प्रधानमंत्री थे।

1991 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस (आई) पार्टी की सरकार बनी जिसमें पी.वी.नरसिम्हाराव प्रधानमंत्री थे।

1996 के लोकसभा चुनाव में भाजपा पार्टी की सरकार बनी जिसमें

अटलबिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री थे, लेकिन सरकार ज्यादा दिन नहीं चली, और बाद में जनतादल संयुक्त मोर्चा के रूप में एच.डी.देवगोड़ा प्रधानमंत्री तथा इसके बाद इन्द्रकुमार गुजराल प्रधानमंत्री बने।

1998 के लोकसभा चुनाव में एन.डी.ए. की सरकार आई, जिसमें अटलबिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री थे।

1999 के लोकसभा चुनाव में एन.डी.ए. की सरकार वापिस सत्ता में आई, जिसमें अटलबिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री थे।

2004 की लोकसभा चुनाव में यू.पी.ए. की सरकार आई, जिसमें मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री थे।

2009 की लोकसभा चुनाव में यू.पी.ए. की सरकार वापिस सत्ता में आई, जिसमें मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री थे।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि साधारण व्यक्तियों ने अपने मताधिकार से यह सिद्ध कर दिया कि वे समय आने पर ऐतिहासिक और क्रांतिकारी निर्णय ले सकते हैं। कांग्रेस के लिए यह 1977 का चुनाव परिणाम वज्रपात बनकर सामने आया। इससे न केवल भारतीय राजनीति पर तीस वर्षों से चला आ रहा कांग्रेस का एकाधिकार ही समाप्त हो गया अपितु केन्द्र में गैर कांग्रेस शक्तियों का विजय एक नये युग का श्री गणेश कर दिया। जनता पार्टी की जीत के बाद जनता पार्टी की सरकार ने बहुमत खो दिया और जनता पार्टी का विभाजन हो गया। भाजपा का निर्माण हुआ। कांग्रेस की कांग्रेस (ई) हो गयी अनेक पार्टी बनीं और बिगड़ी आज केन्द्र की राजनीति एन.डी.ए. (नेशनल डेमोक्रेटिव अलाइन्स) और यू.पी. ए. (यूनाइटेड प्रोगेशिव अलाइन्स) के बीच है।

Candidate's Declaration

I, hereby certify that the work, which is being presented in the thesis, entitled **''भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (1975–2012)''** in partial fulfillment of the requirement for the award of the Degree of Doctor of Philosophy, carried under the supervision of **Dr. Govind Krishan Sharma, Associate Professor, Political Science** and submitted to the University of Kota, Kota represents my ideas in my own words and where others ideas or words have been included. I have adequately cited and referenced the original sources. The work presented in this thesis has not been submitted elsewhere for the award of any other degree of diploma from any institutions. I also declare that I have adhered to all principles of academic honesty and integrity and have not misrepresented or fabricated or falsified any idea / data / fact / source in my submission. I understand that any violation of the above will cause for disciplinary action by the University and can also evoke penal action from the sources which have thus not been properly cited or from whom proper permisssion has not been taken when needed.

____

Signature

Yogendra Singh

Date ____________

This is to certify that the above statement made by **Yogendra Singh** (Enrollment No. **..........................**) is correct to the best of my knowledge.

Date: Research Supervisor (s)

University Department of _______ / University (Center / Research Center)

अभिस्वीकृति

स्नातकोत्तर,नेट,बी.एड., की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात एवं महाविद्यालय में शिक्षण कार्य के दौरान जब मैंने शोधकार्य करने का विचार किया तो सर्वप्रथम मेरे सामने शोध विषय के चयन को लेकर समस्या उत्पन्न हुई यों तो भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के प्रति मेरी अभिरूचि अधिक थी और इसी क्षेत्र में अपना शोधकार्य करना चाहता था इसलिए इच्छा थी कि मैं किसी परम्परागत प्राचीन विषय पर कार्य न कर बल्कि भावी शोध को दिशा देने के लिए किसी अछूते और नूतन विषय का चयन करूँ। इस सन्दर्भ में जब मैंने अपनी बात डॉ. गोविन्दकृष्ण शर्मा, सह–आचार्य, राजनीति विज्ञान के सामने रखी तो उन्होंने विषय चयन सम्बन्धी समस्या का निदान करते हुए मुझे सन् 1975 का आपातकाल के सम्बन्ध में पढ़ने के लिए कहा। जब मैंने गहराई से आपातकाल का विस्तार से अध्ययन किया तो मुझे दिशा भी मिली और अभिरूचि की पुष्टि भी हुई। ज्यों–ज्यों मैं सन 1975 के आपातकाल को पढ़ता, त्यों–त्यों आपातकाल की परिस्थितियों की संवेदनाओं में डूबता गया और उससे मेरी अभिरूचि और शोधपरक दृष्टि दोनों को निरन्तर गति मिलती गई इसलिए मैंने **भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (1975–2012)** को अपने शोध का अध्ययन विषय बनाना निश्चय किया।

25 जून 1975 का आपातकाल अपनी प्रकृति में विश्लेषणात्मक एवं उद्‌देश्यपरक अध्ययन है। इस शोध अध्ययन का मुख्य उद्‌देश्य यह जानना है कि सन 1975 में आपातकाल क्यों लगाया गया ? और उसके बाद राजनीति में क्या परिवर्तन आये? राष्ट्रीय स्तर पर आपातकाल को लागू करने की क्या परिस्थितियाँ थी? आपातकाल के दौरान संघीय शासन व्यवस्था प्रदान करने में संवैधानिक संशोधन किस प्रकार प्रभावी सिद्ध हुए हैं? आपातकाल के दौरान विभिन्न राजनीतिक

दलों के अस्तित्व, संगठन एवं महत्व के लिए राजनीतिक दलों के सामने एक चुनौती थी और राजनीतिक दलों के लिए इन प्रश्नों से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने में राजनीतिक दलों में क्या बदलाव परिलक्षित होता है। आपातकाल में देश का राजनीतिक परिदृश्य क्या हो जाता है? क्या आपातकाल का प्रयोग तत्कालीन कांग्रेस सरकार के समक्ष एक मात्र विकल्प था? इसे टाला जा सकता था? आपातकाल के बाद आम चुनाव हुए। जनता पार्टी की सरकार सत्ता में आयी। कुछ महीनों बाद जनता पार्टी ने बहुमत खो दिया। भाजपा का निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ? व कांग्रेस की कांग्रेस(ई) हो गई बाद में जनता दल, कांग्रेस तिवारी, राष्ट्रवादी कांग्रेस, यूनाइटेड और राष्ट्रीय ध्रुवीकरण के रूप में एन.डी.ए. और यू.पी.ए. बने। इसके अलावा और भी पार्टीयाँ बनीं और बिगड़ी उन सभी का इस शोध प्रबन्ध में क्या मुख्य उद्देश्य रहा है। शोधकार्य करना अपने आप में महत्वपूर्ण माना जा सकता है। मैंने **'भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (1975 से 2012)'** शीर्षक पर सारगर्भित शोध प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जो अपनी आवश्यकता, मौलिकता एवं महत्व को रेखांकित करते हुए प्रबुद्धजनों के लिए चिन्तन के नये आयाम प्रस्तुत कर सकेगा ऐसा मेरा विश्वास है। मेरा शोध प्रबन्ध सात अध्यायों में विभाजित है और प्रत्येक अध्याय को बिन्दुओं के आधार पर सूक्ष्मता के साथ सटिक एवं तथ्यात्मक विश्लेषण के साथ प्रस्तुत किया है। यह विश्लेषण समीक्षात्मक एवं तथ्यात्मक ढंग से पूरी ईमानदारी और तटस्थता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में **आपातकाल का सामान्य परिचय एवं भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियों और उनके निर्णय का अध्ययन किया गया है।**

शोध प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में **आपातकाल के दौरान 20 सूत्रीय कार्यक्रमों का क्रियान्वयन और प्रभाव की विवेचना (साक्षात्कार एवं सर्वे) पर आधारित है।**

शोध प्रबन्ध के तृतीय अध्याय में **आपातकाल के दौरान गैर–कांग्रेसी राजनीतिक दलों की स्थिति का अध्ययन किया गया है।**

शोध प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय में **आपातकाल में प्रेस/ मीडिया की क्लिपिंग का अध्ययन किया गया है।**

शोध प्रबन्ध के पंचम अध्याय में **आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य, राजनीतिक परिवर्तन, राजनीतिक दलों पर उनका प्रभाव, राजनीतिक चेतना और बनती बिगड़ती राजनीतिक पार्टीयों का अध्ययन किया गया है।**

शोध प्रबन्ध के षष्ठ अध्याय में **कांग्रेसवाद और गैर–कांग्रेसवाद की अवधारणा की विवेचना तथा आपातकाल के बाद राजनीतिक चेतना पर सर्वेक्षण किया गया है।**

शोध प्रबन्ध के सप्तम अध्याय में **25 जून 1975 के आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों का मूल्यांकन किया गया है।**

वस्तुतः ये निर्धारित तत्व की प्रतिपाद्य विषय के अध्ययन का आधार बने हैं जो कि वर्तमान सन्दर्भों में प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण माने जा सकते हैं। यद्यपि मैंने प्रस्तुत शोध विषय की पृष्ठभूमि और प्रमाणिकता के लिए अनेक ग्रन्थों से सहायता भी ली है।

माँ सरस्वती की असीम अनुकम्पा एवं माता–पिता के आशीर्वाद स्वरूप आज में इस शोध प्रबन्ध **"भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (1975–2012)"** को प्रस्तुत करने की स्थिति में हूँ। यह क्षण मेरे जीवन का महत्वपूर्ण अवसर है। यह शोध प्रबन्ध को इस परिणति तक पहुँचाने हेतु मैं शोध–पर्यवेक्षक डॉ. गोविन्दकृष्ण शर्मा सह–आचार्य, राजनीति विज्ञान, के प्रति अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने महाविद्यालय की व्यस्तता के बावजूद, विषय के चयन, अध्ययन, विश्लेषण, मूल्यांकन एवं प्रस्तुति के विविध चरणों में अपने बहुमूल्य सुझावों से पग–पग पर मेरा मार्गदर्शन किया। इस शोध प्रबन्ध में मैंने जो भी कुछ किया है वह उन्हीं की प्रेरणा का परिणाम है। समय–समय पर मुझे विश्वास,

धैर्य एवं कृत संकल्प बने रहने हेतु उनके प्रेरणास्पद परामर्श ने मेरे प्रस्ताव को अर्थपूर्णता एवं दिशा प्रदान की। इसके लिए मैं सदैव उनका कृतज्ञ एवं ऋणी रहूँगा।

शोधार्थी उन सभी विद्वानों, लेखकों, चिन्तकों, मनीषियों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता है जिनके शोध ग्रन्थों, पुस्तकों, लेखों, वक्तव्यों ने शोध कार्य में सहायता एवं मार्गदर्शन प्रदान किया क्योंकि उनके अध्ययन एवं सन्दर्भों के बिना शोध प्रबन्ध अपनी पूर्णता को प्राप्त नहीं कर पाता। विद्याज्ञान अर्जन के बिना शोध कार्य सम्पन्न करना संभव नहीं है। मैं पुस्तकालयाध्यक्ष, केन्द्रीय पुस्तकालय राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली, भगवती कन्या महाविद्यालय, गंगापुर सिटी, भगवती स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंगापुर सिटी, राजकीय कला महाविद्यालय कोटा, राजकीय महारानी श्री जया महाविद्यालय, भरतपुर, वीणा मेमौरियल डिग्री कॉलेज करौली, इंडियन एक्सप्रेस कार्यालय, दिल्ली, टाईम्स ऑफ इण्डिया कार्यालय, दिल्ली को उनके सहयोग के लिए हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

श्रीमती डॉ. भावना शर्मा (पत्नी डॉ. गोविन्दकृष्ण शर्मा) देवाशीष के स्नेहपूर्ण व्यवहार के लिए कृतज्ञ हूँ। मैं अपने पूजनीय पिताजी स्व. श्री रामचरन लाल अम्बेश, सहायक निदेशक (अभियोजन विभाग) के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने अपने जीवनकाल में मुझे शोध कार्य करने के लिए प्रेरित किया। मेरी पूजनीय माताजी श्रीमती लीलावती जिन्हें मेरे इस अध्ययन के दौरान अनेक असुविधाऐं हुईं जिन्हें उन्होंने न केवल प्रसन्नता पूर्वक सहन किया अपितु शोधकार्य में पूर्ण सहयोग दिया।

शुद्ध एवं आकर्षक कम्प्यूटर मुद्रण के लिए अनिल कुमार गोधा को साधुवाद देता हूँ जिन्होंने अल्प समय में यह कार्य शीघ्रता से सम्पन्न किया। अन्त में उन सभी अग्रजों, शुभचिन्तकों, मित्रों एवं सहकर्मियों को आभार प्रदर्शित करता हूँ जिनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष योगदान इस शोधकार्य में मिला।

76, संजय नगर फेज–3 भरतपुर **योगेन्द्र सिंह**

दिनांक

अनुक्रमणिका

अध्याय–प्रथम (अ) सामान्य परिचय

(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियां और उनके निर्णय का अध्ययन

(अ) सामान्य परिचय **1 – 39**

1. सामान्य परिचय 1 – 2
2. भारतीय संविधान में आपातकाल को लागू करने की स्थितियाँ 2 – 3
3. आपातकाल के दौरान संघ की कार्यपालिका और विधायिका को असाधारण शक्तियाँ प्राप्त होना 3 – 7
4. आपातकालीन उपबंधों की आलोचना 7 – 8
5. आपातकाल की घोषणा 8 – 11
6. उपलब्ध साहित्य की समीक्षा 11 – 13
7. शोध का उद्देश्य 13 – 14
8. शोध प्रविधि 14 – 15

(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ और उनके निर्णय का अध्ययन

1. कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव 15 – 17
2. सन 1967 के बाद कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव 17 – 21
3. इंदिरा गाँधी का सन् 1971 का चुनाव एवं बदलती हुई परिस्थितियाँ 21– 26
4. प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी पर भ्रष्टाचार का आरोप 26
5. मीसा तथा डी.आई.आर. का प्रयोग 27
6. भारत पाक युद्ध से उत्पन्न समस्या 27 – 28
7. तात्कालीन कांग्रेस सरकार द्वारा संविधान में संशोधन 28 – 30
8. विरोधी दलों के आन्दोलन एवं उनके प्रभाव 31 – 33
9. आपातकाल का निर्णय एवं प्रक्रिया। 33 – 35

संदर्भ 36 – 39

अध्याय–द्वितीयः आपातकाल के दौरान 20 सूत्रीय कार्यक्रमों का क्रियान्वयन और प्रभाव की विवेचना (साक्षात्कार, सर्वे) पर आधारित **40–57**

(अ) युवकों को पकड़कर की गई नसबन्दी 40 – 41

(ब) बसों से लेकर कर्मचारी तक सब रहते थे राइट टाइम 41 – 43

(स) बीस सूत्रीय कार्यक्रम 43 – 56

संदर्भ 57

अध्याय– तृतीय आपातकाल के दौरान गैर–कांग्रेसी राजनीतिक दलों की स्थिति की विवेचना **58 – 99**

1. झुक नहीं सकते 58 – 62
2. तीन दिन नहीं दिया भाई को खाना 62 – 63
3. अपराधियों जैसा बर्ताव करता था प्रशासन 63
4. अपनों ने ढाए थे अंग्रेजों जैसे जुल्म 63
5. जेल जाने के डर से बने टी.बी. मरीज 64
6. पेंशन कम और सुविधाऐं मिले – चौ. योगेन्द्र 64
7. किताबों ने कही कहानी 64 – 65
8. आपातकाल की देन है जम्मू–कश्मीर में छह साल की विधानसभा 65 – 66
9. तराश मंदिर में रूके थे नानाजी देशमुख 66
10. कोतवाली में नोचें गये बाल और नाखून 66 – 67
11. इस एक्ट में रहे बन्द 67
12. फैसले को चुनौती 67 – 68
13. आपातकाल का असर 68 – 70
14. संघ में तेज उत्थान 70

15. आपातकाल के लिए इन्दिरा नहीं जिम्मेदार 70 – 72
16. कृषि पर कर के पक्ष में थीं इन्दिरा 72
17. भाजपा ने मनाया काला दिवस 73
18. आ गई वह काली रात – पहले घोषणा बाद में हस्ताक्षर 73 – 74
19. इन्दिरा गाँधी 74
20. जयप्रकाश नारायण ने दिया आन्दोलन को नेतृत्व 74 – 75
21. दो शीर्ष अदालतों का निर्णय 75 – 76
22. जंजीरों में जकड़े गए जॉर्ज 76
23. आपातकाल के सूत्रधार 77
24. आपातकाल के खलनायक 77 – 78
25. फैसले ने बदली राजनीतिक हवा 78 – 79
26. सम्पूर्ण क्रान्ति के नायक 79
27. क्या है आपातकाल 79 – 80
28. लोकतंत्र का काला दिन 80 – 81
29. राजनैतिक असंतोष 81
30. ऐतिहासिक फैसला 81
31. नवनिर्माण आन्दोलन 81 – 82
32. सम्पूर्ण क्रान्ति 82
33. अंग्रेजों जैसे जुल्म ढाए थे पुलिस ने 82 – 83
34. आपातकाल की मनाई वर्षगांठ – लोकतंत्र की करे रक्षा 83 – 84
35. विकीलीक्स का खुलासा–भूमिगत होकर चला रहे थे गतिविधियाँ 84 – 86
36. लोकनायक की 113वीं जयन्ती पर पी.एम. मोदी ने कहा लोकतांत्रिक ढांचे को मजबूत बनाने के लिए आपातकाल को याद रखे 86 – 88
37. आपातकाल ने सिखाया मोदी को राजनीतिक पाठ 88 – 90

38. क्या आपातकाल के सबक याद हैं? 90 – 91

39. अभी बाकी है बहुत खुलासे 91 – 93

40. इतिहास का काला पन्ना 93 – 97

संदर्भ 98 – 99

अध्याय–चतुर्थः आपातकाल में प्रेस/मीडिया की प्रेस क्लिपिंग का अध्ययन – 100–141

1. मीडिया की बेवाकी से परेशान थी इंदिरा गाँधी 100 – 102

2. प्रेस पर लागू हुआ सेंसरशिप 102 – 103

3. जो झुकने को नहीं हुए तैयार 103 – 104

4. इन्दिरा ने आपातकाल की भारी कीमत चुकाई 104

5. नई दिल्ली 104

6. दिशाहीन था जे.पी. आन्दोलन 105

7. सिद्धार्थ शंकर रॉय के कहने पर लगा था आपातकाल 105 – 106

8. आपातकाल की हिन्दी पत्रकारिता का अनुशीलन 107 – 111

9. कुलदीप नैयर वरिष्ठ पत्रकार की कहानी 111 – 116

10. सारे विपक्षी नेताओं को जेल, मीसा का कहर और डी.आई.आर. 116 – 117

11. न केस न दलील फिर भी हुई जेल 118

12. जीवन का अधिकार भी नही रहा 118 – 119

13. हजारों ख्वाहिशें ऐसी 2005 119

14. नसबन्दी 1978 120

15. किस्सा कुर्सी का 1977 120

16. आंधी 1975 121

17. आपातकाल 121 – 122

18. एक अनजान भय की चादर में सिमटे होते थे लोग 122 – 125

19. आपातकाल के लिए देश के सम्पूर्ण सत्ता प्रतिष्ठान को
माना जाना चाहिए जिम्मेदार 125 – 128
20. आपातकाल का स्मरण 128 – 130
21. आडवाणी की बेजान चिंता 130 – 133
22. भूल नहीं सकते आपातकाल 133 – 137
23. लोकतंत्र पर लगा था ग्रहण 137 – 139
संदर्भ 140 – 141
अध्याय–पंचमः आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य, राजनीतिक परिवर्तन, राजनीतिक दलों पर उसका प्रभाव, राजनीतिक चेतना और और बनती बिगड़ती राजनीतिक पार्टीयों की विवेचना 142–216
आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य –
(I) विभिन्न पार्टीयों का घोषणा पत्र
अ– जनता पार्टी का घोषणा पत्र 142 – 146
ब– कांग्रेस का घोषणा पत्र 146 – 147
स– लोकतंत्री कांग्रेस का घोषणा पत्र 147 – 149
द– भारतीय साम्यवादी दल का घोषणा पत्र 149 – 152
य– मार्क्सवादी साम्यवादी दल का घोषणा पत्र 152 – 154
र– क्षेत्रीय दलों का घोषणा पत्र 154 – 155
(II) विभिन्न पार्टीयों द्वारा प्रत्याशियों का चयन
अ– जनता पार्टी द्वारा प्रत्याशियों का चयन 155 – 156
ब– कॉंग्रेस द्वारा प्रत्याशियों का चयन 156 – 157
(III) कांग्रेस और गैर कांग्रेस की मोर्चाबन्दी
अ– गैर कांग्रेसवाद की चुनौतियां 157 – 158
ब– मोर्चा 158 – 159
स– संघर्ष 159 – 160

(IV) निर्वाचन आयोग की भूमिका

अ– आचार संहिता 160 – 164

(V) चुनाव प्रचार 164 – 169

(VI) आपातकाल के बाद मतदान

अ– विजय के परस्पर दावे 170 – 171

(VII) गैर कांग्रेसवाद की जीत

अ– उत्तरी भारत में पूर्ण पराजय 172 – 174

(VIII) कांग्रेस की पराजय के कारण 174 – 182

(IX) दक्षिणी भारत में कांग्रेस की शानदार विजय 182 – 186

2. जनता पार्टी का गठन एवं उसका प्रभाव 186 – 188

3. जनता राजनीति 188 – 189

4. जनता पार्टी के आन्तरिक मतभेद व जनता सरकार का पतन 189 – 193

5. कांग्रेस व्यवस्था का पतन एक विश्लेषण 193 – 194

6. कांग्रेस (एस) का जन्म 194

7. लोकतंत्रीय कांग्रेस (कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी) 194 – 195

8. लोकदल का निर्माण 195 –198

9. भाजपा के निर्माण की परिस्थितियाँ 198 – 199

10. भारतीय जनता पार्टी के विचार एवं दर्शन 199 – 200

11. भारतीय जनता पार्टी का सामाजिक आधार और राजनीतिक उपलब्धि 200 – 201

12. भारतीय जनता पार्टी का कार्यक्रम 201

13. दलों की आन्तरिक गुटबंदी और दल विभाजन 201 – 202

14. दल बदल के कारण 202 – 203

15. राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन का गठन 203 – 205

16. संयुक्त मोर्चा 205 – 207

17. बैठक एवं विपक्ष एकता 208 – 209

18. विपक्ष एकता, चुनाव रणनीति और सत्तारूढ़ दल को चुनौती 209 –210

19. आपातकाल के बाद कांग्रेस में विभाजन व उनसे निकले राजनीतिक दल 210

संदर्भ 211 – 216

अध्याय षष्ठः कांग्रेसवाद और गैर–कांग्रेसवाद की अवधारणा की विवेचना तथा आपातकाल के बाद राजनीतिक चेतना पर सर्वेक्षण। 217–267

1. एकदलीय प्रभुत्व व्यवस्था का प्रभाव 217 – 218
2. संयुक्त मोर्चा 218 – 219
3. राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (N.D.A.) 219 – 220
4. संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (U.P.A.) 220 – 221
5. सन् 1977 का मध्यावधि चुनाव और जनता सरकार की स्थापना 221 – 228
6. कांग्रेस–अधिपत्य की पुर्नस्थापना 1980 और 1984 के चुनाव
   - अ. कांग्रेस (अर्स) का घोषणा–पत्र 229 – 231
   - ब. जनता पार्टी का चुनाव घोषणा–पत्र 231
   - स. कांग्रेस (ई.) का घोषणा–पत्र 231 – 232
   - द. भारतीय साम्यवादी (मार्क्सवादी) दल का घोषणा–पत्र 232
   - य. भारतीय साम्यवादी दल का घोषणा–पत्र 232
   - र. अन्य दलों के चुनाव घोषणा–पत्र 232 – 233
   - ल. निर्वाचन अभियान 233 – 237
7. 1984–85 का लोकसभा चुनाव 238 – 240
8. 1989 का लोकसभा चुनाव 241 – 244
9. 1991 का लोकसभा का चुनाव 244 – 246
10. 1996 का लोकसभा का चुनाव 247 – 252
11. 1998 का लोकसभा का चुनाव 252 – 255
12. 12वीं लोकसभा का विघटन और 1999 का चुनाव 255 – 258

13. 2004 का लोकसभा का चुनाव 258 – 260

14. 2009 का लोकसभा का चुनाव 260 – 265

संदर्भ 266 – 267

अध्याय–सप्तमः मूल्यांकन, 25 जून, 1975 के आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों का मूल्यांकन 268–279

साक्षात्कार 280–287

सारांश 288–310

संदर्भ ग्रन्थ सूची 311–327

परिशिष्ट :

1. शोध–पत्र 328 – 331

2. शोध–पत्र 332 – 335

LIST OF TABLES

Table No.	Page No.
1.	225 - 226
2.	235
3.	239
4.	242
5.	245
6.	249 - 250
7.	253
8.	257
9.	259
10.	262

LIST OF FIGURES

Figure No.	Page No.
1.	68
2.	71
3.	73
4.	74
5.	74
6.	75
7.	76
8.	77
9.	77
10.	78
11.	79
12.	82
13.	84
14.	86
15.	88
16.	90
17.	93
18.	118
19.	119
20.	120
21.	120
22.	121
23.	122
24.	125

Figure No.	Page No.
25.	130
26.	133
27.	133
28.	137
29.	221
30.	228
31.	229
32.	238
33.	241
34.	241
35.	244
36.	247
37.	247
38.	248
39.	252
40.	255
41.	258
42.	260
43.	280
44.	284
45.	328
46.	329
47.	332
48.	333

Abbreviation

1.	एन. डी. ए.	:	नेशनल डेमोक्रटिक अलायन्स
2.	यू. पी. ए.	:	यूनाइटेड प्रोग्रेसिव अलायन्स
3.	डी. एम. के.	:	द्रबिड़ मुनेत्र कड़गम
4.	आई.एम.ए.डी.एम.के.	:	ऑल इण्डिया अन्ना द्रबिड़ मुनेत्र कड़गम
5.	भाजपा	:	भारतीय जनता पार्टी
6.	सपा	:	समाजवादी पार्टी
7.	मीसा (MISA)	:	मेन्टिनेन्स ऑफ इंटरनल सिक्योरिटी एक्ट
8.	डी.आई.आर.	:	डिफेंस ऑफ इण्डिया रूल्स
9.	आर.एस.एस.	:	राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ
10.	राजग	:	राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन
11.	जेपी	:	जयप्रकाश
12.	सप्रंग	:	संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन
13.	द्रमुक	:	द्रबिड़ मुनेत्र कड़गम
14.	भालोद	:	भारतीय लोकदल
15.	राजद	:	राष्ट्रीय जनता दल

अध्याय प्रथम

(अ) सामान्य परिचय

(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ और उनके निर्णय का अध्ययन

अध्याय प्रथम

(अ) सामान्य परिचय

(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ और उनके निर्णय का अध्ययन

(अ) सामान्य परिचय :–

(1) सामान्य परिचय

(2) भारतीय संविधान मे आपातकाल को लागू करने की स्थितियाँ

(3) आपातकाल के दौरान संघ की कार्यपालिका और विधायिका को असाधारण शक्तियाँ प्राप्त होना

(4) आपातकालीन उपबंधो की आलोचना

(5) आपातकाल की घोषणा

(6) उपलब्ध साहित्य की समीक्षा

(7) शोध का उद्देश्य

(8) शोध प्रविधि

(ब) भारत मे 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियां और उनके निर्णय का अध्ययनः–

(1) कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव

(2) 1967 के बाद कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव

(3) इंदिरा गाँधी का 1971 का चुनाव एवं बदलती हुई परिस्थितियाँ

(4) प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी पर भ्रष्टाचार का आरोप

(5) मीसा तथा D.I.R का प्रयोग

(6) भारत–पाक युद्ध से उत्पन्न समस्या

(7) तत्कालीन कांग्रेस सरकार द्वारा संविधान मे संशोधन

(8) विरोधी दलों के आन्दोलन एवं उनके प्रभाव

(9) आपातकाल का निर्णय एवं प्रक्रिया

(1) सामान्य परिचयः– आपातकाल का सामान्य अर्थ ऐसी परिस्थितियों से लिया जाता है कि "विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए विशेष वैधानिक प्रावधान प्रयुक्त किये जाऐं" आपातकाल के प्रावधान को जर्मनी के संविधान से लिया गया है। सविधांन के 18वें भाग में अनुच्छेद 352 से 360 तक आपातकाल का वर्णन किया गया है।[1]

आपातकाल के दौरान राजनीतिक व्यवस्था संघीय से एकात्मक हो जाती है। भारत या उसके किसी एक भाग में सशस्त्र विद्रोह हो जाये या भारत किसी युद्ध में फँस जाये तो उस समय राष्ट्रपति अनुच्छेद 352 के अर्न्तगत संकटकाल की घोषणा कर सकता है। इन्हीं प्रावधानों का सहारा लेते हुए भारत में 25 जून 1975 मे आपातकाल लागू किया गया।

(2) भारतीय संविधान में आपातकाल को लागू करने की स्थितियाँ :–

1. भारत में आपातकाल को तभी लागू किया जा सकता है जब प्रधानमंत्री और उसका मंत्रिमण्डल इसकी लिखित सूचना राष्ट्रपति को दे।[2]

2. भारत में आपातकाल की घोषणा, संसद के दोनों सदनों के मध्य रखी जाती हैं और यदि एक माह समाप्त होने के पूर्व संसद के दोनों सदनों के द्वारा अनुमोदित नहीं किया जाता है, तो वह घोषणा प्रभावी नही होगी।[3]

3. भारत में आपातकाल की घोषणा के समय यदि लोकसभा का विघटन हो जाता है तो वह घोषणा लोकसभा के पुर्नगठन की प्रथम बैठक की तारीख से 30 दिन में उसका अनुमोदन सदन के विशेष बहुमत से पारित करेगी।[4]

4. भारत में आपातकाल की घोषणा संसद द्वारा पारित होने की तिथि से 6 माह की अवधि तक प्रभावी रहेगी और 6 माह की अवधि से अधिक अवधि तक घोषणा को जारी रखने के लिए 6 माह की अवधि के दौरान दोनों सदनों द्वारा अनुमोदन आवश्यक है।[5]

5. भारत में आपातकाल की समाप्ति की घोषणा लोकसभा के कुल सदस्यों के एक बटा दस सदस्यों द्वारा लिखित में प्रस्तुत प्रस्ताव द्वारा की जाएगी और सदन में यह प्रस्ताव स्पीकर को दिया जायेगा, यदि सदन नहीं चल रहा हो तो उस पर विचार करने के लिए राष्ट्रपति या स्पीकर को 14 दिनों के अन्दर विशेष सत्र बुलाना पड़ता है।[6]

(3) आपातकाल के दौरान संघ की कार्यपालिका और विधायिका को असाधारण शक्ति प्राप्त होनाः—

i. कार्यपालिका

ii. विधायी

iii. वित्तीय

iv. मूल अधिकार

(i) कार्यपालिका :— जब आपातकाल की घोषणा की जाती है तो संघ की कार्यपालिका राज्यों को यह निर्देश दे सकती है कि वह राज्य अपनी कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग उसकी शक्ति के अनुसार करें।[7]

सामान्य समय में कार्यपालिका को किसी राज्य को निर्देश देने की शक्ति अनुच्छेद 256 एवं 257 मे विद्यमान है।[8]

आपातकाल के दौरान केन्द्र सरकार को किसी राज्य में किसी भी विषय पर निर्देश देने की शक्ति मिल जाती है। जिसके परिणाम स्वरूप राज्य सरकार निलम्बित होने पर भी संघ की कार्यपालिका के नियत्रंण में रहेगी।

(ii) विधायीः– जब आपातकाल की उद्घोषणा की जाती है तो संसद की विधायी शक्ति का विस्तार होता है और अनुच्छेद 246(3) द्वारा सूची के बारे में मर्यादा हटा दी जाती है। उद्घोषणा के कारण राज्य का विधानमंडल निलम्बित नहीं होता परन्तु संघ और राज्य के बीच, जहां तक संघ का संबंध है विधायी शक्तियों का वितरण निलम्बित हो जाता है और संघ की संसद आपातकाल का सामना करने के लिए किसी भी विषय पर विधान बना सकती है। आपातकाल के समय संसद विधि द्वारा लोकसभा की अवधि को एक बार में एक वर्ष से अधिक बढा सकती है। जो अवधि बतायी गयी है। उसकी उद्घोषणा न रहने के पश्चात् छः माह से अधिक नहीं हो सकती (अनुच्छेद–83(2)[9]

आपातकाल के दौरान संसद को यह अधिकार है कि वह किसी भी विषय पर कानून बना सकती है। चाहे वे विषय राज्य के अधिकार क्षेत्र में ही क्यों न आते हों।

(iii) वित्तीयः– आपातकाल की उदघोषणा के समय राष्ट्रपति को अपने आदेश द्वारा संघ और राज्यों के बीच वित्तीय साधनों के आवंटन पर संबंधित संविधान के उपबंधों को रूपांतरित करने की संवैधानिक शक्ति प्राप्त हो जाती है जिसका उल्लेख अनुच्छेद 268 एवं 274 में किया गया है।[10]

(iv) मूल अधिकारः– आपातकाल की उद्घोषणा का मूल अधिकारों पर प्रभाव अनुच्छेद 358 एवं 359 में बताया गया है।[11]

(1) अनुच्छेद 358 के अन्तर्गत राज्य पर अनुच्छेद 19 की मर्यादा लागू नहीं होती है। आपातकाल के दौरान अनुच्छेद 19 स्वतः समाप्त हो जायेगा। अनुच्छेद 359 के अन्तर्गत राष्ट्रपति के आदेश द्वारा इन अधिकारों का निलम्बन किया जा सकता है।

(2) युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह के दौरान आपातकाल को अनुच्छेद

359 में दर्शाया गया है। लेकिन अनुच्छेद 358 में युद्ध बाह्य, आक्रमण को दर्शाया गया है।

(3) आपातकाल की उदघोषणा के फलस्वरूप अनुच्छेद 358 प्रकट हो जाता है। और अनुच्छेद 19 स्वतः ही समाप्त हो जाता है लेकिन अनुच्छेद 359 को लागू करने के लिए राष्ट्रपति का आदेश लिया जाना आवश्यक है।

(4) अनुच्छेद 19 को अनुच्छेद 358 निलम्बित करता है। अनुच्छेद 359 के अन्तर्गत आपातकाल की घोषणा होते हुए भी अनुच्छेद 20 और 21 के अधीन किसी बंदी को न्यायालय में पहुँचने के अधिकार को छीना नहीं जा सकता है।

आपातकाल राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियों के अन्तर्गत आता है। जिसको राष्ट्रीय आपातकाल के नाम से भी जाना जाता है। इसका उल्लेख संविधान के अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत किया गया है। 44 वें संविधान संसोधन द्वारा राष्ट्रपति को आपातकाल लागू करने के लिए मंत्रिमण्डल का परामर्श आवश्यक है। प्रत्येक राज्य को संकटकाल में उसके अस्तित्व को रखने के लिए ऐसी शक्ति सम्पन्न अधिकारों का होना आवश्यक है। जिसको आपातकालीन परिस्थिति का सामना करने के लिए विशिष्ट सत्ता प्राप्त हो। संघीय देश में यह सत्ता राष्ट्रीय सरकार में निहित होती है। वस्तुतः संकटकालीन परिस्थिति का सामना करने का मुख्य उत्तरदायित्व राष्ट्र की कार्यपालिका का ही होता हैं।[12]

भारत का संविधान संघीय सरकार की स्थापना करता है। इसमें संघ के सभी आय के लक्षण विद्यमान हैं। जैसे दो सरकार, शक्तियों का विभाजन, लिखित संविधान, संविधान की सर्वोच्चता, संविधान की कठोरता, स्वतंत्र न्यायपालिका एवं द्विसदनात्मक आदि, यद्यपि भारतीय संविधान में बडी संख्या में एकात्मकता और गैर संघीय लक्षण भी विद्यमान हैं। जैसे एक सशक्त केन्द्र, एक संविधान, एकल नागरिकता, संविधान का लचीलापन, एकीकृत न्यायपालिका, केन्द्र द्वारा राज्यपाल की नियुक्ति, अखिल भारतीय सेवाऐं, आपातकालीन प्रावधान

इत्यादि। संविधान में कभी 'संघीय' शब्द का इस्तेमाल नहीं किया गया है। अनुच्छेद 1 में भारत का उल्लेख 'राज्यों का संघ' के रूप में किया गया है। इसके दो अभिप्राय हैं। पहला, भारतीय संघ राज्यों के बीच हुए किसी सहमति का परिणाम है। दूसरा, किसी भी राज्य को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं है।

भारतीय संविधान को निम्नलिखित नामों से जाना जाता है।

जैसे– एकात्मकता की भावना में संघ, अर्थ संघ (के.सी. वेरे) वारगेनिंग फेडरेलिज्म,(मोरिज जोम्स), को–ओपरेटिव फेडरेलिज्म (ग्रेनविल ऑस्टीन), फेडरेशन विद ए सेंडलाइजिंग टेंडेंसी (आइवर जेनिंग्स)[13]

संविधान तीन तरह का आपातकाल व्यवस्था निर्धारित करता है।– राष्ट्रीय, राज्य एवं वित्त। आपातकाल के दौरान केन्द्र सरकार के पास सभी शक्तियाँ आ जाती हैं। और राज्य, केन्द्र के पूर्ण नियंत्रण में आ जाते हैं। यह बिना किसी संविधान संशोधन के संघीय ढाँचे को एकल ढाँचे में बदल देता है। ऐसी व्यवस्था किसी संघ में नहीं पायी जाती है।

आपातकाल के दौरान केन्द्र राज्यों के बीच संबंध बदल जाते हैं। राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352) के अन्तर्गत राष्ट्रपति केन्द्र व राज्यों के बीच संवैधानिक राजस्व वितरण को परिवर्तित कर सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि राष्ट्रपति या तो वित्तीय अंतरण को कम कर सकता है या रोक सकता है। ऐसे परिवर्तन जिस वर्ष आपातकाल की घोषणा की गई हो उस वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक प्रभावी रहते हैं।

अमेरिका सहित सभी संघीय व्यवस्थाऐं, संघवाद के एक कड़े स्वरूप हैं। किसी भी परिस्थिति में अपना स्वरूप और आकार परिवर्तित नहीं कर सकते। लेकिन भारत का संविधान समय और परिस्थिति के अनुसार एकात्मक एवं संघीय दोनों प्रकार का हो सकता है। यह इस प्रकार निर्मित किया गया है कि सामान्यतः

यह संघीय व्यवस्था के अनुरूप कार्य करता है परन्तु आपातकाल में यह एकात्मक व्यवस्था के रूप में कार्य करता है।

(4) आपातकालीन उपबंधों की आलोचना :–

संविधान सभा के कुछ सदस्यों ने आपातकालीन उपबंधों की निम्न आधार पर आलोचना की''[14]

1. संविधान का संघीय स्वरूप नष्ट हो जायेगा तथा केन्द्र सर्व शक्तिमान बन जायेगा।

2. राज्यों की शक्तियाँ (एकल व संघीय दोनों) पूरी तरह से केन्द्रीय प्रबंधन के हाथों मे आ जायेगी।

3. राष्ट्रपति तानाशाह बन जाएगा।

4. राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता निरर्थक हो जायेगी।

5. मूल अधिकार अर्थहीन हो जाऐंगे और परिणामस्वरूप संविधान की प्रजातंत्रीय आधारशिला नष्ट हो जायेगी।

अतः एच. बी. कामथ ने मत प्रकट किया कि ''मुझे डर है कि इस एकल अध्याय द्वारा हम एक ऐसे सम्पूर्ण राज्य की नींव डाल रहे हैं जो कि एक पुलिस राज्य, एक ऐसा राज्य जो उन सभी सिद्धान्तों और आदर्शों का पूर्ण विरोध करता है। जिसके लिए हम पिछले दशकों से लडते रहे। एक राज्य जहाँ सैंकडों मासूम महिलाओं एवं पुरूषों के स्वतंत्रता के अधिकार सदैव संशय में रहेंगे। एक राज्य जहाँ कहीं शान्ति होगी जो कब्र में होगी और शून्य अथवा रेगिस्तान में होगी यह शर्म और दुःख का दिन होगा। जब राष्ट्रपति इन शक्तियों का प्रयोग करेगा जिनका विश्व के किसी भी लोकतांत्रिक देश के संविधान से कोई साम्य नहीं होगा–[15]

के.टी. शाह ने इनकी व्याख्या इस प्रकार दी है कि '' प्रतिक्रिया और पतन का एक अध्याय मैंने पाया जो किसी ने नहीं कहा परन्तु दो विभिन्न धाराएं इस अध्याय के संपूर्ण उपबंधों की रेखांकित एवं प्रभावित करती है (1) केन्द्र की इकाइयों के विरूद्ध विशिष्ट शक्ति से सुसज्जित करना और (2) सरकार को इन लोगों के विरूद्ध सशक्त करना जो विशेषतः इस अध्याय के लगभग सभी अनुच्छेदों में दिए गए सभी उपबंधों का अध्ययन और शक्तियों का मुख्य नियंत्रण करते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि स्वतंत्रता और लोकतंत्र का नाम केवल संविधान में ही रह जायेगा।''

टी.टी. कृष्णमाचारी ने भय प्रकट किया कि–'' इन उपबंधों के द्वारा राष्ट्रपति एवं कार्यकारी, संवैधानिक तानाशाही का प्रयोग करेंगे।''[16]

एच.एन. कुंजरू ने कहा– '' वित्तीय आपातकाल के उपबंध राज्य की वित्तीय स्वायत्ता के लिए एक गंम्भीर खतरा उत्पन्न करते हैं।" हालांकि संविधान सभा में इन उपबंधों के समर्थक भी थे। अतः सरअलादि कृष्णास्वामी अय्यर ने इन्हें 'संविधान की जीवन साथी बताया' महावीर त्यागी ने विचार व्यक्त किया कि यह 'सुरक्षा वाल्व' की तरह कार्य करेंगे और संविधान की रक्षा करने में सहायता करेगा–[17]

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने भी संविधान सभा में आपातकालीन प्रावधानों के बचाव में उनके दुरूपयोग की संभावनाओं को व्यक्त किया और उन्होंने कहा '' मैं पूर्ण रूप से इनकार नहीं करता कि इन अनुच्छेदों का दुरूपयोग अथवा राजनैतिक उद्देश्य के लिए इनके प्रयोग की संभावना है।[18]

(5) आपातकाल की घोषणा– भारत में अब तक तीन बार राष्ट्रीय आपातकाल लगाया गया है। पहला आपातकाल 1962 में लगाया गया। 1962 में भारत पर चीन के आक्रमण के कारण पहला आपातकाल लगा था। दूसरा आपातकाल 1971 में भारत पर पाकिस्तान के आक्रमण की स्थिति में लगाया गया था। 1962 में

नेफा तथा लद्दाख क्षेत्र में आक्रमण के कारण संकटकालीन की स्थिति विद्यमान थी। 8 नवम्बर 1962 को व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए न्यायालय की शरण लेने के अधिकार को स्थगित कर दिया गया और 14 नवम्बर 1962 को अनुच्छेद 14 भी स्थगित कर दिया गया। 26 अक्टूबर 1962 को ''भारत प्रतिरक्षा अध्यादेश' भी जारी किया गया। भारत प्रतिरक्षा सेवा नियम, नागरिक प्रतिरक्ष सेवा नियम, भारत प्रतिरक्षा (सम्पत्ति अर्जन एवं अधिकरण) नियम आदि इस अधिनियम के आधार पर बनाए गए। 1962 में जारी की गई यह संकटकालीन घोषणा 1968 तक जारी रही–[19]

– 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया इस आक्रमण का सामना करने के लिए हमारे स्वर्गीय प्रधानमंत्री ने अनेक तैयारियां की–[20]

– 22 अक्टूबर 1962 ई. की रात्रि को आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र से भारत की सीमा पर चीनी हमले के कारण उत्पन्न परिस्थिति के संबंध में राष्ट्र के नाम संदेश प्रसारित करते हुए कहा '' दुश्मन के हमले के सामने हम अपना सिर कभी झुका नहीं सकते चाहे उसका नतीजा कुछ भी हो''[21]

– अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत आपातकाल दूसरी बार 1971 में लागू किया गया था 3 दिसम्बर 1971 को पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। उस समय भारत के राष्ट्रपति ने संकटकालीन स्थिति की घोषणा कर दी। भारत सरकार ने विदेशी गुप्तचरों तथा राष्ट्र विरोधी गतिविधियों का सामना करने के लिए बहुत सी असाधारण शक्तियां ग्रहण कर ली। भारत–पाक युद्ध 14 दिन में समाप्त हो गया था और पाकिस्तान बुरी तरह परास्त हो गया। यह संकटकालीन स्थिति 21 मार्च 1977 तक जारी रही और 27 मार्च 1977 को समाप्त हुई।

– अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत आपातकाल 25 जून 1975 को लागू किया था जो कि 21 मार्च 1977 तक रहा। यह आपातकाल अन्य दो आपातकाल से भिन्न

था 1962 एवं 1971 का आपातकाल बाह्रय आक्रमण के कारण लगा था। लेकिन तीसरी बार आपातकाल आन्तरिक कारणों से लगा था। 1975 के आपातकाल में संकटकालीन शक्तियों का दुरूपयोग किया गया था।[22]

– 25 जून 1975 को तत्कालीन राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने आंतरिक संकटकालीन स्थिति की घोषणा कर दी । उसके पश्चात् स्वतंत्रता संबंधी मौलिक अधिकार निलम्बित कर दिये गये। 18 जनवरी 1977 को प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने छठी लोकसभा के चुनावों की घोषणा कर दी।

इस उदघोषणा से संबन्धित प्रेस विज्ञप्ति में ''आन्तरिक अशान्ति'' बताते हुए कहा था कि कुछ व्यक्ति पुलिस और सशस्त्र बलों को अपने कर्तव्यों के निर्वहन और सामान्य कार्यकारण के विरूद्ध उत्प्रेरित कर रहे हैं।[23]

आपातकाल के दुरूपयोग को रोकने के लिए संविधान में 44 वां संशोधन हुआ जिसमें –

– 1978 एवं 1979 में अनुच्छेद 352 के उपबंधों को ओर कठोर बना दिया गया। यह अधिनियम 20 जून 1979 में लागू हुआ आंतरिक अव्यवस्था के आधार पर।

– 25 जून 1975 को घोषित आपातकाल को रोकने के कटु अनुभव के बाद ऐसा करना पडा कि आपात उपबंधों को रोकने के लिए 'आंतरिक अव्यवस्था' के स्थान पर 'सशस्त्र विद्रोह' शब्द रखे गये।

– 1975 से 1977 तक जो आंतरिक आपातकालीन स्थिति चली उसके दौरान किए गये संशोधनों में सबसे अधिक व्यापक संशोधन 42 वां था। इसने संविधान के अनेक अनुच्छेद में परिवर्तन किए जैसे संविधान की उद्देशिका, सातवीं अनुसूची तथा अनु0 31, ,32क, 39क, 43क, 48क, 51क, 55, 74, 81, 82, 83, 103, 131क, 139क, 144, 145, 150, 166, 170, 172, 192, 217,

225–228क, 257क, 311, 312, 323क, 323ख, 330, 352, 353, 356–359, 366, 368 और 371च

इन संशोधनों के द्वारा यह प्रयास किया गया कि संसद और राज्य विधान मंडलों द्वारा बनाई गई विधियों की संवैधानिकता का निर्णय करने के लिए न्यायाधीशों की न्यूनतम संख्या निर्धारित की जाये और किसी कानून को अवैध घोषित करने के लिए कम से कम दो तिहाई बहुमत आवश्यक माना जाए।[24]

25 जून 1975 में भारत में आपातकाल लागू किया गया जो कि तात्कालिक कांग्रेस सरकार द्वारा लागू किया गया था आपातकाल में अनेक समस्याओं का सामना करना पडा। भारत में 1975 के आपातकाल का अध्ययन कर आपातकाल के नायकों, गणमान्य नागरिकों एवं आम नागरिकों से अलग प्रश्नावली भरवाकर अध्ययन किया गया है।

(6) उपलब्ध साहित्य की समीक्षा :–

25 जून, 1975 को भारत में आपातकाल घोषित किया गया और मीसा के अन्तर्गत सभी गैर–कांग्रेसी पार्टियों के नेताओं को जेल में डाल दिया गया और आम जनता पर मनमाने अत्याचार किये गये। सन 1977 में आपातकाल को समाप्त कर दिया गया जिस पर कुछ साहित्य निम्न प्रकार हैं :–

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने 'भारतीय कांग्रेस का इतिहास' 1986 में कांग्रेस की स्थापना से लेकर राजीव गाँधी सरकार तक का विवेचन किया गया है एवं 25 जून 1975 के आपातकाल से पहले 10 सूत्री कार्यक्रम एवं इसके बाद के 20 सूत्री कार्यक्रमों की चर्चा की गयी है। कांग्रेस की पराजय और उसका विभाजन एवं सत्ता में पुनः प्रवेश को दर्शाया गया है।

धर्मचन्द जैन ने 'भारतीय राजनीति' 1990 में इन्दिरा गाँधी के शासनकाल से लेकर राजीव गाँधी के शासनकाल तक का वर्णन किया है जिसमें आपातकाल के बाद कांग्रेस सरकार की हार व उसके बाद गैर कांग्रेस सरकार की स्थापना, पुनः

कांग्रेस सरकार की कार्यविधि का वर्णन किया गया है।

डॉ. एम.पी. रॉय ने 'भारतीय सरकार एवं राजनीति' 1977 में आपातकाल के बाद चुनावी राजनीति एवं कार्यक्रमों एवं कांग्रेस की पराजय तथा जनता पार्टी के विजय के कारणों पर चर्चा की गयी है। इन्दिरा कांग्रेस की विजय और जनता पार्टी तथा लोकदल आदि के पराजय के कारणों पर चर्चा की गयी है।

ए.एस. नारंग ने 'भारतीय शासन एवं राजनीति' 1988 में आपातकाल के बाद गैर कांग्रेसी सरकार जिसमें जनता पार्टी का जन्म, जनता पार्टी कार्यक्रमों व उसके बाद भारतीय जनता पार्टी तथा अनेक पार्टीयों के उदय के कारणों पर चर्चा की गयी है।

प्रो. जी.एस. पाण्डेय ने 'भारत का संविधान' 2007 में आपातकाल के औचित्य की समीक्षा की गयी है।

डॉ. डी.डी. बसु ने 'भारत का संविधान' 2012 में 42वें एवं 44वें संविधान संशोधनों पर विस्तृत चर्चा की गयी है एवं अनुच्छेद 352 एवं अनुच्छेद 356 में तुलना की गयी है।

प्रो. एस.एम. सईद ने 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था', 2009 में आपातकाल की कटू आलोचना की गयी है एवं आपातकालीन शक्तियों का मूल्यांकन किया गया है और राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा के प्रभावों को दर्शाया गया है।

आर.सी. अग्रवाल ने 'भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन', 2000 में 25 जून 1975 के आपातकाल की घोषणा, कांग्रेस की नीतियों एवं कार्यक्रमों को बताया गया है। 6वीं लोकसभा चुनावों में कांग्रेस की असफलता एवं जनता पार्टी की जीत के कारणों, कांग्रेस में फूट (1978), कांग्रेस (इन्दिरा) की स्थापना की विवेचना की गयी है। नेशनल फ्रन्ट की सफलता एवं विफलता का वर्णन करते हुए भारतीय जनता पार्टी के उदय के कारणों को बताया गया है।

सुशीला कौशिक ने 'भारतीय शासन एवं राजनीति', 1990 में इन्दिरा गाँधी के कार्यकाल, जनता पार्टी का शासन, इन्दिरा गाँधी के प्रधानमंत्री का दूसरा चरण

एवं राजीव गाँधी के कार्यकाल को संक्षेप में वर्णन किया गया।

राजस्थान पत्रिका 25 जून 2011 पृष्ठ संख्या 10 में लेखक इन्दर मल्होत्रा ने आपातकाल के संबंध में एक पहलू प्रकाशित किया जो निम्न है :–

राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने 25 जून 1975 को आन्तरिक आपातकाल की सिफारिश पर दस्तखत किये थे और भारत में आपातकाल लगा जो 21 माह तक रहा।

दैनिक जागरण 25 जून 2011 पृष्ठ संख्या 8 में लेखक ए. सूर्यप्रकाश ने आपातकाल के संबंध में एक लेख प्रकाशित किया जो निम्न है :–

आपातकाल को कांग्रेस के लोकतंत्र विरोधी दृष्टिकोण के प्रमाण के रूप में याद कर रहे हैं। कांग्रेस इस धारणा पर चल रही है कि नेहरू–गाँधी परिवार के सदस्यों के सरकारी कामकाज में दखल देने के लिए किसी औपचारिक पद की आवश्यकता नहीं है। कांग्रेस के रवैया में कोई परिवर्तन नहीं आया है इसलिए अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है।

पूर्व साहित्य समीक्षा एवं पूर्व शोध समीक्षा के आलोक में मैने यह प्रयास किया है कि पूर्व के अनुभवों और अनुसंधानों की ठोस पृष्ठभूमि पर तथ्य और सत्य जुटाकर 25 जून 1975 के आपातकाल और उसके बाद से होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों तक सीमित न रहे बल्कि भावी भारत में लोकतंत्रात्मक, संसदनात्मक शासन व्यवस्था को सुदृढ़ करने, सामाजिक विकास की भागीदारी की दिशा भी तय करें, प्रत्येक शोध का अपना एक प्रयास होता है और बौद्धिक जगत में पहचान के लिए संबल बने, उन्हें दिशा–निर्देश दे व प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण व आपातकाल से होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों को उजागर किया जा सके। प्रस्तुत शोध अध्ययन में आपातकाल से उत्पन्न राजनीतिक परिवर्तनों के सैद्धान्तिक, व्यवहारिक, प्रक्रियात्मक आदि विभिन्न पक्षों को समुचित रूप से उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है।

7– शोध का उद्देश्य :–

प्रस्तुत शोध 'भारत में आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों

की विवेचना (1975 – 2012)' अपनी प्रकृति में विश्लेषणात्मक एवं उद्‌देश्य परक अध्ययन है। इस शोध अध्ययन का मुख्य उद्‌देश्य यह जानना है कि सन 1975 में आपातकाल क्यों लगाया गया? और उसके बाद राजनीति में क्या परिवर्तन आये ? राष्ट्रीय स्तर पर आपातकाल लागू करने की क्या परिस्थितियाँ थीं ? आपातकाल के दौरान संघीय शासन व्यवस्था को सुदृढ़ करने, स्वच्छ एवं संकल्पनात्मक सुशासन किस प्रकार प्रभावी सिद्ध हुए हैं। आपातकाल की पुनरावृति को रोकने में इनका क्या योगदान रहा? आपातकाल के दौरान विभिन्न राजनीतिक दलों के अस्तित्व, संगठन एवं महत्व के लिए राजनीतिक दलों के सामने एक चुनौती थी और राजनीतिक दलों के लिए इन प्रश्नों से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने में राजनीतिक दलों में क्या बदलाव परिलक्षित होता है। आपातकाल में देश का राजनैतिक परिदृश्य क्या हो जाता है ? क्या आपातकाल का प्रयोग तात्कालीन कांग्रेस सरकार के समक्ष एक मात्र विकल्प था ? इसे टाला जा सकता था ? आपातकाल के बाद आम चुनाव हुए, जनता पार्टी की सरकार सत्ता में आयी कुछ महीनों के बाद जनता पार्टी की सरकार ने बहुमत खो दिया व जनता पार्टी का विभाजन हो गया।

जनता पार्टी ने बहुमत क्यों खो दिया? भाजपा का निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ व कांग्रेस की कांग्रेस (आई) हो गयी। यह क्यों हुआ बाद में जनता दल, कांग्रेस तिवारी, राष्ट्रवादी कांग्रेस, यूनाइटेड और राष्ट्रीय ध्रुवीरकण के रूप में एन.डी. ए. (नेशनल डमोक्रेकटव अलाइन्स) और यूपीए (यूनाइटेड प्रोग्रेशिव अलाइन्स) बने ? इनके अलावा और भी पार्टियाँ बनीं और बिगड़ी उन सभी का इस शोध प्रबन्ध में विचारधारा और कार्यक्रम के आलोक में शोध करने का प्रयास किया गया है।

8– शोध प्रविधि :–

शोध की पद्धति विश्लेषणात्मक एवं विवेचनात्मक है साथ ही आपातकाल के नायकों (उपलब्ध) का साक्षात्कार लिया गया है। आपातकाल के दौरान 20 सूत्री कार्यक्रमों की प्रश्नावली बनवाकर आम जनता की उस पर राय/ प्रतिक्रिया जानी गयी है। तत्पश्चात् विवेचना एवं विश्लेषण का प्रयास किया गया है। इस शोध कार्य

को पूर्ण करने के लिए प्राथमिक आँकड़े और द्वितीय आँकड़े एकत्रित किये गये हैं। निम्नलिखित बिन्दुओं की सहायता से द्वितीय आँकड़े एकत्रित किये गये हैं।:–

1. आपातकाल से सम्बन्धित विभिन्न साहित्य।

2. आपातकाल से सम्बन्धित विभिन्न शोधकार्य।

3. पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले आपातकाल से सम्बन्धित लेख।

प्रस्तावित शोध में पुस्तकालय विधि के साथ–साथ साक्षात्कार विधि को अपनाया गया है। जिसमें प्रश्नावली के माध्यम से तथ्यों को संग्रहण किया गया है। आँकड़े इकट्ठा करना, मूल्यांकन एवं परिवेक्षण को भी अपनाया गया है। इस अध्ययन का केन्द्र बिन्दु 1975 का आपातकाल है। इस आपातकाल के विशेष संदर्भ में भारत की राजनीति में आपातकाल से होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन किया गया है।

(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थियाँ और निर्णय का अध्ययन :–

1975 में आपातकाल लगाया गया यह तात्कालीन कांग्रेस सरकार द्वारा लगाया गया था। जो कि गैर–कांग्रेसी राजनीतिक दलों को दबाने के लिए भारत में पहली बार आन्तरिक स्थिति के आधार पर 25 जून 1975 में आपातकाल का प्रयोग किया गया, हालांकि कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव की स्थिति 1967 से आरम्भ हो गई थी। स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर 1967 तक केन्द्र तथा सभी राज्यों में कांग्रेस सरकारों का प्रभुत्व था, लेकिन 1967 के चुनाव में पहली बार आठ राज्यों में गैर–कांग्रेसी सरकारों की स्थापना से विवाद उत्पन्न हो गया।

(1) कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव :–

संविधान लागू होने से चतुर्थ आम चुनाव तक भारत में केन्द्र और

राज्य सरकारों के मध्य संबंध सहयोग एवं सदभावना पर आधारित थे। जिसका सबसे बडा कारण यह था कि केन्द्र तथा लगभग सभी राज्यों में कांग्रेस दल का प्रभुत्व था, लेकिन 1967 के पूर्व कुछ मामलों में विरोध उत्पन्न हुआ था लेकिन यह विरोध अन्तर्दलीय था और उन्हें पारिवारिक झगडों से ज्यादा महत्व नहीं दिया जा सकता है। ऐसे अवसरों पर दल के हाई कमान या प्रधानमंत्री के हस्तक्षेप द्वारा इन झगडों का निपटारा होता रहा।

सी.एस. पंडित ने कहा कि '' गत चौबीस वर्षों में जब व्यावहारिक रूप से लगभग सभी राज्यों में कांग्रेस दल के हाथों में सत्ता रही' केन्द्र सरकार ने एक पितृसत्ता के रूप में विकसित होकर अधीनस्थ इकाईयों को अपने दल के मुख्यमंत्रियों के माध्यम से नियंत्रित किया। इस बीच जो टकराव उत्पन्न हुए उनकों दल के अन्दर ही हल कर लिया गया।''[25]

1967 के आम चुनाव के पश्चात् भारत में कांग्रेस दल के प्रभुत्व का अन्त हो गया और आठ राज्यों में गैर–कांग्रेसी सरकारों की स्थापना हुई। इस राजनीतिक परिवर्तन के कारण राज्यों की गैर–कांग्रेसी सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार के बीच टकराव आरम्भ हो गया। जिसका एक कारण कांग्रेस दल के विरूद्ध राज्यों में विरोधी दलों में पायी जाने वाली द्वेष भावना भी थी। इसलिए लगभग सभी गैर–कांग्रेसी सरकारों वाले राज्यों की ओर से केन्द्र के बढते नियंत्रण के खिलाफ आवाज उठायी गयी और यह मांग की गयी कि राज्यों को अधिक से अधिक स्वायत्तता मिलनी चाहिए और केन्द्र–राज्य संबंधों को नए सिरे से निरूपित किया जाना चाहिए। केन्द्र के विरूद्ध स्वायत्तता की मांग एक और बंगाल की संयुक्त मोर्चा सरकार की ओर से उठाई गई और दूसरी ओर तमिलनाडु मे डी.एम. के सरकार ने आन्दोलन किया। अप्रैल 1970 में तमिलनाडू के मुख्यमंत्री करूणानिधि ने यह भी नारा दिया '' सेल्फ रूल इन दि स्टेट्स एण्ड कम्पोजिट रूल ऐट दि सेंटर''[26]

मुख्यमंत्री करूणानिधि ने यही नारा दिया– ''भारत'' भारत वालों के लिए और तमिलनाडू , तमिल लोगों के लिए''[27]

(2) 1967 के बाद कांग्रेस तथा विरोधी दलों के मध्य टकराव–

(i) संस्थागत कारणः–

भारतीय संविधान का वास्तविक स्वरूप 1967 के पश्चात् सामने आता है। जब देश के कुछ राज्यों में गैर–कांग्रेसी सरकारों की स्थापना हुई। इन सरकारों द्वारा संविधान के विभिन्न उपबंधों के आधार पर केन्द्र सरकार से अधिक अधिकारों की मांग की गयी। विभिन्न राजनैतिक संस्थाओं और राजनीतिक पदों के लिए तथा शक्तियों के विषय में प्रश्न उठाये गये जो कि 1967 से पहले कभी सामने नहीं आये थे। सत्ता में गम्भीर विवाद राज्यपाल की शक्तियों तथा स्थिति के संबंध में उठाया गया। विरोधी दलों ने यह आरोप लगाया कि केन्द्र सरकार राज्यपाल से गैर–कांग्रेसी सरकारों को अपदस्थ कराने का कार्य लेती रही है। राज्यपाल के संबन्ध में पहले राजस्थान का विवाद उत्पन्न हुआ। जिसका कारण 1967 के आम चुनाव में राजस्थान विधान सभा में किसी भी राजनीतिक दल को पूर्ण बहुमत नहीं मिल सका और विभिन्न विरोधी दलों ने एक संयुक्त मोर्चे के रूप में संगठित होकर राज्यपाल से उन्हें सरकार बनाने को अवसर देने की मांग की गयी जिसे राजस्थान के तात्कालिक राज्यपाल सम्पूर्णानन्द ने अस्वीकार कर दिया। उन्होंने कांग्रेस दल के नेता मोहनलाल सुखाडिया को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया। राज्यपाल की ओर से यह तर्क दिया कि विधानसभा में कांग्रेस सबसे बडा राजनीतिक दल था। इसलिए सरकार बनाने का अवसर पहले उसे दिया जाना चाहिए। राज्यपाल का यह निर्णय अन्यायपूर्ण था। विपक्षी दलों के सदस्यों ने राष्ट्रपति के समक्ष उपस्थित होकर यह सिद्ध कर दिया कि उनका यह संयुक्त संगठन वास्तव में बहुमत में था और राज्यपाल ने उसे सरकार बनाने का अवसर न देकर राजनीतिक पक्षपात का परिचय दिया है। राज्यपाल पर दलीय हितों को

बढावा देने का आरोप उन सभी राज्यों ने लगाया जहाँ गैर–कांग्रेसी मंत्रिमण्डल की स्थापना हुई थी। जिनमें पंश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा में राज्यपाल के पक्षपातपूर्ण रवैये के प्रति घोर असंतोष प्रकट किया और कहा गया कि केन्द्र सरकार का प्रतिनिधि होने के नाते राज्यपाल गैर–कांग्रेसी सरकारों को असफल बनाने और गिराने के अभियान में सक्रिय भाग ले रही है। 1967 में पंश्चिम बंगाल में राज्यपाल के संबंध में सबसे बडा विवाद उत्पन्न हुआ जो राज्यपाल धर्मवीर ने अपनी संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग करके अक्षय मुखर्जी के मंत्रिमण्डल को विघटित कर दिया। राज्यपाल के इस कार्य के विरूद्ध यह तर्क दिया गया कि एक संवैधानिक प्रधान होने के नाते राज्यपाल को किसी भी मंत्रिमण्डल को सदन में पराजित हुए बिना विघटित करने का अधिकार नहीं हैं।[28]

उत्तर प्रदेश तथा पंजाब में भी विधान सभा में बहुमत निर्धारण के संबंध में राज्यपाल द्वारा अपनाए जाने वाले तरीकों पर आवाज उठाई गई जिन राज्यों में विधान सभा का विघटन किया गया, उनमें विरोधी दलों ने राज्यपाल के विरूद्ध यह आरोप लगाया कि उन्होंने गैर–कांग्रेसी दलों को सरकार बनाने के लिए आंमत्रित किए बिना विधान सभा को भंग कराने की सूचना केन्द्र सरकार को भेजी। विभिन्न राज्यों में राज्यपालों ने एक ही प्रकरण की परिस्थितियों में भिन्न–2 तरीकों को अपनाया और अनुच्छेद 356 का प्रयोग बडी उदारता के साथ किया गया। 19 अगस्त 1969 को तमिलनाडु के तत्कालीन मुख्यमंत्री करूणनिधि ने विधानसभा में तीन सदस्यों की एक समिति के गठन की घोषणा की। इस समिति के सभापति डा.पी.बी. राजमन्नार तथा सदस्य डा.ए.एल मुदालियर तथा टी.पी.चन्द्र रेड्डी थे। इस समिति के निर्माण का मुख्य उद्देश्य संविधान में ऐसे संशोधन करने का सुझाव देना था जिसमें राज्य को समुचित स्वायत्तता देने के लिए आवश्यक हो। इस समिति ने कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए, जिन पर केन्द्र

सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया।[29]

(ii) कार्यात्मक कारण :– केन्द्र तथा राज्यों के बीच विरोध का दूसरा विषय व्यवस्था का प्रश्न था।19 सितम्बर 1968 को पूरे देश में केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों ने हडताल कर दी जिसमें कुछ स्थानों पर गंभीर स्थिति उत्पन्न हो गयी। हडताल के दौरान राष्ट्रपति ने एक अध्यादेश जारी किया –

''एसेंशियल सर्विस मेंटेनेस ऑडिनेंस''

इस अध्यादेश का उद्देश्य सरकारी कर्मचारियों की हडताल को अवैधानिक घोषित करना था लेकिन केरल सरकार ने इस अध्यादेश के उपबंधों को मानने से इंकार कर दिया। और उसने यह कहा कि उसका उत्तरदायित्व इतना ही है कि केन्द्रीय कार्यालयों की रक्षा करें और यह देखें कि इन कार्यालयों में प्रवेश में कोई बाधा तो नहीं है। केन्द्र सरकार ने यह भी कहा कि हडताल के लिऐ उकसाने वाले व्यक्तियों को दंडित करें लेकिन केरल सरकार ने यह तर्क दिया कि केन्द्रीय कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों में प्रवेश करना राज्य सरकार के क्षेत्राधिकार से बाहर है।[30]

1968 में गृहमंत्री बाई.बी. चाव्हण ने केरल सरकार की पूर्व अनुमति के बिना सी.आर.पी.एफ की एक बटालियन केरल में स्थित केन्द्र सरकार के कार्यालयों की रक्षा करने के लिए भिजवा दी मुख्यमंत्री नंबूदरीपाद ने केन्द्र सरकार को इस कार्यवाही के विरूद्ध रोष प्रकट किया और 18 दिसम्बर 1968 को वहाँ के मंत्रिमण्डल ने न्यायालय की अनुमति से केन्द्रीय कर्मचारियों के विरूद्ध सारे मुकदमा वापस ले लिये। केन्द्र सरकार ने इस निर्णय का रोष प्रकट करते हुए राज्य सरकार को चेतावनी दी उसका कार्य अवैधानिक है। केन्द्र सरकार ने यह तर्क दिया कि संविधान में ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है कि किसी राज्य में सशस्त्र पुलिस को भेजने के लिए संबन्धित राज्य की अनुमति ली जाए। परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार केन्द्र सरकार के स्वविवेक पर निर्भर करता है। कब किस स्थान

पर सी.आर.पी.एफ. भेजे[31]

पंश्चिम बंगाल में जब दुर्गापुर तथा काशीपुर में फैली हुई अशान्ति तथा अव्यवस्था पर नियंत्रण पाने के लिए केन्द्र सरकार ने सी.आर.पी.एफ भेजी तो बंगाल सरकार ने इसका विरोध किया और यह मांग की केन्द्र सरकार सी. आर.पी.एफ को तुरन्त वापिस बुला ले और काशीपुर गन तथा शैल फैक्ट्री में हुए गोलीकाण्ड की जाँच कराने का आश्वासन केन्द्र सरकार ने दिया तो वहाँ की सरकार ने केन्द्र सरकार द्वारा की जाने वाली जाँच में सहयोग देने से इंकार कर दिया।[32]

बिहार के भूतपूर्व मुख्यमंत्री महामाया प्रसाद सिन्हा ने केन्द्र की लापरवाही से तंग आकर एक बार केन्द्र सरकार से यह अपील की इस राज्य में अकाल की स्थिति का सामना करने के लिए उनकी मदद करें।[33]

उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री सी चन्द्रभानू गुप्ता और श्रीमती सुचेता कृपलानी ने भी यह शिकायत की कि केन्द्र सरकार उनके प्रदेश में बढती हुई निर्धनता और भुखमरी की ओर से लापरवाह रही है। कुछ राज्यों में राजनीतिक कारणों से केन्द्र सरकार असीमित रूप से धन दे रही है।[34]

(3) आर्थिक कारणः– केन्द्र 1967 के बाद केन्द्र और राज्य सरकारों में विवाद का कारण आर्थिक दशा का खराब होना भी था केन्द्र सरकार द्वारा गैर–कांग्रेसी सरकार को समुचित सहायता न दिया जाना भी था। केरल सरकार ने यह शिकायत की केन्द्र सरकार उसे समुचित मात्रा में धन नहीं दे रही है। और कहा कि यदि केन्द्र सरकार अपने वायदों को पूरा नहीं करेगी तो वह चीन से धन का प्रबंध करेगी। कर्नाटक के भूतपूर्व मुख्यमंत्री वीरेन्द्र पाटिल ने एक बार यह शिकायत की कि केन्द्र सरकार, गैर–कांग्रेसी सरकारों के सभी मुख्यमंत्रियों के साथ असमानता का व्यवहार करती है। और अपनी नीतियों आदि से उन्हें पूर्णतया से अवगत नहीं कराती उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि केन्द्र सरकार

के मंत्री जब उस राज्य में आते हैं तो विधानसभा के सदस्यों को दल–बदल कर कांग्रेस में शामिल हो जाने का प्रोत्साहन देते हैं।[35]

(3)इन्दिरा गाँधी का 1971 का चुनाव एवं बदलती हुई परिस्थितियाँः–

1971 से 1977 तक का काल एकात्मक संघवाद का युग कहा जाता है। 1971 के चुनाव में इन्दिरा गाँधी के नेतृत्व में पूरे देश में कांग्रेस पार्टी का राजनैतिक एकाधिकार स्थापित हो गया। इन्दिरा गाँधी ने चुनाव में न केवल विपक्षी दलों को पराजित किया वरन् कांग्रेस के अन्दर से उभरती हुई नई पार्टी (कांग्रेस संगठन) को भी बुरी तरह हराया। इन्दिरा गाँधी एक सशक्त नेता के रूप में उभरी जिनका पार्टी संगठन और सरकार दोनों पर वर्चस्व स्थापित हो गया। उन्होंने देश की राजनीतिक, और आर्थिक व्यवस्था में अमूल परिवर्तन करना चाहा जिसके लिए 42 वें संविधान संशोधन के रूप में एक लघु–संविधान बनाया गया। न्यायपालिका की शक्तियों में कटौती की गई। राज्य सरकारों का इच्छानुसार गठन और पुर्नगठन किया गया और पूरी 'संसदीय व्यवस्था' व्यवहार में 'प्रधानमंत्रीय व्यवस्था'' में परिवर्तित हो गई। अपने विरोधियों को दबाने के लिए इन्दिरा गाँधी ने देश में आपातकाल की उदघोषणा करा दी। इस राजनैतिक वातावरण में डरे और सहमें हुए राज्य केन्द्र से कोई टकराव लेने की स्थिति में नहीं रहे। संघीय शासन व्यवस्था एकात्मक सरकार में परिवर्तित हो गई।[36]

1971 के चुनाव में कांग्रेस को मिलने वाली भारी सफलता ने इन्दिरा गाँधी को अत्यधिक प्रभावपूर्ण स्थिति मे पहुँचा दिया था। इन परिस्थितियों में नये राष्ट्रपति का निर्वाचन पूर्ण रूप से इन्दिरा गाँधी की इच्छा पर निर्भर करता था। और उन्होंने अपने मंत्रिमंडल के एक सदस्य फखरूद्दीन अली अहमद को भारी बहुमत से निर्वाचित कराया लेकिन अपना कार्यकाल पूर्ण करने से पहले ही फरवरी 1977 में फखरूद्दीन अली अहमद की आकस्मिक मृत्यु हो गयी। फखरूद्दीन अली अहमद, इन्दिरा गाँधी के अत्यधिक विश्वास पात्र थे। अतः उन्होंने सदैव इन्दिरा

गाँधी की इच्छानुसार कार्य किया। 1975 में की गई राष्ट्रीय आपातकाल की उद्‌घोषणा के पक्ष में नहीं थे किन्तु इन्दिरा गाँधी की इच्छा का अनादर न कर सके।

मुख्यमंत्रियों की नियुक्तिः—

1972 में राज्य विधानसभा के चुनाव के पश्चात् कुछ राज्यों में कांग्रेस विधायक दल ने स्वयं अपना नेता चुनने के बजाय एक प्रस्ताव के द्वारा प्रधानमंत्री को यह अधिकार दे दिया कि वह चाहे जिसे दल का नेता मनोनीत कर दे।

1972 के चुनाव के पश्चात बिहार और गुजरात विधानसभाओं ने और 1973 में आन्ध्रप्रदेश विधानसभा के सदस्यों ने इस प्रकार का प्रस्ताव पारित करके प्रधानमंत्री को दल का नेता चुनने का अधिकार दिया था। 1971 के बाद राज्यों में बनने वाली कांग्रेसी सरकारों के लिए मुख्यमंत्री की नियुक्ति और विमुक्ति प्रधानमंत्री की इच्छानुसार होती रही इस प्रकार प्रधानमंत्री का नियंत्रण राज्य सरकारों पर बहुत बढ गया। 1971 के बाद केन्द्रीय मंत्रिमंडल इन्दिरा गाँधी की इच्छा का विषय बन गया। प्रधानमंत्री के प्रभाव के कारण मंत्रिमण्डल के सदस्यों के लिए उनकी इच्छाओं का अनादर करना आसान बात नहीं थी। 1971 के चुनाव के बाद से सत्ता के केन्द्रीयकरण और अधिनायकबाद की जो प्रवृतियाँ विकसित हो रही थीं 1975 में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी। 1971 में 25 वें संविधान संशोधन द्वारा अनु0 31(2) में '' मुआवजा'' शब्द हटाकर '' राशि'' शब्द जोड़ दिया गया इसी प्रकार 25 वें संशोधन द्वार भूमि सीमाकरण के लिए राज्य भूमि अधिकृत कर सकता है। तथा उसका मुआवजा व्यवस्थापिका निश्चित कर सकती है। न्यायालय को मुआवजा की धनराशि पर विचार करने का अधिकार नहीं होगा।[37]

1971 के चुनाव ने यह स्पष्ट कर दिया कि इन्दिरा गाँधी प्रधानमंत्री पद पर अधिकार रखती है। निसन्देह शक्ति के विस्तार के लिए इन्दिरा गाँधी की

राजनीतिक चतुराई ही काफी नहीं थी। इसमें अनेक तत्वों ने भी योगदान दिया। जिस समय इन्दिरा गाँधी ने अपनी शक्ति और स्थिति संगठित कर रही थी। वे भारतीय राष्ट्र के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ष थे। देश की अर्थव्यवस्था में गंभीर परिवर्तन हो रहे थे। कृषि में आवश्यकता से अधिक उत्पादन के आरंभिक वर्ष और औद्योगिक क्षेत्र में सम्मान वृद्धि के वर्ष समाप्त हो चुके थे। भारत की आर्थिक व्यवस्था तथा मिश्रित अर्थिक विकास की प्रक्रिया से अनेक प्रकार के विरोधावास उत्पन्न हो रहे थे। जनसाधारण की आकांक्षाओं में अपार वृद्धि परन्तु उनकी पूर्ति के लिए स्रोतों की कमी। औद्योगिक क्षेत्र में तीव्र गति से विकास परन्तु कृषि क्षेत्र में सीमित उत्पादन दर, अधिकारों तथा विशेषाधिकारों की जानकारी के संबंध में राजनीतिक आधार पर जानकारी में वृद्धि परन्तु राजनीतिक चेतना का स्तर पिछडा हुआ और साम्प्रदायिकता तथा क्षेत्रीयता पर आधारित इन बढते हुए सामाजिक तनावों का राजनीतिक विकास पर प्रभाव पड रहा था और परिणाम स्वरूप अनेक प्रकार के राजनीतिक संकट प्रकट हो रहे थे। इस परिस्थिति में प्रधानमंत्री की भूमिका अधिक चुनौती पूर्ण बनती जा रही थी। अनेक राजनीतिक संस्थाएं जिन्हें भारत ने अपनाया था, अब बाह्रय प्रतीत हो रही थी और टूट रही थी। समस्याओं के शीघ्र समाधान की आवश्यकता थी। स्वतंत्रता संग्राम और स्वाधीनता के कारण लोगों में एक सुखी एवं सम्पन्न भारत का जो स्वप्न था एक प्रकार से दूर हो रहा था। और जनसाधारण हतोत्साहित हो रहा था। पुरानी विचाराधाराएं समाप्त हो रही थी। मौजूदा संस्थाएं पुरानी प्रतीत हो रही थी, उदारवादी संसदीय लोकतंत्र के जनसाधारण की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं के लिए असंगत लगने लगे थे। पुराने आदर्शवादी मूल्यों तथा नियामक राजनीति के स्थान पर प्रतियोगिता भी राजनीति में आने लगी। एक प्रकार से भारत पर प्रगतिवादियों तथा दक्षिण पंथियों, कांग्रेस तथा विपक्षी दलों का बंटवारा सा हुआ लगने लगा था। यह ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों, कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्र तथा

समाज के अन्य वर्गों में बढते हुए अन्तर तथा विभिन्नता का प्रतीक था। ये सब विभिन्नताऐं तथा बढतें हुए विरोधाभास, राजनीतिक दलों, दबाब समूहों, चुनाव व्यवस्था इत्यादि राजनीतिक संस्थाओं को प्रभावित कर रहे थे। प्रधानमंत्री पर भी इन घटनाओं का काफी प्रभाव पड रहा था। और परिणामस्वरूप कार्यविधि की नई व्यवस्था उभर रही थी। सत्ता प्राप्ति के लिए नेतृत्व की नई पीढी, जिसने स्वतंत्रता संग्राम में केवल कनिष्क सदस्यों की हैसियत से भाग लिया था। संघर्षरत थी और विभिन्न गुटों में बटी हुई शासक दल असंगठित और संकट की स्थिति में था कांग्रेस की वैधता और पुराने गौरव दोनों में काफी कमी आ चुकी थी। विरोधी दलों, विशेष रूप से वामपंथी तथा दक्षिण पंथी उग्रवादियों की चुनौती अत्यधिक गंभीर होती जा रही थी।

अतः ज्यादातर स्थिति गंभीर तथा अस्थिरता पूर्ण थी। इस संकट की परिस्थिति से बाहर निकलने के लिए उच्चस्तरीय राजनीतिक निपुणता चाहिए थी। और राजनीतिक दल तथा व्यक्ति इस संकट के नीचे दबे हुए थे। निपुण व्यक्ति के लिए न केवल अपने अस्तित्व को बनाए रखना असंभव था लेकिन एक नेता के रूप में स्थापित होने के लिए भी परिस्थितियां अनुकूल थी। व्यवस्था की मांग की जा रही थी। और बुर्जुआ वर्ग की आवश्यकता थी और एक ऐसे नेता की जो अपने वायदों के प्रति निपुणता से जनसाधारण का विश्वास पा सके और दक्षिणपंथियों तथा वामपंथी उग्रवादियों से उत्पन्न चुनौती को समाप्त कर सके।

अतः शासक वर्ग और शासक दल के लिए स्थिरता बनाए रखने तथा सामाजिक तनावों को फिर से उभरने से रोकने की आवश्यकता थी। अस्थिरता और तनावों से उत्पन्न की प्रक्रिया में गिरावट आ रही थी। चालू राजनीति बिगडती हुई अर्थव्यवस्था का मुकाबला करने में असमर्थ सिद्ध हो रही थी। मीसा के अधीन गिरफ्तारियाँ तथा अन्य कठोर कदम भी विरोध तथा आन्दोलनों को कुचलने में विफल हो रहे थे। शासक वर्ग कानून एवं व्यवस्था स्थापित करने तथा

स्थिरता कायम रखने के लिए आतुर हो रहा था। दिनोंदिन असंतोष बढ रहा था। और विभिन्न अंगों की वैधता में कमीं आ रही थी। इन्दिरा गाँधी जैसी नेता स्वयं को असुरक्षित महसूस कर रही थी। लगातार बिगड़ती हुई परिस्थितियों पर दुर्बल एवं कठोर कार्यवाही की आवश्यकता थी।[38]

लगभग 1970 के बाद से स्थिति और गंभीर हो गयी। मुद्रास्फीति की दर आकाश छूने लगी, उत्पादन कम हो गया, अकाल, बेकारी तथा गरीबी में वृद्धि, इसी कारण सख्त कदम उठाने की मांग की जाने लगी। परस्पर द्वंदों, साम्प्रदायिक संघर्षों तथा संकुचित संसदीय लाभों की स्थिति में फँसे राजनीतिक दल इस राष्ट्रीय चुनौती का सामने करने के योग्य नहीं थे इसमें शासक दल का भीतरी व आपसी संकट और बढ गया तथा विरोधी दलों की साख कम हो गयी। अल्पकाल के लिए शासन में विराधी दलों के प्रयोग के बाद लोगों का अधिकतर विराधी दलों में इस बारें में विश्वास उठ गया कि वे कांग्रेस का विकल्प बन सकते थे।

जय प्रकाश नारायण ने 'सम्पूर्ण क्रांति का नारा दिया और कर न देने, जिला अधिकारियों का घेराव करने विद्यार्थियों से एक वर्ष के लिए स्कूल कॉलेजों को छोडकर इस आन्दोलन में भाग लेने की अपील की। उन्होंने सेना से भी यह अपील की वह सरकार के ऐसे आदेशों का पालन न करे जो अनुचित तथा अवैधानिक हो। 14 अक्टूबर 1974 को जयप्रकाश नारायण ने यह घोषणा की कि जल्द ही प्रशासकीय स्तरों पर समानान्तर सरकारों की स्थापना की जायेगी 14 नवम्बर को जय प्रकाश नारायण ने पटना में एक रैली का नेतृत्व किया जिस पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया और जय प्रकाश नारायण को भी चोटें आईं। भ्रष्टाचार के लिए आरोप लगाए गए इन आन्दोलनों ने क्रांति का रूप धारण कर लिया और बिहार में लूटमार और उपद्रव का वातावरण उत्पन्न हो गया। इन्दिरा सरकार की ओर से आन्दोलन की घोर आलोचना की गई। यह प्रचार किया गया

कि इस आन्दोलनो के पीछे फासिस्टवादी शक्तियाँ हैं जो जनतंत्र का अन्त कर देना चाहती हैं।[39]

(4) प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी पर भ्रष्टाचार का आरोपः—

मार्च 1971 में इन्दिरा गाँधी अपने प्रतिद्वन्दी राजनारायण (उस समय समाजवादी नेता और बाद में राष्ट्रीय जनता पार्टी के नेता) को एक लाख से भी अधिक मतों से पराजित करके रायबरेली (उत्तरप्रदेश) लोकसभा के लिए विजयी घोषित की गई थी। राजनारायण ने 24 अप्रेल 1971 में याचिका दायर की जिसमें उन्होंने इन्दिरा गाँधी पर निम्नलिखित आरोप लगाएः—

1. इन्दिरा गाँधी ने चुनाव से पूर्व मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए उन्हें कम्बल, धोतियां आदि बांटी।

2. चुनाव पर लगभग 15 लाख रूपये खर्च किए जबकि चुनाव खर्च 75 हजार रूपये से अधिक नहीं होनी चाहिए।

3. स्थल सेना और वायुसेना के विमानों और हैलीकॉप्टरों का चुनाव अभियान के दौरान प्रयोग किया गया।

4. मतदाताओं को मतदान केन्द्रों पर लाने के लिए सरकारी वाहनों का प्रयोग किया गया।

5. सरकारी कर्मचारियों को चुनाव अभियानों में शामिल किया गया।

6. धार्मिक चित्र गाय और बछडों को पार्टी चिन्ह बनाया गया।

चुनाव कार्यों के लिए सरकारी अधिकारियों की सेवाओं के दुरूपयोग के संबंध में मुख्य आरोप यह लगाया था कि इन्दिरा गाँधी ने यशपाल कपूर की सेवाऐं ली जबकि वे केन्द्रीय सरकार के एक कर्मचारी थे और वे प्रधानमंत्री के सचिवालय में विशेष ड्यूटी पर नियुक्ति अधिकारी के रूप में कार्य करते थे।

(5) मीसा तथा D.I.R का दुरूपयोगः— निवारक नजरबंदी अधिनियम के साथ—साथ 1971 में बांग्लादेश के प्रश्न पर पाकिस्तान युद्ध के समय आंतरिक सुरक्षा अधिनियम (मीसा) तथा भारतीय सुरक्षा अधिनियम (D.I.R) भी लागू किए गए। निवारक नजरबंदी अधिनियम के अन्तर्गत तो यह व्यवस्था थी कि प्रत्येक मामलो का एक स्वतंत्र पुनरीक्षण नामिका द्वारा निरीक्षण किया जाएगा, मीसा तथा D.I.R मे गलत अथवा व्यक्तिगत आधार पर प्रेरित गिरफ्तारियों के विरूद्ध कुछ उपायों की व्यवस्था थी। इसके बाबजूद इनका प्रयोग राजनीतिक विरोधियों के विरूद्ध किया गया।

(6) भारत—पाक युद्ध से उत्पन्न समस्याः— भारत—पाक युद्ध 1971—72 लगातार सूखा और सबसे अधिक पैट्राल की कीमतों मे वृद्धि हो रही थी इन मुद्दों के कारण समाज में व्यापक असंतोष और निराशा की स्थिति उत्पन्न हो रही थी विशेष रूप से उन वर्गो में जो बढती हुई बेरोजगारी,मूल्यवृद्धि और अनाज तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं की कमी से प्रभावित थे। ग्रामीण क्षेत्रो में असमानताए, दूर करने की विफलता के कारण कृषि उत्पादन में और भी कमी होती जा रही थी। और कृषि उत्पादन में यह गिरावट औद्योगिक विकास मे ढीलापन ला रही थी।[40]

भारत—पाक युद्ध ने भारत की अर्थव्यवस्था को गहरी चोट पहुचाई, तदुपरांत तेल—उत्पादक देशो के द्वारा तेल की कीमतों में वृद्धि, अकाल,आवश्यक वस्तुओं की कमी ने सामान्य स्थिति को गंभीर बना दिया था धीरे—धीरे देश में टकराव की राजनीति का जन्म हुआ एक ओर सत्तादल था जिससे लोग अप्रसन्न थे जिसने 1971 के चुनाव में जिस आश्वासनो को पूरा नही किया था। तो दूसरी ओर विरोधी दल थे, जो कांग्रेस की असफलता का पूरा फायदा उठाना चाहते थे। उन्होनें कांग्रेस की इस निष्क्रियता को विश्वासघात की संज्ञा दी। औद्योगिक विकास में वृद्धि, रोजगार और आय ग्रामीण क्षेत्रो मे वस्तुओं की मांग की बढोतरी पर निर्भर होते है। इस प्रकार की मांग वास्तविकता भूल सुधारों और भूमि के

उचित बंटवारे के बिना असंभव थी। परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रो में औघोगिक उत्पादनों की मांग, खेतिहर मजदूर की वास्तविक आय में कमी के कारण, बढने के स्थान पर गिर रही थी।[41]

(7) तात्कालिक कांग्रेस सरकार द्वारा संविधान में संशोधन (1971–75)[42]

(1) **24 वां संशोधन (1971):–** यह संशोधन नागरिको के मूल अधिकारो से सम्बधित था। गोलकनाथ विवाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा संसद की मौलिक अधिकारों से संबधित संविधान संशोधन की शक्ति को सीमित कर दिया था। 24वें संविधान संशोधन में संसद को यह अधिकार दिया गया कि वह संविधान के मौलिक अधिकारों सहित किसी भी भाग को संशोधित कर सकती है।

(2) **25 वां संशोधन (1971) :–**संविधान में नया अनुच्छेद 31 (स) जोड़ा गया जिसके अनुसार नीति निदेशक तत्वों को अमल में लाने के लिए जो कानून बनाये जायेंगे। उन्हे इस आधार पर अवैध घोषित नही किया जा सकता कि वें मौलिक अधिकारों के विरूद्ध हैं, 24वें व 25वें संविधान संशोधन के कुछ अंशों को आगामी समय तक अवैध घोषित कर दिया गया। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि ऐसा कोई सविंधान संशोधन नहीं किया जाना चाहिए जिससे संविधान का “बुनियादी” ढांचा ही नष्ट हो जाये।

(3) **26वां संशोधन (1971):–** इस संशोधन द्वारा देशी रियासतों के शासको की मान्यता को समाप्त कर दिया गया तथा उनका प्रीवियर्स समाप्त कर दिया गया।

(4) **27वां संशोधन (1971):–** दो नये संघ राज्य क्षेत्र मिजोरम व अरूणाचंल प्रदेश 1971 मे बनाये गये।

(5) **28वां संशोधन (1972):–** इस संशोधन द्वारा भूतपूर्व भारतीय सिविल सेवा (I.C.S) के अधिकारिया की सेवा शर्ते व विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया गया।

(6) **29वां संशोधन (1972):–** केरल के भूमि–सुधारो से संबधित दो अधिनियमों को नवीं अनुसूची में 1972 में जोडा गया।

(7) **30वां संशोधन (1972):–** उच्चतम न्यायालयों मे दीवानी की अपील के लिए बीस हजार रूपये की धनराशि की सीमा हटा दी गई।

(8) **31वां संशोधन (1974)** लोकसभा के सदस्यो की संख्या 525 से बढाकर 545 कर दी गई।

(9) **32वां संशोधन (1974):–** आन्ध प्रदेश व तेलांगना के बीच विवाद को दूर करने के लिए छः सूत्रीय कार्यक्रम को वास्तविकता प्रदान करने के लिए यह संशोधन किया गया।

(10) **33वां संशोधन (1974):–** लोकसभा अध्यक्ष या विधानसभा अध्यक्ष द्वारा किसी सदस्य का इस्तिफा तब तक स्वीकार नहीं किया जायेगा जब तक उसे यह विश्वास न हो जाये कि इस्तीफा सदस्य द्वारा अपनी इच्छा से, न कि किसी के दबाब के कारण दिया गया है।

(11) **34वां संशोधन (1975):–** भूमि सुधार सम्बन्धी बीस अधिनियमों को अनुसूची मे जोड़ा गया।

(12) **35वां संशोधन (1975):–** संविधान मे दसवी अनुसूची जोडी गयी तथा सिक्किम को सह–संयुक्त राज्य का दर्जा दिया गया।

(13) **36वां संशोधन (1975):–** इस संशोधन द्वारा सिक्किम को पूर्णराज्य का दर्जा प्रदान किया गया

1969–74 के बीच मूल्य सूचकांक में 38 प्रतिशत की वृद्धि हो गयी थी। जबकि सभी सरकारी कर्मचारी के विभिन्न वर्गों की आय में इतनी बढोतरी नही हुई थी वास्तविक आय में गिरावट औघोगिक श्रमिको के मामले में और भी अधिक थी। वास्तव में उनकी आय 1963 के स्तर पर पहुच गयी थी।

भारतीय अर्थव्यवस्था गंम्भीर संकट की स्थिति में थी। इसके कारण समाज में व्यापक आन्दोलन फैल रहा था जो कि सरकार के विरूद्ध अनेक प्रकार के आन्दोलनों द्वारा प्रकट किया जा रहा था। वेतन भोगी श्रमिक और सरकारी कर्मचारी, सरकार द्वारा वेतन स्थरीकरण, जीवन–निर्वाह सूचक अंकों को निलम्बित करने तथा मंहगाई–भत्ते इत्यादि को जबरन जमा करने इत्यादि आदेशों का कडा विरोध कर रहे थे। अनेक आन्दोलन और विरोध आयोजित किए गए। इन आदोलनों में प्रमुख 1974 की रेलवे हडताल और जय प्रकाश नारायण का आंदोलन था।

संस्थाओं के स्तर पर नेतृत्व, दल और केन्द्र में विभिन्न वर्गों की समस्याए, विभिन्न स्तरो पर सत्ता के केन्द्रीयकरण से और भी अधिक प्रबल हो रही थी। शक्ति का यह केन्द्रीयकरण कांग्रेस व्यवस्था की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की उस आरंभिक राजनीति से प्रस्थान की ओर बडा कदम था।[43]

कांग्रेस राजनीति में बढती हुई निरंकुशता, राज्यसत्ता के नेतृत्व तथा विभिन्न गुटो और दलो के अंदर दबाब समूहों के प्रति केन्द्रीय नेतृत्व के व्यवहार से स्पष्ट थी। परन्तु सत्ता का यह केन्द्रीयकरण पारस्परिक संघर्ष को भी बढ़ा रहा था क्योंकि राजनीतिक केन्द्रीयकरण ने उनके महत्वपूर्ण संगठनों की शक्ति और सत्ता के रास्ते पर रूकावट लगा दी। इन विभिन्न संगठनो ने अब अपनी राजनीतिक रूकावट को जनसंघ, समाजवासदी पार्टी तथा कांग्रेस (एस) के माध्यम से गुजरात और बिहार आन्दोलन द्वारा प्रकट करना आंरभ कर दिया था।

(8) विरोधी दलों के आन्दोलन एवं उनके प्रभावः— 1974 के गुजरात आन्दोलन और 1974—75 के बिहार आन्दोलन ने कांग्रेस के स्थानीय नैतिक और राजनीतिक भ्रष्टाचार की ओर पिछडेपन के अतिरिक्त अत्यधिक—मूल्य—वृद्धि और आवश्यक वस्तुओं की कमी के लिए भी कांग्रेस के खराब शासन को जिम्मेदार ठहराया था जबकि लोगो को सामाजिक न्याय और जीवन स्तर को सुधारने की आशाएं बढाई जा रहीं थी वास्तव में विभिन्न ग्रामीण वर्गो में धन प्राप्त करने, सरकारी पदों मे उपलब्ध विशेषाधिकारों को प्राप्त करने तथा मित्रों,संबधियो और पिछलग्गुओं में नौकरिया और अन्य सुविधाए बांटने के लक्ष्यो को लेकर सार्वजनिक पदों को प्राप्त करने की होड़ लगी हुई थी।[44]

धीरे—धीरे सरकार की क्षमता और राजनीतिक दलों पर से लोगो का विश्वास उठ रहा था। बिहार—आन्दोलन के नेताओं ने आव्हान किया कि यह गंभीर स्थिति केवल कांग्रेस सरकार को समाप्त करके ही सुधारी जा सकती हैं इसलिए आन्दोलन की पहली और प्रमुख मांग कांग्रेस सरकार का त्यागपत्र थी जिसे भ्रष्टदलीय राजनीति का रूप माना जा रहा था। गुजरात और बिहार दोनों ही आंदोलनो में मुख्य रूप से धनी किसान और मध्यम वर्ग के लोग संक्रिय थे। वास्तव में गुजरात मे धनी किसानों ने इस आन्दोलन का उपयोग भूमि की अधिकतम सीमा और धन की उगायी समाप्त करने के लिए किया।[45]

विद्यार्थी और मूंगफली के तेल के उद्योग में लगे व्यापारी और दुकानदार सबने मिलकर राज्य सरकार के विरूद्ध व्यापक संघर्ष छेडा। इन्होने कांग्रेस कार्यकर्ताओं में विद्यमान भ्रष्टाचार का भंडाफोड किया और आवश्यक वस्तुओं की कमी तथा मूल्यवृद्धि के लिए कांग्रेस नेतृत्व को जिम्मेदार ठहराया। जयप्रकाश नारायण ने इस आंदोलन का और अधिक विस्तार किया। उनके इस नेतृत्व को जनता की स्वीकृति मिली और इसके विकास के साथ उनके संबंधो ने इसके महत्व को देश के अन्य भागो में पहुँचाकर इसे राष्ट्रीय स्तर का आंदोलन

बना दिया। 1974 में बडे भाग मे जयप्रकाश आंदोलन ने विधानसभा भंग करने की मांग को लेकर लोकप्रिय प्रदर्शनों के द्वारा राज्य सरकार की कार्यक्षमता को ठप्प रखा। विभिन्न प्रदर्शनों तथा बैठकों में राज्य के भ्रष्ट विधायकों के त्यागपत्र की मांग की जाती थी। केन्द्रीय सरकार को भी सम्मिलित कर इसे राष्ट्रीय रूप देने का प्रयत्न किया गया। जयप्रकाश ने आंदोलन के आधार को व्यापक बनाने के लिए जनसंघ, समाजवादी पार्टी, भारतीय लोकतंत्र, कांग्रेस (एस) तथा विभिन्न गाँधीवादी संगठनो में सहयोग देने का आव्हान दिया। विभिन्न दलों, संगठनों को सहमति के आधार पर जयप्रकाश एक सामाजिक और अर्थिक कार्यक्रम निर्धारित करने ने सफल हुए। जय प्रकाश की आर्थिक सफलता उनके व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक जीवन में उनकी ईमानदारी के आधार पर प्राप्त हुई।[46]

जय प्रकाश नारायण समस्त आंदोलन का केन्द्र और विभिन्न विचारधाराओं, परस्पर विरोधी दलों तथा संगठनों मे एकता के प्रतीक थे। बिहार आन्दोलन के साथ जयप्रकाश के संबध और उनकी सक्रिय भूमिका ने विरोधी दलों को राजनीतिक दृष्टि से सक्रिय किया, उन्हे एक संगठित राजनीतिक आंदोलन का अवसर दिया और भ्रष्टाचार, सामाजिक असमानताओं और अन्यायों के विरूद्ध उनके युद्ध को वैधता प्रदान की। जयप्रकाश आंदोलन ने बुरी तरह से बंटे हुए विरोधी दलों को नैतिक बल प्रदान किया गया बिगड़ती हुई अर्थव्यवस्था और राजनीतिक समस्याओं के जोर पकडने की प्रक्रिया मे ऐसे हालात उत्पन्न कर दिए जिनमें अशांति तथा हष्ट–पुष्ट दंगे दैनिक कार्य बन गए। इन्ही का विकसित रूप गुजरात और बिहार आन्दोलन था। कांग्रेस सरकार के विरूद्ध असंतोष की स्थिति का फायदा उठाते हुए विरोधी दलों ने मिलकर संविद सरकार का निर्माण किया। गुजरात में 1975 के चुनाव में विजय प्राप्त की। विरोधी दलों ने सहयोग की प्रक्रिया की एक घटना ने और प्रोत्साहित किया यह घटना 1975 में इलाहबाद उच्च न्यायालय द्वारा इंदिरा गाँधी के रायबरेली चुनाव क्षेत्र से चुनाव को अवैध

घोषित कर दिया। 24 जून 1975 को उच्चतम न्यायालय द्वारा इन्दिरा गाँधी को इस निर्णय के विरूध पूर्ण स्थगन (Stay) प्रदान करने से इंकार कर दिया।

विरोधी दलों ने इस निर्णय को एक महान उपलक्ष्य के रूप में विस्तृत किया गया। इन्दिरा गाँधी के नेतृत्व मे कांग्रेसी भ्रष्टाचार के विरूद्ध उनके अभियान को जैसे न्यायिक वैधता प्रदान की गई थी। विजय के इस उल्लास में पांच विरोधी दलो ने एक मोर्चा कायम किया और प्रधानमंत्री से तुरंत त्यागपत्र की मांग को लेकर सत्याग्रह की एक योजना बनाई। लोकसंघर्ष समिति के नाम से आंरभ इस मोर्चे ने राष्ट्रव्यापी अवज्ञा आन्दोलन की विस्तृत योजना बनाई और जनता को आश्वासन दिया कि वह इन्दिरा गाँधी से तुरंत पद त्यागने की मांग को मनमाने के लिए निषेधाज्ञा, कानूनन गिरफ्तारी, पुलिस आक्रमण आदि का उल्लंघन करें।[47]

इस व्यापक योजना के क्रियान्वित होने से पहले ही आपातकालीन स्थिति की घोषणा करके दबा दिया और बाहरी और आंतरिक दोनो चुनोतियों को देखते हुए सत्ताधारी कांग्रेस दल ने स्वतंत्र भारत में पहली बार आंतरिक स्थिति के बिगडने के आधार पर 25 जून 1975 को "राष्ट्रीय आपातकाल" की घोषणा कर दी गयी।[48]

(9) आपातकाल का निर्णय एवं प्रक्रियाः– जून 1975 में भारतीय राजनीति मे एक नया मोड उत्पन्न हुआ। राजनैतिक नारेबाजी तथा आर्थिक दाब–पेचों की असफलता के बाद इन्दिरा गाँधी ने उदारवादी लोकतंत्र मे प्राप्त आखिरी अधिकार का प्रयोग, आपात स्थिति की घोषणा और निरंकुश शासन स्थापित करने की कार्यवाही की।

मार्च 1971 में राजनारायण (समाजवादी नेता) ने इन्दिरागाँधी के विरूद्ध रायवरेली (उत्तरप्रदेश) से चुनाव लड़ा था उसमे वह बुरी तरह पराजित

हुआ था। उसके बाद उसने अप्रेल 1971 में प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी के विरूद्ध इलाहबाद उच्च न्यायालय में एक चुनाव याचिका दायर की थी जिसमें प्रधानमंत्री के विरूद्ध भ्रष्टाचार का आरोप लगाया गया था। 12 जून 1975 को इलाहबाद उच्च न्यायालय के न्यायधीश जगमोहन लाल सिन्हा ने राजनारायण की याचिका पर हाई कोर्ट का निर्णय पढकर सुनाया। जिसमें इन्दिरागाँधी पर भ्रष्टाचार के आरोप कायम रख दिए गये। उनके चुनाव को रद्द कर दिया गया। इलाहबाद उच्चन्यायालय के फैसले को 20 दिन तक के लिए लागू न करने के लिए पूर्ण स्थगनादेश (Absulate Stay) भी जारी कर दिया क्योकि प्रधानमंत्री का पद अत्यन्त महत्वपूर्ण था। इसके बाद इन्दिरा गाँधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए साम्यवादी दल को छोडकर अन्य विरोधी दलों ने आन्दोलन छेडने का निश्चय किया उन्होने 13 जून 1975 को राष्ट्रपति भवन के सामने धरना दिया।

18 जून 1975 को कांग्रेस संसदीय दल ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमें इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में अटूट विश्वास प्रकट किया और कहा गया कि उनका नेतृत्व देश के हित के लिए अनिवार्य है 20 जून 1975 को प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने इलाहबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय से अपील की। इस अपील में इलाहबाद उच्च न्यायालय के निर्णय कों उस समय तक पूर्ण रूप से तथा बिना शर्त के स्थगित रखने के लिए प्रार्थना की गई। जब तक उच्च न्यायालय अन्तिम रूप से अपील पर कोई निर्णय नही लेता।

24 जून 1975 को उच्चतम न्यायालय के अवकाश पीठ ने प्रधानमंत्री की अपील पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय को स्थगित करने के लिए एक आदेश जारी कर दिया जिसमें कहा गया कि इन्दिरा गाँधी की अपील या निर्णय तक प्रधानमंत्री के रूप मे कार्य कर सकती है। और संसद की कार्यवाही में भाग ले सकती है पर मतदान मे भाग नही ले सकती है। 25 जून 1975 को जयप्रकाश के नेतृत्व में साम्यवादी दल को छोडकर अन्य विरोधी दल (संगठन

कांग्रेस, जनसंघ, समाजवादी दल और भारतीय लोकदल इत्यादि) ने इन्दिरा गाँधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए बडा व्यापक आन्दोलन छेड़ने की घोषणा की। स्थिति बडी गंम्भीर थी। इस पर प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने अपने सहयोगी मंत्रियों, मुख्यमंत्रियो और अन्त में राष्ट्रपति से विचार किया। इन्दिरा गाँधी के विचार में कानून तथा व्यवस्था के टूटने और अराजकता फैलने की पूरी–पूरी संभावना थी इसलिए उन्होने राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद से आन्तरिक संकटकालीन स्थिति की घोषणा करवा दी। बाहरी संकटकालीन स्थिति 3 दिसम्बर 1971 से पहले की चल रही थी। इसके बाद आन्तरिक आपातकाल 25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 तक लगभग 21 महीने तक रहा।[49]

संदर्भ –

1. सईद प्रो०एस.एम 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' 2009, भारत बुक सेन्टर लखनऊ, पृष्ठ संख्या–97
2. पाण्डेय, जे.एन "भारत का संविधान" 2012, सेन्ट लॉ एजेन्सी, इलाहबाद, पृष्ठ संख्या–691 एवं 692
3. भारत का संविधान, प्रकाशन विभाग 'भारत सरकार विधि और न्याय मंत्रालय' नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–111
4. तत्रैव
5. तत्रैव
6. तत्रैव
7. भारत का संविधान "प्रकाशन विभाग 'भारत सरकार विधि और न्याय मंत्रालय', नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–112
8. भारत का संविधान 'प्रकाशन विभाग भारत सरकार' विधि और न्याय मंत्रालय' नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–81
9. भारत का संविधान'प्रकाशन विभाग भारत सरकार' विधि और न्याय मंत्रालय, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–23 [83(2)]
10. श्रीनिवासन, एम' डेमोक्रेटिव गर्वनमेन्ट इन इंडिया' 2007, पृष्ठ संख्या–369
11. तत्रैव
12. तत्रैव
13. लक्ष्मीकान्त, एम 'भारत की राजव्यवस्था' 2011 टी.एम.एच.प्रा०लि०, पृष्ठ संख्या–32
14. पायली, एम.वी. 'इंडियन कंस्टीटूशन' एस चंद एण्ड कम्पनी, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–280
15. कंस्टीटूशन असेम्बली डिवेट्स खण्ड IX, पृष्ठ संख्या–105

16. कंस्टीटूशन असेम्बली डिवेट्स खण्ड IX, पृष्ठ संख्या–123

17. कंस्टीटूशन असेम्बली डिवेट्स खण्ड IX, पृष्ठ संख्या–547

18. कंस्टीटूशन असेम्बली डिवेट्स खण्ड IX, पृष्ठ संख्या–177

19. फडिया बी.एल. 'भारतीय शासन एवं राजनीति' 2012, साहित्य भवन पब्लिकेशन' आगरा, पृष्ठ संख्या–240

20. अग्रवाल, आर.सी 'भारतीय संविधान का विकास तथा सक्रिय आन्दोलन' 'एस चंद कम्पनी लि०' 2000 दिल्ली, पृष्ठ संख्या–405

21. नवभारत टाइम्स 'दिल्ली 23 अक्टूबर 1962 पृष्ठ संख्या–1, कालम 1–3

22. अवस्थी, डॉ ए.पी 'भारतीय शासन एवं राजनीति' 2011, नवरंग ऑफसेट प्रिन्टर्स, आगरा, पृष्ठ संख्या– 220

23. बसु, आचार्य डी.डी.'भारत का संविधान' 2012, लेक्सिस नेक्सिस बटरवर्धस बाधवा, नागपुर, पृष्ठ संख्या–361

24. कश्यप सुाभाष 'हमारा संविधान' 2011, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, पृष्ठ संख्या– 283

25. इंडियन एक्सप्रेस, दिल्ली 30 मार्च 1969

26. दि टाइम्स ऑफ इंडिया दिल्ली 11 जनवरी 1973

27. पेट्रियाट, दिल्ली, 21 जुलाई 1973

28. सईद, 'प्रो० एस.एम 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' 2009, भारत बुक सेन्टर लखनऊ, पृष्ठ संख्या–231

29. रिपोर्ट ऑफ द सेन्टर स्टेट–रिलेशंस इन्क्वारी कमेटी (गवर्नमेन्ट ऑफ तमिलनाडू 1971) पृष्ठ संख्या 215 एवं 227

30. डॉ. एल.एम सिंघवी एण्ड अदर्स (सं) यूनियन–स्टेट रिलेशंस इन इंडिया (द इन्सिट्टयूट ऑफ कंस्टीटूशनल एण्ड पार्लियामेन्टरी स्टडीज, दिल्ली 1969) पृष्ठ संख्या– 1985–86

31. दि हिन्दुस्तान टाइम्स, दिल्ली, 8 अक्टूबर 1968

32. डॉ. एल.एस सिंघवी एण्ड अदर्स "यूनियन स्टेट रिलेशंस इन इंडिया 1969, पृष्ठ संख्या–188

33. गुप्त, डी.सी 'इंडियन गवर्नमेन्ट एण्ड पोलिटिक्स स्टडीज', विकास पब्लिशशिंग हाउस, दिल्ली, 1972, पृष्ठ संख्या–106

34. तत्रैव पृष्ठ संख्या–106

35. तत्रैव पृष्ठ संख्या–105

36. सईद, एस.एम.' 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' 2009, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ, पृष्ठ संख्या–241

37. चतुर्वेदी, गीता 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' '2010, पंचशील प्रकाशन जयपुर, पृष्ठ संख्या–179

38. कोशिक, सुशीला, 'भारतीय शासन एवं राजनीति' 1990 हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्याालय, पृष्ठ संख्या–187

39. अग्रवाल, आर.सी. 'भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन' एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि0, 2000, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–28

40 Francine frankel' Indias political economy 1947-1977 oxford univer. Press New Delhi, 1978, Cahmp-4

41. Some recent wage trends (planning commission New Delhi 1978) P-78

42. कोशिक, सुशीला, 'भारतीय शासन एवं राजनीति' 1996 हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ संख्या–187

43. John wood' extra parliamentary oppositions in India" An anaylisis of populist agitations in Gujrat- Bihar "pacific affairs 1975

Daniel graves" political moblization in India ' the first party system "Asian survey sep- 1976

Rajni kotnari' The congress system on trial ' Asian survey Fev - 1967

44. Bhattacharya, Ajit' Despair and Hope in Bihar times of India' Sep 17, 1973

45. Shah, Gnansnyam" The 1976 Gujrat Assembly election in India" Asian survey 1976

Dawn Jones and Redney Jones " urban upneavel in India " March - 1976

46. कोशिक, सुशीला, 'भारतीय शासन एवं राजनीति' 1996 हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ संख्या–394

47. The Times of India- June- 27, 1975

48. कोशिक सुशीला भारतीय शासन एवं राजनीति' 1996' हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ संख्या–396

49. अग्रवाल, आर.सी.' भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि0, 2000, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–335

अध्याय द्वितीय

आपातकाल के दौरान 20 सूत्रीय कार्यक्रमों का क्रियान्वयन और प्रभाव की विवेचना (साक्षात्कार, सर्वे) पर आधारित

अध्याय द्वितीय

आपातकाल के दौरान 20 सूत्रीय कार्यक्रमों का क्रियान्वयन और प्रभाव की विवेचना (साक्षात्कार, सर्वे) पर आधारित

भारत के राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने 25 जून 1975 को सम्पूर्ण देश में आपातकाल की घोषणा कर दी।[1]

इन्दिरा गाँधी का 1 जुलाई 1975 को प्रगतिशील सामाजिक, आर्थिक रूपान्तरणों के अन्तर्गत 20 सूत्रीय कार्यक्रम की शुरुआत मूलतया भूमि सुधार कार्यक्रम को तेज करने, खेतिहार मजदूरों की स्थिति में सुधार करने, ऋणदासता आदि का उन्मूलन करने की ओर निर्देशित था।[2]

भारतीय कम्यूनिष्ट पार्टी ने सरकार के कदमों के समर्थन की घोषणा की और 20 सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सरकार के साथ सक्रिय सहयोग की घोषणा की।[3]

आपातकाल की अवधि में भारतीय साम्यवादी पार्टी ने सरकार की नीतियों के समर्थन की घोषणा की और 20 सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सरकार के साथ सहयोग करने का निर्णय लिया गया था। किसान सभा तथा खेत मजदूर संघ ने यह निर्णय लिया था कि सन् 1975–76 में 20 सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए पदयात्रायें की जाये जिससे यह पता चल सके कि अधिकांश ग्रामीणों की स्थिति, घोषित कार्यवाहियों से प्रभावित हुई है या नहीं।[4]

(अ) युवकों को पकड़कर की गई नसबंदी :–

इमरजेंसी में युवकों की स्थिति खराब थी इस दौरान बहुत अत्याचार हुये थे। नवयुवकों को पकड़ पकड़ कर उनकी नसबंदी की गई। दरअसल संजय

गाँधी और इंदिरा गाँधी को लगा कि जिस प्रकार चीन में सख्ती के साथ विकास को धार दी गई है उसी प्रकार भारत में यह चमत्कार करके दिखा दें। गांवों में डॉक्टरों ने नसबंदी के आंकड़े पूरे करने के लिए जिस प्रकार फर्जी तरीके से नसबंदी के झूठे आंकड़े पेश किए। उसी से लोगों में गुस्सा और कांग्रेस के खिलाफ नफरत फैली। ऐसा नहीं है कि इमरजेंसी का पूरे देश में एक जैसा विरोध हुआ क्योंकि सन् 1977 में चुनाव में कांग्रेस का जहाँ उत्तर भारत में सफाया हो गया वहीं दक्षिण के प्रदेशों में कायम रहीं। इंदिरा गाँधी रायबरेली में राजनारायण के हाथों पराजित होने के बाद दक्षिण भारत में चुनाव जीत गई।

इमरजेंसी का यह पहलू आज भी हमें याद है और उस पर हर साल चर्चा होती है और कहते हैं कि वह खराब थी, लोकतंत्र की हत्या थी लेकिन उस पहलू को कोई याद नहीं रखना चाहता, जिसने देश की कानून व्यवस्था, प्रशासन और सरकारी कामकाज को उस वक्त करने के लिए सख्ती अपनायी। आज के महौल में यदि हम उसी पहलू की विवेचना करें तो गलत नहीं होगा।

(ब) बसों से लेकर कर्मचारी तक सब रहते थे राइट टाइम :—

इस बार में मैंने कई बुजुर्गो से बात की जिन्होंने इमरजेंसी के समय सरकारी दफ्तरों में महत्वपूर्ण पदों पर कार्य किया था। लखनऊ में रहने वाले एक बुजुर्ग आर.पी. सिंह का कहना है कि वह उस समय पी.डब्ल्यू.डी में कार्य करते थे। इमरजेंसी का ऐसा डर था कि वह अपने दफ्तर 10 बजे से पहले ही पहुँच जाते थे। घूस का बोलबाला उस समय भी ऐसे दफ्तरों में आया था लेकिन इमरजेंसी ने सारी स्थितियाँ की बदल कर रख दी थी। कोई भी बाबू हो या अधिकारी उनकी घूस लेने की हिम्मत नहीं पड़ती थी लोग अपने आवास पर घूस की रकमों को अपने रिश्तेदार के पास रख आए थे।

हालात यह हो गये थे कि शहरों में चलने वाली बसें एकदम समय

पर आने लगी थीं। 70 के ऊपर हो चुके सिंह कहते हैं कि उस समय तो इमरजेंसी पर गुस्सा आया था लेकिन जब आज अन्ना को आंदोलन करते देखता हूँ और देश में रोज होते घोटाले तो हमने इंदिरा गाँधी की इमरजेंसी को थोड़ा वक्त दिया होता तो आज देश की दशा ऐसी न होती। श्री सिंह की बात की तस्दीक करने के लिए मैंने एक के बाद एक कई ऐसे अधिकारियों से बात की जिन्होंने सरकारी सेवा में रहते हुए इमरजेंसी को देखा।[5] उनके अनुसार किसी भी अधिकारी की घूस लेने की हिम्मत नहीं होती थी।

ऐसे ही एक व्यक्ति हैं आलोक सिंह। आलोक सिंह उस समय सिंचाई विभाग में थे उन्होंने इमरजेंसी का एक किस्सा सुनाया। उस किस्से को मैं हूबहू आपके सामने पेश कर रहा हूँ। आलोक सिंह बताते हैं कि सन् 1975 की गर्मियों में जैसे ही आपालकाल की घोषणा हुई और खुफिया विभाग के अधिकारियों ने भ्रष्ट अधिकारियों के घरों पर छापा मारकर अवैध सम्पत्ति को पकड़ना शुरू किया। मेरे एक मित्र थे काफी चर्चित थे। (घूस लेने के मामले में) अचानक एक दिन पता चला कि वह लंबी छुट्टी पर चले गये हैं। जब वापिस लौटे तो मैं उनके घर पर उनसे मिलने चला गया। घर पहुँचा और छुट्टी का कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि जिस समय अफसरों के घरों पर छापे पड़ रहे थे तब उनके पास घर पर 90000 रू. कैश था। उस समय 90000 रू. बड़ी रकम होती थी। जाहिर है कि उन्होंने कमीशन खोरी और घूसखोरी लेकर कमाई थी।

उन्होंने आगे बताया कि इस पैसे को लेकर परेशान था क्योंकि पकड़े जाने का भय था और नौकरी जाने का भी उन्होंने एक टैक्सी किराये पर ली और अपने पास उपलब्ध सारा कैश रखा और बच्चों के साथ गोवा चले गये खूब मौज मस्ती की और जब 5000 के आसपास रकम बची तो वापिस चल दिये।[6] 74 वर्षीय राम बहादुर सक्सैना बताते हैं कि इमरजेंसी के दौरान कोई भी सरकारी कार्य में देरी नहीं होती थी। आलोक और सक्सैना के किस्से को मैंने यह इसलिए पेश

किया कि लोग इमरजेंसी के सिर्फ एकपहलू को देखते हैं। आज जो देश के हालात हैं। उसके परिप्रेक्ष्य में यदि इमरजेंसी को देखें तो वह बुरी नहीं अच्छी लगेगी। लेकिन मैं युवाओं से सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि वह अपने बुजुर्गो से पूछे कि क्या इमरजेंसी में नागरिक सुविधायें जैसे ट्रांसपोर्ट, बिजली और परिवहन और कानून व्यवस्था ठीक हुई थी कि नहीं। आपका जबाव मिल जायेगा।[7]

(स) बीस सूत्रीय कार्यक्रम :—

इस कार्यक्रम की घोषणा सन् 1975 में की गयी थी जिसे 1980, 1982, 1986 में संशोधित किया गया इसे 1 अप्रेल 1987 से नए रूप में लागू किया गया। इस कार्यक्रम के उद्देश्य इस प्रकार है[8] —

1— गरीबी पर प्रहार

2— वर्षा पर आधारित खेती

3— अधिक उपज

4— सिंचाई का अधिक प्रयोग

5— भूमि सुधार लागू करना

6— ग्रामीण श्रमिकों के लिए विशेष कार्यक्रम

7— पीने का साफ जल

8— सभी के लिए स्वास्थ्य

9— दो बच्चों का आदर्श

10— शिक्षा का विस्तार

11— अनुसूचित जाति एवं जनजाति को न्याय

12— औरतों के लिए समानता

13– नवयुवकों के लिए नये अवसर

14– लोगों के लिए आवास

15– गन्दी बस्तियों का सुधार

16– वनरोपण

17– पर्यावरण संरक्षण

18– उपभोक्ता का संरक्षण

19– गांवों के लिए ऊर्जा

20– उत्तरदायी प्रशासन शामिल

(1) मरूस्थल विकास कार्यक्रम :–

सन् 1977–78 में शुरू किया गया मरूस्थल विकास कार्यक्रम 152 प्रखण्डों में चल रहा है। मरूस्थली क्षेत्रों का विकास जिसके लिए भौतिक, मानवीय तथा अन्य संसाधनों और पशुधन का अच्छा से अच्छा उपयोग करते हुए यहाँ की निवासियों की उत्पादन क्षमता, आय स्तर एवं रोजगारों के अवसरों में वृद्धि की जाती है।

(2) काम के बदले अनाज कार्यक्रम :–

काम के बदले अनाज मूल रूप से एक विकास कार्यक्रम है जिसे अप्रैल 1977 में शुरू किया गया। यह भयंकर सूखे तथा फसल के नष्ट जाने पर शुरू किये जाने वाले सहायक कार्यों से पूरी तरह अलग है। काम के बदले अनाज कार्यक्रम एक पंथ दो कार्य की कहावत चरितार्थ करता है। इसका उद्‌देश्य एक ओर ग्रामीण परिसम्पत्तियों का रखरखाव करना तथा दूसरी ओर गांव की गरीब जनता के लिए रोजगार का अवसर प्रदान करना है।

(3) अन्त्योदय कार्यक्रम :–

यह गाँव के सबसे कमजोर वर्ग की आर्थिक स्थिति सुधारने की विशिष्ट योजना है। इस कार्यक्रम की अपनी कुछ विशेषताऐं हैं। यह कार्यक्रम इस बात का इंतजार नहीं करता कि विकास का लाभ धीरे–धीरे नीचे पहुँचे। इसके स्थान पर इस कार्यक्रम में अन्तिम व्यक्ति की दशा सुधारने की ओर ध्यान दिया जाता है।

(4) समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम :–

इस कार्यक्रम को सन् 1977–78 में छोटे पैमाने पर लागू किया गया। प्रारम्भ में देश के सिर्फ 2300 प्रखण्डों में जहाँ छोटे किसानों के लिए विकास एजेन्सी, सीमान्त किसानों तथा कृषि मजदूरों की एजेन्सी, सूखा ग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम लागू थे, इस कार्यक्रम को लागू किया गया। हर प्रखण्ड में प्रतिवर्ष 400 परिवारों को गरीबी की सीमा रेखा से ऊपर उठाने का लक्ष्य रखा गया। सन् 1980 में देश के सभी प्रखण्डों में इस कार्यक्रम को लागू किया गया तथा इसके अन्तर्गत छोटे किसानों के लिए विकास एजेन्सी तथा सीमांत किसानों और कृषि मजदूरों की एजेन्सी को मिला दिया गया।

(5) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम :–

सन् 1977–78 में काम के बदले अनाज कार्यक्रम लागू किया गया था। छठी योजना में इसका नाम बदलकर 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम' रख दिया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में कमजोर वर्गों के लिए अतिरिक्त श्रम की दृष्टि के लिए श्रम परियोजनाओं, जैसे – भूमि तथा जल संरक्षण, भूमि सुधार, सड़क निर्माण, लघु सिंचाई का निर्माण, सामाजिक सुधार, वृक्षारोपण, स्कूल तथा ग्राम पंचायत के लिए भवन निर्माण आदि को लागू किया जाता है।

(6) ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम :–

इस कार्यक्रम को सन् 1983–84 में लागू किया गया। यह रोजगार

कार्यक्रम राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम का पूरक है। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम के भी वहीं उद्‌देश्य हैं जो राष्ट्रीय रोजगार के कार्यक्रम हैं। केवल इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भूमिहीन परिवारों को अतिरिक्त रोजगार की सृष्टि करना तथा इन परिवारों के कम से कम एक सदस्य को साल में 100 श्रम दिन के रोजगार की व्यवस्था करना है।

(7) न्यूनतम आवश्यक कार्यक्रम :–

इस कार्यक्रम का प्रारम्भ 1972 में हुआ। इसका उद्‌देश्य निम्न आय वाले लोगों के लिए राज्य के द्वारा कुछ आधारभूत आवश्यकताओं की व्यवस्था करना है, जैसे – पीने का पानी, प्रारम्भिक शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधा, ग्रामीण सड़क, ग्रामीण आवास, ग्रामीण विद्युतीकरण, पौष्टिक आहार की व्यवस्था आदि।

(8) बीस सूत्री कार्यक्रम :–

इस कार्यक्रम की घोषणा 1975 में की गई थी जिसे सन् 1980, 1982, 1986 में संशोधित किया गया। इसे 1 अप्रैल, 1987 से नए रूप में लागू किया गया। इस कार्यक्रम के उद्‌देश्य इस प्रकार हैं :– गरीबी पर प्रहार, वर्षा पर आधारित खेती, अधिक उपज, सिंचाई का अधिक प्रयोग, भूमि सुधार लागू करना, ग्रामीण श्रमिकों के लिए विशेष कार्यक्रम, पीने का साफ जल, सभी के लिए स्वास्थ्य, दो बच्चों का आदर्श, शिक्षा का विस्तार, अनुसूचित जाति एवं जनजाति को न्याय, औरतों के लिए समानता, नवयुवकों के लिए नये अवसर, लोगों के लिए आवास, गन्दी बस्तियों का सुधार, वृक्षारोपण, पर्यावरण का संरक्षण, उपभोक्ता संरक्षण, गांवों के लिए ऊर्जा तथा उत्तरदायी प्रशासन शामिल है।

(9) जवाहर रोजगार योजना :–

भारत के गांवों में रहने वाले निर्धनों के लिए बड़े पैमाने पर रोजगार की व्यवस्था करने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री ने 28 अप्रैल 1989 को

संसद में एक योजना की घोषणा की जिसे जवाहर योजना कहते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य देश की प्रत्येक ग्राम पंचायत को प्रत्यक्ष रूप से वित्त प्रदान करना है जिससे अधिकांश निर्धनों के लिए अधिक से अधिक रोजगार की व्यवस्था की जा सके। अतः इसका लक्ष्य देश के प्रत्येक अथवा शत प्रतिशत पंचायतों को अपने अन्तर्गत लाना है।

(10) प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण विकास) :–

यह योजना वर्ष 2000 में शुरू की गई जिसके अन्तर्गत 200 करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान वर्ष 2001–02 के लिए रखा गया और 2001–02 में ग्रामीण विकास के लिए 126.34 करोड़ रू. प्रदान किए गये।

(11) समग्र आवास योजना :–

एक अप्रैल, 1999 में समग्र आवास योजना के नाम से एक नई योजना की शुरूआत की गई है। यह एक व्यापक आवास योजना है जिसका उद्देश्य आवास, स्वच्छता और पेयजल की समग्र व्यवस्था करना है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के सम्पूर्ण पर्यावरण के साथ–साथ लोगों की जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना है। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण गरीबों को, विशेषकर जो गरीबी रेखा से नीचे हैं, लाभान्वित किए जाने का प्रावधान है। वर्ष 1999–2000 और 2000–01 के दौरान एक कार्यक्रम के क्रियान्वन के लिए क्रमशः 2.67 करोड़ और 1.36 करोड़ रू. केन्द्र सरकार द्वारा विभिन्न राज्य सरकारों को उपलब्ध कराये गये।

(12) स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना :–

यह एक नई स्वरोजगार योजना है जिसे 01 अप्रैल, 1999 से लागू किया गया। इस योजना में पूर्व में चल रहे निम्नांकित हैं।

20 सूत्रीय कार्यक्रम 2006 में 65 है जिसका प्रबन्धन केन्द्र नोडल

मंत्रालयों द्वारा किया जाता है तथा मुख्य रूप से कार्यान्वयन राज्य सरकारों / केन्द्र शासित प्रदेशों के प्रशासकों द्वारा होता है। 20 सूत्रीय वस्तुओं को संलग्नक किया गया है। (संलग्नक–1) सन् 2010–11 के दौरान राज्यों कार्यान्वित वस्तुओं की मासिक निगरानी सूची संलग्न है[9]।

सूत्र सं. वस्तु सं. वस्तुओं / सूत्र का नाम

1 **गरीबी हटाओ**

(अ) ग्रामीण क्षेत्र :–

1– महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारण्टी अधिनियम (एम.जी. नरेगा) अन्तर्गत रोजगार

2– स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

3– पंचायतों के साथ भागीदारी में ग्रामीण व्यवस्था केन्द्र

4– स्वं सहायता समूह

(ब) शहरी क्षेत्र :–

5– स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना

2 **जनशक्ति (लोगों का अधिकार)**

6– स्थानीय स्व सरकार (पंचायतीराज तथा शहरी स्थानीय निकाय)

– कार्यों के हस्तान्तरण के लिए गतिविधि मानचित्र

– निधि प्रवाह

– कार्यकर्ताओं के लिए काम

7– त्वरित तथा सस्ता न्याय ग्राम न्यायालय तथा न्याय पंचायत

8— जिला योजना समितियाँ

3 किसान मित्र (किसानों को सहायता)

9— जल शेड विकास

10— किसानों को विपणन और ढांचागत सहायता

11— कृषि के लिए सिंचाई सुविधायें (तथा लघुगत सिंचाई सहित)

12— किसानों को ऋण

13— बंजर भूमि का वितरण

4 श्रमिक कल्याण —

14— कृषि एवं असंगठित श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा

15— न्यूनतम मजदूरी प्रवर्तन (फार्म श्रम सहित)

16— बाल श्रम की रोकथाम

17— महिला श्रम कल्याण

5 खाद्य सुरक्षा —

18— खाद्य सुरक्षा —

1. लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली

2. अत्योंदय अन्न योजना

3. भोजन की कमी वाले क्षेत्रों में अनाज बैंकों की स्थापना

6 सबके लिए आवास —

19— ग्रामीण आवास इन्दिरा आवास योजना

20— शहरी क्षेत्रों में एसईडब्ल्यू/एलआईजी मकान

7 **शुद्ध पेयजल –**

21– ग्रामीण क्षेत्र त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम

22– शहरी क्षेत्र त्वरित शहरी जल आपूर्ति कार्यक्रम

8 **जन–जन स्वास्थ्य –**

23– मुख्य बीमारियों का नियंत्रण तथा रोकथाम –

(क) एचआईवी/ एड्स

(ख) टी.बी.

(ग) मलेरिया

(घ) कुष्ठ रोग

(ङ) दृष्टिहीनता

24– राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन

25– बच्चों का टीकाकरण

26– स्वास्थ्य कार्यक्रम

(क) ग्रामीण क्षेत्र (ख) शहरी क्षेत्र

27– संस्थागत प्रसव

28– कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम

29– माताओं और बच्चों के लिए पूरक पोषण

30– दो बच्चों की नीति

9 **सबके लिए शिक्षा–**

31– सर्व शिक्षा अभियान

अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा

32— मिड डे मील योजना

10 **अजा, अजजा, अल्पसंख्यक एवं अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण—**

33— अनुसूचित परिवारों की सहायता

34— सफाई कर्मचारियों की सहायता

35— अनुसूचित जनजातियों की सहायता

36— वन में रहने वाले लोगों के अधिकार लघु वन के मालिक

37— विशेष रूप से कमजोर जनजाति समूह

38— जनजातीय भूमि का हस्तान्तरण नहीं

39— पंचायत कार्यान्वयन (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम

40— अल्पसंख्यकों के कल्याण

41— सभी अल्पसंख्यक समुदायों को व्यावसायिक शिक्षा

42— अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण

(क) शिक्षा (ख) रोजगार

11 **महिला कल्याण—**

43— महिला कल्याण के लिए वित्तीय सहायता

44— महिलाओं की भागीदारी में सुधार

(क) पंचायतों (ख) नगरपालिकाओं

(ग) राज्य विधानमण्डलों (घ) संसद

12		**बाल कल्याण–**
	45–	आईसीडीएस योजना को सार्वभौमिक करना
	46–	कार्यात्मक आंगनबाड़ी
13		**युवा विकास–**
	47–	ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र में सभी के लिए
	48–	राष्ट्रीय सदभावना योजना
	49–	राष्ट्रीय सेवा योजना
14		**बस्ती सुधार–**
	50–	सात सूत्रीय चार्टर के अन्तर्गत शहरी गरीबी परिवारों को सहायता की संख्या यानि भूमि कार्यकाल सस्ते दामों पर कमान, जल स्वच्छता, स्वास्थ्य, शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा
15		**पर्यावरण संरक्षण एवं वन वृद्धि–**
	51–	वनीकरण
		क–वृक्षारोपण के अन्तर्गत क्षेत्र–सार्वजनिक तथा वन भूमि
		ख –सीडलिंग की संख्या – सार्वजनिक और वन भूमि
	52–	नदियों में प्रदूषण की रोकथाम
	53–	ठोस तथा तरल अपशिष्टों का प्रबंधन
		(क) ग्रामीण क्षेत्र (ख) शहरी क्षेत्र
16		**सामाजिक सुरक्षा–**
	54–	विकलांगों तथा अनाथों का पुर्नवास
	55–	बुजुर्गों के लिए कल्याण

17 **ग्रामीण सड़क–**

56– ग्रामीण सड़क पीएमजीएसवाई

18 **ग्रामीण ऊर्जा–**

57– जैव ईंधन उत्पादन

58– राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना

59– अक्षय ऊर्जा

60– पंप सेटों का एनालाइज

61– विद्युत आपूर्ति

62– मिट्टी के तेल तथा एलपीजी की आपूर्ति

19 **पिछड़ा क्षेत्र विकास–**

63– पिछड़ा तेल अनुदान कोष

20 **ई–शासन–**

64– केन्द्र और राज्य सरकार

65– पंचायतों और नगरपालिकाओं

अनुलग्न–2

सन् 2010–11 के दौरान राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों के 20 सूत्रीय कार्यक्रम 2006 की योजनाओं/ कार्यक्रमों की मासिक निगरानी कार्यान्वयन[10]–

1. **महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना के अन्तर्गत रोजगार सृजन**

(सभी राज्यों तथा दिल्ली और चण्डीगढ़ को छोड़कर केन्द्रशासित प्रदेशों में)

2. **स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई)**

(सभी राज्यों तथा दिल्ली और चण्डीगढ़ को छोड़कर केन्द्रशासित प्रदेशों में)

3. **स्व. सहायता समूह**

(क) एसजीएसवाई के अन्तर्गत गठित स्व. सहायता समूह

(ख) एसजीएसवाई के अन्तर्गत

(सभी राज्यों तथा दिल्ली और चण्डीगढ़ को छोड़कर केन्द्रशासित प्रदेशों में)

4. **अपशिष्ट भूमि वितरण**

(हिमाचल प्रदेश को छोड़कर सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

5. **न्यूनतम मजदूरी परिवर्तन (फार्म श्रम सहित)**

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

6. **खाद्य सुरक्षा**

(क) एएवाद, एपीएल, बीपीएल के लिए लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली टीडीपीएस)

(ख) केवल अन्त्योंदय योजना के लिए पीडीएएस

(ग) केवल गरीबी रेखा के नीचे के लिए टीडीपीएस

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

7. **इंदिरा आवास योजना के लिए गामीण आवास**

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

8. **शहरी क्षेत्रों में ईडब्ल्यूएस/एलआईजी मकान**

(आन्ध्रप्रदेश, असम, बिहार, दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, मिजोरम, नागालैण्ड, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा,

उत्तराखण्ड, उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा चण्डीगढ़ राज्यों में)

9. **ग्रामीण क्षेत्र त्वरित ग्रमीण जल आपूर्ति कार्यक्रम**

(दिल्ली, गोवा, पाण्डिचेरी, अण्डमान और निकोबार, चण्डीगढ़, दादर और नागर हवेली, दमन और द्वीप, लक्षदीप को छोड़कर सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

10. **ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता कार्यक्रम**

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

11. **संस्थागत प्रसव**

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

12. **अनुसूचित जाति के परिवारों को सहायता**

(अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड, अण्डमाान और निकोबार द्वीप समूह, दादर और नागर हवेली, दमन और द्वीप तथा लक्षद्वीप को छोड़कर सभी राज्यों राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

13. **आईसीडीएस योजना को सार्वभौमिक करना**

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

14. **कार्यात्मक आंगनबाड़ी**

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

15. **सात सूत्रीय चार्टर के अन्तर्गत शहरी गरीबी परिवारों को सहायता की संख्या यानि भूमि कार्यकाल, सस्ते दामों पर मकान , जल, स्वच्छता, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा सामाजिक सुरक्षा –**

(आन्ध्रप्रदेश, असम, बिहार, दिल्ली, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, मिजोरम, नागालैण्ड, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तराखण्ड,

उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा चण्डीगढ़ राज्यों में)

16. **वनरोपण –**

(क) सार्वजनिक तथा वन भूमि पर बागान के अन्तर्गत शामिल क्षेत्रों बिजली की आपूर्ति

(ख) सार्वजनिक वन तथा भूमि पर लगाई पौधों की संख्या

(सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में)

17. **प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना के अन्तर्गत निर्माण की गई ग्रामीण सड़कें**

(सभी राज्यों तथा दिल्ली को छोड़कर केन्द्रशासित प्रदेशों में)

18. **राजीव गाँधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना के अन्तर्गत बिजली दिए गए गांव–**

(अरूणाचल प्रदेश, असम, बिहार, दिल्ली, छत्तीसगढ़, हिमाचल, जम्मू और कश्मीर, झारखण्ड, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड, ओड़िशा, राजस्थान, सिक्किम, त्रिपुरा और पश्चिम बंगाल राज्यों में)

19. **अर्जित किए गए पम्पसैट –**

(आन्ध्रप्रदेश, छत्तीसगढ़, गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, ओड़िशा, पाण्डिचेरी, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तराखण्ड, उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल, दमन और दीप राज्यों में)

20. **बिजली की आपूर्ति –**

(सभी राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में)

संदर्भ –

(1) नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली, 27 जून 1975, पृष्ठ संख्या–1

(2) नेशनल हेराल्ड, लखनऊ, 2 जुलाई 1975, पृष्ठ संख्या–1

(3) मुक्ति संघर्ष, नई दिल्ली, 10 सितम्बर 1975, पृष्ठ संख्या–13

(4) मुक्ति संघर्ष, नई दिल्ली, 17 अगस्त 1975, पृष्ठ संख्या–5

(5) आर.पी. सिंह लखनऊ के साक्षात्कार पर आधारित।

(6) आलोक जी के साक्षात्कार पर आधारित।

(7) राम बहादुर सक्सैना के साक्षात्कार पर आधारित।

(8) अग्रवाल डॉ. अमित 'भारत के ग्रामीण समाज', विवेक प्रकाशन, 2009 जवाहर नगर, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–205

(9) सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय 15 सितम्बर 2011

(10) तत्रैव

अध्याय तृतीय

आपातकाल के दौरान गैर कांग्रेसी राजनीतिक दलों की स्थिति की विवेचना

अध्याय–तृतीय

आपातकाल के दौरान गैर–कांग्रेसी राजनीतिक दलों की स्थिति की विवेचना

आपातकाल की घोषणा के साथ ही विपक्षी दलों के नताओं की गिरफ्तारियाँ शुरू कर दी गई सुबह होने पर लोगों को पता चला कि लोकतंत्र का गला घोंटकर देश में इंदिरा सरकार ने ''आपातकाल'' की घोषणा कर दी है। दूरभाष से पूर्व सूचना देकर दिल्ली में नानाजी देशमुख, श्री जगदीश प्रसाद माथुर प्रभृति शीर्षस्थ नेताओं को सजग कर दिया गया था ताकि वे आन्दोलन का नेतृत्व कर सकें। आपातस्थिति की अचानक घोषणा से देश में आतंक का वातावरण फैल गया क्योंकि गिरफ्तारी के बाद न उसके विरोध में अपील हो सकती थी, न वकील न अदालत में दलील पेश करने की गुंजाईश रखी गई थी। अपने घरों से फरार रहे और गिरफ्तार कार्यकर्ताओं के परिवारों को भी प्रताड़ित करने में कोई कसर नहीं उठा रखी गई। जेलों में कैद कार्यकर्ताओं को अकथनीय यातनाऐं दी गईं। पचासों उदाहरण देश की जेलों में उन दिनों संघ के ही कार्यकर्ताओं, छात्रों तथा विपक्षी दलों के बंदियों के जीवन में घटित हुए। अनेक तो यातनाऐं झेलते–झेलते ही जेलों में ही शहीद हो गये।

इस प्रसंग में लखनऊ के स्वयंसेवक चन्द्रशेखर के परिवारों के कष्टों तथा दुःखों की याद ताजा हो आती है। उनके घर पर छापा मारकर पुलिस द्वारा एक दिन उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और वे लम्बे समय तक जेल में ही सड़ते रहे। यातनाऐं सहते रहे। उनका परिवार अतीत दुःखी और व्यग्र हो उठा। वे रेलवे में कार्यरत थे और एकमात्र वहीं परिवार के पालन पोषणकर्ता थे अब राशन कौन कहाँ से कौन लाये। उनके जेल जाने से यह संकट आ खड़ा हुआ। दिल्ली में नवम्बर 1975 तक 2500 सत्याग्रही जेल में पहुँच गये थे। दिल्ली से प्रति सप्ताह आन्दोलन की गतिविधियों के बारे में 'जनवाणी' नामक पत्रिका प्रकाशित होती थी जिसकी

प्रसार संख्या 50000 तक हो गई थी। पंजाब में 'शिरोमणी अकाली दल' ने इस आन्दोलन में आकर सन 1975 की 25 जून से लेकर आपातस्थिति की समाप्ति तक अपने लोगों की 45000 से अधिक संख्या में गिरफ्तारियाँ देकर जेले भर दीं। जैल सिंह और इसी आन्दोलन में अकाली दल के दो सत्याग्रहियों सरदार प्रेमसिंह तथा सरदार फौरसिंह ने जेल में ही भीषण यातनाऐं झेलते–झेलते लोकतंत्र की बहाली के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये। अकाली दल के महासचिव सरदार जसवंत सिंह बरार ने 75 सत्याग्रहियों जत्थों के साथ 16 सितम्बर 1976 को और अमृतसर में अकाली दल के प्रधान जत्थेदार मोहन सिंह तुड़ ने 175 सत्याग्रहियाँ सहित गिरफ्तारी दी।

मध्य प्रदेश में जनसंघ के हजारों कार्यकर्ताओं को जेलों में ठूंस दिया गया। पांच हजार से अधिक कार्यकर्ता जेलों बंद थे। अन्य किसी दल के इतने लोग बंदी नहीं बनाये गये। पुलिस ने जेल में बंद उन कार्यकर्ताओ पर भीषण अत्याचार किये।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का पूर्व दमनः–

आपातकाल में अगर किसी एक संगठन का सबसे अधिक दमन हुआ तो वह था राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, संघ के स्वयंसेवक कार्यकर्ता और प्रचारक गिरफ्तार किए गए। पुलिस ने गिरफ्तार करने में उम्र का भी ख्याल नहीं रखा। आपातकाल के दौरान गिरफ्तार और प्रताड़ित होने के लिए स्वयंसेवक का विरोध कर रहे 90 फीसदी लोग किसी न किसी तरह से संघ से जुड़े थे। वाराणसी के बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्रसंघ पर उस समय अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद का कब्जा था। पुलिस ने आपातकाल की घोषणा होते ही पंडित मदन मोहन मालवीय ने आरएसएस को लॉ कॉलेज के परिसर में दो कमरों का एक भवन कार्यालय के लिए दिया था पर प्रशासन ने उसे एक ही रात में बुलडोजर चला कर ध्वस्त करा दिया।

आपातकाल के विरूद्ध राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने जन आंदोलन को सफल

बनाने के लिए बहुत बड़ी भूमिका निभाई। 14 नवम्बर 1975 से 14 जनवरी 1976 तक पूरे देश में हजारों स्थानों पर सत्याग्रह हुए जिसमें 1,54,860 सत्याग्रही शामिल हुए। इन सत्याग्रहियों में 80,000 संघ के स्वयंसेवकों का समावेश था। सत्याग्रह के दौरान कुल 44,963 संघ से जुड़े लोगों को गिरफ्तार किया गया जिनमें से 35,310 स्वयंसेवक थे।

विपक्ष की आवाज बंद :—

आपातकाल की घोषणा हुई और जो कहने के पूर्व सभी विरोधी दलों (सी.पी.आई. को छोड़कर) के नेताओं को जेलों में ठूंस दिया गया। न उम्र का लिहाज रखा गया न स्वास्थ्य का 120 से अधिक बड़े नेताओं की गिरफ्तारी हुई जिनमें जयप्रकाश नारायण, विजयाराजे सिंधिया, राजनारायण, मोरारजी देसाई, चरण सिंह, कृपलानी, अटल बिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी, सत्येन्द्र नारायण, जार्ज फर्नाडिश, मधु लिमये ज्योति बसु, सुमर गुहा, चन्द्रशेखर, बाला साहेब देवरस और बड़ी संख्या मे सांसद, विधायक शामिल थे। राष्ट्रीय स्तर के नेता, आंतकवादियों की तरह रात के अंधेरे में घर से उठा लिए गए और मीसा के तहत अनजाने स्थान पर कैद कर लिए गए।

आपातकाल की घोषणा के साथ ही भारतीय राजनीति में नये युग का श्री गणेश हुआ। देश के प्रमुख विपक्षी नेताओं और इन दलों के सक्रिय कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। आन्तरिक सुरक्षा कानून और सेंसरशिप लागू कर दी गई। आपातकाल के दौरान विपक्षी पार्टी के नेताओं पर जो अत्याचार हुए इतिहास के काले पन्ने को आज भी याद किया जाता है। आपातकाल पर समय—समय पर विभिन्न लेख प्रकाशित होते हैं जिनमें विपक्षी पार्टी के नेताओं के साथ जो व्यवहार कांग्रेस पार्टी द्वारा किया। उसका विस्तार से वर्णन किया गया है जो निम्न प्रकार है :—

1. **झुक नही सकते :–**

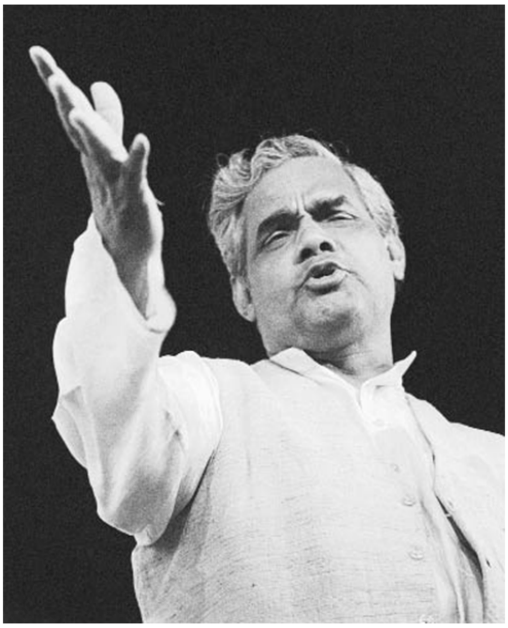

टूट सकते हैं मगर हम झुक
नहीं सकते।
सत्य का संघर्ष सत्ता से,
न्याय लड़ता है निरंकुशता से,
अंधेरे ने दी चुनौती है,
किरण अंतिम अस्त होती है।
दीप निष्ठा का लिये निष्कम्प,
वज्र टूटे या उठे भूकंप,
यह बराबर का नहीं है युद्ध,
हम निहत्थे, शत्रु हैं सन्नुद्ध,
हर तरह के शस्त्र से हैं सज्ज,

और पशुबल हो उठा निर्लज्ज।
किन्तु फिर भी जूझने का प्रण,
पुनः अंगद ने बढ़ाया चरण,
प्राण–प्राण से करेंगे प्रतिकार,
सर्म्पूण की मांग अस्वीकार।
दांव पर सब कुछ लगा है, रूक न
हीं सकते।
टूट सकते हैं मगर हम झुक
नहीं सकते।

अटल बिहारी बाजयपेयी[1]

(आपातकाल के दौरान जेल में रहते हुए लिखी कविता)

2. तीन दिन नहीं दिया भाई को खाना :—

आपातकाल लागू होने के बाद पुलिस ने जब ज्यादती करना शुरू कर दिया तो सत्याग्रह होने लगे। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता खेमचन्द्र की गिरफ्तारी के लिए पुलिस उनके पीछे पड़ी थी। दरियावजगंज निवासी खेमजी जब नहीं मिले, तो उनके भाई लक्ष्मण सिंह को उठा लिया। खेमजी का पता पूछने के लिए भाई को न सोने दिया और न ही भोजन दिया। परिवार की यह हालत देख खेमचन्द ने सत्याग्रह की तिथि की घोषणा कर दी और 7 जुलाई 1975 को उनकी गिरफ्तारी हो गई। इसी तरह पुलिस ने विश्व हिन्दू परिषद् के शीर्ष नेता स्व. आचार्य गिरिराज किशोर की गिरफ्तारी के लिए उनके परिजनों पर दबाव बनाया, लेकिन आचार्य पर इसका कोई फर्क नहीं पड़ा और उन्होंने कह दिया कि मेरे लिए देश महत्वपूर्ण है। आचार्य ने अपने लेखों में इन बातों का उल्लेख किया है। आपातकाल से जूझने वाले लोगों को अब पेंशन भी नहीं मिल रही है जो दर्द उन्होंने झेला,

उसकी भरपाई अब कई प्रान्तों की सरकारें कर रही है। मीसा बंदियों में से अधिकांश इस दुनिया में नहीं है, मगर उनकी यादें अमिट हैं।[2]

3. अपराधियों जैसा बर्ताव करता था प्रशासन :—

वयोवृद्ध भाजपा नेता गेंदालाल गुप्ता बताते हैं कि जो लोग जेल चले गए, उनके परिजन पुलिस उत्पीड़न से मुक्त रहते थे। जो भूमिगत थे। उनके परिवारों में आए दिन दबिशें पड़ती थीं। पुलिस लोकतंत्र के प्रहरियों से शातिर अपराधी की तरह व्यवहार करती थीं। उन्होने कहा कि जेल में चूंकि मीसा बंदियों की तादाद ज्यादा थी, इस कारण जेल प्रशासन कभी उलझने की नहीं सोचता था। जेल के अंदर रहने वालों का सबसे बड़ा दर्द यह था कि वे अपने परिवार से दूर थे। अखबारों में दमन की खबरें ही ज्यादा आती थीं जिन पर खूब चर्चा होती थी। जेल के अंदर जब यह खबरें पहुंचती थीं कि बंदी लोगों के साथियों को पकड़ने के लिए पुलिस परिवारजनों पर दबाव बना रही है तो खून खौल उठता था, लेकिन हम सब विवश थे।[3]

4. अपनों ने ढाए थे अंग्रेजों जैसे जुल्म :—

आपातकाल का नाम सुनते ही प्रसिद्ध कवि देवकीनन्दन कुम्हेरिया की बूढ़ी आँखों में लाल डोरे पड़ गये। उन्होंने बताया कि अपने ही देश के सिपाहियों ने बेदर्द तरीके से बंदूकों की बटों और लाठी डण्डों से पिटाई करते हुए सड़कों पर घुमाया। जेल में प्रताड़ित किया गया। डॉ. फूलचन्द जैन बताते हैं कि नारेबाजी करते हुए थाने पहुँचे, तो पुलिस वाले डंडें से पीटते हुए दानघाटी मंदिर तक लाए और वहाँ से थाने तक ले गये। फिर करीब तीन घंटे तक थाने मे पिटाई की गई। उन्होंने मुझे मरणासन्न स्थिति में पहुंचा दिया। नेमीचन्द अग्रवाल बताते हैं कि जितने नारे लगाए, उतने ही डंडे पड़े। महीनों तक शरीर के अंगों ने काम करना छोड़ दिया। पिटाई के वक्त लगा कि मुश्किल ही बच पायेंगे। परन्तु बात अपनी मातृभूमि को अपने ही लोगों से बचाने की थी, सो उत्साह ने दामन नहीं छोड़ा।[4]

5. जेल जाने के डर से बने टीबी मरीज :–

सुरीर के 84 वर्षीय आरएसस कार्यकर्ता बृजकिशोर वार्ष्णेय ने इमरजेंसी की काली यादें ताजा करते हुए बताया कि इमरजेंसी के दौरान पुलिस तरह–तरह की यातना दे रही थी। उन्हें पकड़ने के लिए पुलिस घूम रहीं थी, कई बार घर पर दबिश दी। इससे बचने के लिए टीबी सेनेटियम अस्पताल वृन्दावन में जाकर भर्ती हो गए थे। यहाँ पर छह माह तक मरीज के रूप में पड़े रहे।[5]

6. पेंशन कम, और सुविधायें मिलें : चौधरी योगेन्द्र :–

नोहझीलः आपातकाल के दौरान जेल में रहे गांव मुसमुना निवासी चौ. योगेन्द्र सिंह ने बताया कि आपातकाल की घोषणा होते ही वह खुद भगत भकरेलिया निवासी चौ. चतुर सिंह के नेतृत्व में चौ. लटूर सिंह फिरोजपुर, चौ. हुकम सिंह सीगोनी, वंशो सिंह मुसमुना के साथ प्रदर्शन के लिए नोहझील आये। यहाँ पर उन्हें गिरफ्तार कर मथुरा जेल भेज दिया। वह मुलायम सिंह द्वारा लोकतंत्र सेनानी का दर्जा दिए जाने से खुश तो हैं, परन्तु अन्य प्रान्तों के मुकाबले मिल रही कम पेंशन से आहत भी हैं। बताया कि उ.प्र. में मिल रही 12 हजार रू. पेंशन के मुकाबले राजस्थान में करीब 15 हजार, बिहार में 17 हजार तथा मध्यप्रदेश में करीब 20 हजार रू. मिल रहे हैं। वह चाहते हैं कि केन्द्र सरकार भी उन्हें लोकतंत्र सेनानी का दर्जा प्रदान करें। वह चाहते हैं केन्द्र सरकार भी उन्हें लोकतंत्र सेनानी का दर्जा प्रदान करे। बस की तरह रेल यात्रा में भी एक सहायक के साथ यात्रा करने की सुविधा मिले।[6]

7. किताबों ने कही कहानी :–

कतरा बी आरजू – लेखक राही मासूम रजा ने अपनी इस पुस्तक के माध्यम से आपातकाल की आलोचना की है।

मिडनाइटस चिल्ड्रन – बुकर पुरस्कार से सम्मानित लेखक सलमान रूश्दी के इस

चर्चित उपन्यास का एक नायक सलीम सिनाई नाम का एक व्यक्ति है। आपातकाल के दौरान किसी प्रकार वह सरकारी योजनाओं से प्रभावित होता है। उपन्यास में इसका जिक्र है।

अ फाइन बैलेस व सच अ लोंग जर्नी – रोहिंटन मिस्त्री ने अपनी पुस्तकों में आपातकाल पर लोगों के ऊपर हुये ज्यादतियों का किस्सा बयां किया है। पुस्तक पारसी संस्कृति के नजरिये से लिखी गई है।

इंडिया अ टूडेड सिविलाईजेशन – वीएस नायपॉल की यह पुस्तक आपातकाल के दौरान देश का हाल बयां करती हैं।[7]

8. आपातकाल की देन है जम्मू कश्मीर में छह साल की विधानसभा :– इंदिरा के कानून की धारा में बह गई जम्मू कश्मीर विधानसभा।

जागरण ब्यूरो श्रीनगर : जम्मू–कश्मीर की विधानसभा का कार्यकाल छह साल का है, लेकिन यह अवधि राज्य की विधान सभा ने तय नहीं की है। यह अवधि आपातकाल की देन है। कश्मीर के वरिष्ठ राजनीतिक विशेषज्ञ ताहिर मोहिउद्दीन ने बताया कि जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देश में आपातकाल लागू किया था तो जम्मू कश्मीर भी उसके दायरे में आ गया, लेकिन यहाँ जेपी आंदोलन का असर कोई खास नहीं था। उन्होंने कहा कि जम्मू संभाग में जहां जनसंघ और सोशलिस्ट पार्टी से जुड़े लोगो का जनाधार था, उन्हें खूब भुगतना पड़ा, लेकिन कश्मीर में न जनसंघ था, न जनता पार्टी से जुड़े लोगों का आधार। यहाँ सिर्फ आवामी एक्शन पार्टी व जमायत ए इस्लामी था। नेशनल कांफ्रेन्स और कांग्रेस भी थी, लेकिन दोनों सत्ता में थी। उनके अनुसार , आपातकाल ने जम्मू–कश्मीर को देश के अन्य हिस्सों से सियासी व संवैधानिक तौर पर अलग करने में अहम भूमिका अदा की। आज भी बहुत से लोग यह मानते हैं कि हमारी विधानसभा का कार्यकाल छह साल का सिर्फ अलग संविधान और धारा 370 के कारण है, लेकिन यह आधा सच है। उन्होंने कहा कि आपातकाल के दौरान ही

इंदिरा गाँधी ने छह साल की विधानसभा और संसद का कानून लाया था। हमारे राज्य में उस समय कांग्रेस की मदद से शेख मुहम्मद अब्दुल्ला की सरकार चल रही थी। शेख अब्दुल्ला ने यह कहकर कि हम पूरे देश के साथ चलना चाहते हैं, सन् 1977 में राज्य विधानसभा में संशोधन प्रस्ताव लाया और उसके बाद से अब तक यहाँ छह साल की विधानसभा है। ताहिर मोहिउद्दीन ने कहा कि इंदिरा गाँधी के सत्ता से बाहर होने पर जनता पार्टी उनके उनके फैसलों को बदला, लेकिन जम्मू कश्मीर में यह संभव नहीं हो पाया, क्योंकि यहाँ राज्य विधानसभा की मंजूरी जरूरी होती है और उस समय शेख अब्दुल्ला पूरी तरह ताकतवर हो चुके थे।[8]

9. तराश मंदिर में रूके थे नानाजी देशमुख :–

वृन्दावन :आपातकाल की यातना सहने वाले तत्कालीन चेयरमैन रहे मगनलाल शर्मा के पुत्र पं. उदयन शर्मा बताते हैं कि बाबू जी अपने करीबी कांग्रेस नेता डॉ. शिवशंकर उपाध्याय के घर छिपे थे, एक रात करीब 12 बजे इन्स्पेक्टर उनके घर पहुँचे और पिताजी से कहा कि उन्हें जिलाधिकारी ने याद किया है। यह सुनते ही पिता मगनलाल समझ गये कि जेल जाना है। इमरजेंसी के दौरान जनसंघ के नेता नानाजी देशमुख काफी दिनों तक उनके तराश मंदिर स्थित आवास पर भूमिगत रहे।[9]

10. कोतवाली में नोंचे गये बाल और नाखून :–

आपातकाल के दौरान पुलिस से लेकर जेल तक में लोगों को यातनाएँ दी गई जो पकड़ में नहीं आए, उनके परिजनों पर जुल्म ढाए गए। कोतवाली में तो कई सत्याग्रिहों के नाखून और बाल तक नोंचे गये थे।

आपातकाल के दौरान रामबाबू भाटिया कई स्थानों पर छिपते रहे। पीछे से उनके घर की कुर्की हो गई। इसके बाद उनकी भाटिया वाच कम्पनी की दुकान की कुर्की हो गई। तब पुलिस इस दुकान से 12 टन घड़ियों का माल ले गई थी।

बड़ा बेटा नहीं मिला, तो छोटे को ले गये। बमुश्किल स्कूल के प्रिंसीपल ने यह कहकर उसे छुड़वाया कि ये बच्चा तो स्कूल में था। उनकी पत्नी आत्मादेवी ने सत्याग्रहियों का माला पहनाकर स्वागत किया था, तो उन्हीं भी पुलिस ने बहुत परेशान किया। आखिर 31 जुलाई 1975 को उन्होंने अदालत में समर्पण किया। आठ अगस्त को जेलर ने उन्हें तन्हाई में डाल दिया। इस बैरक में उन्हें 22 घंटे कैद रखा जाता था। वर्तमान हालात पर श्री भाटिया बताते हैं कि प्रदेश सरकार कोई अकेले पेंशन नहीं दे रही है, सभी प्रदेशों की सरकारें लोकतंत्र सेनानियों को पेंशन देती है। डी.आइ.आर. में निरूद्ध पूर्व नगर पालिका अध्यक्ष वीरेन्द्र अग्रवाल बताते हैं कि इमरजेंसी के दौरान वह शांति मार्केट में बैठे थे, तभी पुनैठा नाम का दरोगा आया और उन्हें कोतवाली ले जाकर विभिन्न धाराओं में पाबन्द कर जेल भेज दिया। कई लोकतंत्र सेनानियों के कोतवाली में नाखून और सिर के बाल तक नोचे गये। जेल में शाम को खाना खाने के दौरान यह गीत रोजाना गाया जाता था –

देश प्रेम का मूल्य प्राण है, देख कौन चुकाता है।

देखें कौन सुमन सैया तक कंटक पथ अपनाता है।

संबल मोह–ममता को तज कर माता जिसको प्यारी है।

शत्रु को हिय छेदने हेतु जिसकी तेज कटारी हो।

वही वीर अब बढ़े जिसमें हँस–हँस कर बढ़ना आता हो।[10]

11. इस एक्ट में रहे बन्द :–

आपातकाल का विरोध मेन्टिनेन्स ऑफ इंटरनल सिक्योरिटी एक्ट (मीसा) और डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स यानि डीआईआर के तहत जेलों में बंद रहे थे। ऐसे नेताओं में ज्यादातर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और जनसंघ से जुड़े थे।[11]

12. फैसले को चुनौती :–

इन्दिरा गाँधी ने फैसले के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी। 24

जून, 1975 को जस्टिस आर. कृष्णा अय्यर ने हाईकोर्ट ने निर्णय को बरकरार रखते हुए इंदिरा गाँधी को सांसद के रूप में मिल रही सभी सुविधाओं से वंचित कर दिया। उन्होंने संसद में वोट देने से वंचित कर दिया गया लेकिन उनको प्रधानमंत्री बने रहने की अनुमति मिल गई। अगले दिन जयप्रकाश नारायण ने दिल्ली में बड़ी रैली आयोजित की। उसमें उन्होंने कहा कि पुलिस अधिकारियों को सरकार के अनैतिक आदेशों को मानने से इंकार कर देना चाहिए। उनको यह बयान को देश के भीतर अशांति भड़काने के रूप में देखा गया।[12]

13. आपातकाल का असर –

20 सूत्री कार्यक्रम – इसके बाद इन्दिरा गाँधी ने कृषि, औद्योगिक उत्पादन, जन सुविधाओं के सुधार, गरीबी और अशिक्षा से लड़ने के लिए 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम घोषित हुये।

गिरफ्तारियाँ – अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल लागू होने के बाद इंदिरा गाँधी को असाधारण शक्तियां मिल गईं। विपक्षी नेताओं जयप्रकाश नारायण, लालकृष्ण आडवाणी, चरण सिंह, मोरारजी देसाई, राजनारायण के अलावा

सैकड़ो नेताओं, कार्यकर्ताओं को मीसा एक्ट (मेंटीनेंस ऑफ इटरनल सिक्योरिटी एक्ट) के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। तमिलनाडु में एम करूणानिधि सरकार को बर्खास्त कर दिया गया। कई राजनीतिक दलों को प्रतिबंधित कर दिया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे संगठनों को प्रतिबंधित कर दिया गया।

मीसा 1971 में पारित एक विवादित कानून था उसमें सुरक्षा एजेन्सियों को असीमित शक्तियाँ मिली थीं। इसके तहत बिना वारंट के लोगों को गिरफ्तार कर अनिश्चितकालीन तक जेलों में रखा जाता था।

नसबंदी कार्यक्रम – बढ़ती जनसंख्या को रोकने के लिए परिवार नियोजन कार्यक्रम शुरू किया गया था। उसमें नसबंदी कार्यक्रम वैसे तो स्वैच्छिक था लेकिन कहा जाता है कि इसको जबरिया लागू करते हुए उनके अविवाहित लोगों को भी इसके लिए मजबूर किया गया। इस कार्यक्रम में संजय गांधी की भूमिका मानी जाती है।

प्रेस – सबसे ज्यादा मीडिया की आजादी पर अंकुश लगाया गया। सेंसरशिप लागू कर दी गई। इस पर अंकुश लगाने के लिए इंदिरा गाँधी ने इन्द्र कुमार गुजराल को हटाकर विधाचरण शुक्ल को सूचना प्रसारण मंत्री बनाया।

कानून में परिवर्तन – इंदिरा गाँधी को संसद में दो तिहाई बहुमत था। उन्होंने कई कानूनों को बदल दिया। संविधान में संशोधन कर दिया गया। 42वें संविधान संशोधन उसी दौर में किया गया।

1977 के चुनाव – 18 जनवरी 1977 को इंदिरा गाँधी ने नए चुनाव की घोषणा करते हुए सभी राजनीतिक कैदियों को रिहा कर दिया। 23 मार्च को आधिकारिक रूप से आपातकाल समाप्ति की घोषणा की गई। मार्च में हुए लोकसभा चुनाव में इंदिरा गांधी और संजय गाँधी दोनों ही चुनाव हार गए।

बिहार और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों से कांग्रेस का खाता तक नहीं खुला। मोरार जी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी भारी बहुमत से जीतकर सत्ता में आई।[13]

14. **संघ में तेज उत्थान :–**

संघ में उनकी कुशल कार्यशैली से प्रभावित होकर लक्ष्मणराव देशमुख ने जुलाई 1975 में उन्हें गुजरात लोक संघर्ष समिति का महासचिव बना दिया। इसके पहले ही मोदी ने सगठन में हर स्तर पर न सिर्फ अपनी जरूरत का अहसास करवा दिया था, बल्कि संगठन के हर काम में वे खुद शामिल रहते थे। जून में ही इंदिरा गाँधी ने देश में आपातकाल लागू किया था और गुजरात में इसके विरोध में हो रहे आंदोलन से संघ जुड़ा ही था। इस दौरान मोदी के कामों का नतीजा था कि संघ में उनका तेजी से उत्थान हुआ।

आपातकाल व 'राज्य के शत्रु' – आपातकाल के दौरान गुजरात में संघ के सभी बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया था। मोदी को हेडगेवार भवन का कनिष्ठ कर्मचारी मान छोड़ दिया गया। मगर भूमिगत आंदोलन को न सिर्फ संगठित किया, बल्कि मीडिया पर पाबंदी के बावजूद इस सरकारी अतिरेक से जुड़ी खबरें, पर्चों के रूप में देश ही नहीं विदेश भिजवाने का भी प्रबंध किया। कार्यकर्ताओं के लिए सुरक्षित ठिकाने और पैसे जुगाड़े। उस वक्त सरकार ने विरोध करने वाले लोगों को राज्य का शत्रु करार दिया।[14]

15. **आपातकाल के लिए इंदिरा नहीं जिम्मेदार :–**

कांग्रेस के वरिष्ठ नेता माखनलाल फोतेदार का मानना है कि सन् 1975 में आपातकाल लगाने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी जिम्मेदार नहीं थीं। इस कार्य के लिए तब के पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री सिद्धार्थ शंकर राय ने उकसाया। उनसे संवाददाता अजीत मैंदोला की बातचीत हुई, पेश है इस बातचीत

के प्रमुख अंश –

40 साल पहले तब की प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने इमरजेंसी लगाई थी। उसके पीछे क्या वजह थी?

मैं पहले यह बात साफ कर देना चाहता हूँ कि इंदिरा गाँधी इमरजेंसी के लिए जिम्मेदार नहीं थी। यह अलग बात है कि उन्होंने ही इसकी घोषणा की। फिर सब कुछ उनके ऊपर डाल दिया गया। सच तो यह है कि सिद्धार्थ शंकर राय जैसे नेताओं ने उनके सामने इमरजेंसी का माहौल बनाया। इंदिरा गाँधी के चुनाव पर इलाहाबाद हाईकोर्ट के एक फैसले के बाद ऐसा माहौल बनाया गया कि उन्हें इमरजेंसी लगानी पड़ी। फिर माहौल ऐसा बनाया गया कि इंदिरा गाँधी ही पूरी तरह से जिम्मेदार है।

क्या उस समय इमरजेंसी लगाने के हालात थे?

नहीं, ऐसे कोई हालात नहीं थे। सब कुछ ठीक–ठाक चल रहा था। जैसे

मैंने पहले कहा कि सिद्धार्थ शंकरराय ने गाँधी को कठोर कदम उठाने की सलाह दी। उसमें एक इमरजेंसी का भी सुझाव था। इंदिरा गाँधी ने सहयोगियों से बातचीत की लेकिन उनके मन में सिद्धार्थ शंकर राय की बात बैठ गई।

आप कह रहे हैं कि गाँधी परिवार इमरजेंसी के लिए कतई जिम्मेदार नहीं था। संजय गाँधी की भी कोंई भूमिका नहीं थी?

मुझे जो कहना था कह दिया है लेकिन आप एक बात नहीं देख रहे है। जनता ने ढ़ाई साल बाद ही कांग्रेस को फिर से सत्ता में बिठाया था। यह सब गाँधी परिवार की वजह से ही हुआ था क्योंकि जनता गांधी परिवार को प्यार करती थी। इंदिरा गाँधी के पीछे जनता पागल थी। दो साल में ही गैर कांग्रेस सरकार एक्सपोज हो गई थी। भानुमति का ऐसा कुनबा था जो एक ही झटके में तार–तार हो गया। फिर इंदिरा गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार बनी। जनता ने भारी बहुमत को लेकर जनता में रोष होता तो कभी भी कांग्रेस की वापिसी नहीं होती। लेकिन, जनता ने आपातकाल को लेकर कांग्रेस को तुरन्त माफ कर दिया था। उसके बाद कांग्रेस आगे बढ़ती गई। विपक्ष बिना मतलब के आपातकाल को लेकर ही हल्ला मचाता है।

आपको लगता है कि कभी फिर से देश में आपातकाल लग सकता है?

मैं दूसरे दलों के बारे में तो नहीं बता सकता। लेकिन, कांग्रेस की तरफ से फिर कभी आपातकाल नहीं लगाया जाएगा। मुझे पूरी उम्मीद है कि कांग्रेस सत्ता में रहते कभी भी इमरजेंसी जैसा कदम फिर नहीं उठाएगी।[15]

16. कृषि पर कर के पक्ष में थीं इंदिरा :–

इंदिरा ने सन् 1975 में कृषि से होने वाली आय तथा अमीर ग्रामीणों पर कर लगाने के पक्ष में विचार जताए थे। बेंगलूरू में इन्स्टीट्यूट फॉर सोशल एण्ड

इकोनॉमिक चेंज को संबोधित करते हुए उन्होंने राज्यों से कहा था कि वे गांव के अमीरों व कृषि से होने वाली आय पर कर लगाने से रोकने वाली बाध्यताओं को खत्म करें। सिंचाई के लिए पानी व बिजली पर सब्सिडी को उन्होंने गलत बताया था।[16]

17. भाजपा ने मनाया काला दिवस :–

भरतपुर– भाजपा मीसा के 40 वर्ष पूर्ण होने पर 25 जून को काला दिवस मनाया। पार्टी के महामंत्री शिवराज सिंह के अनुसार यह निर्णय बैठक में किया गया। बैठक में आगामी निकाय चुनावों के बारे में भी चर्चा की गई। बैठक में प्रदेश उपाध्यक्ष भजनलाल शर्मा, विधायक विजय बंसल, किसान मोर्चा के प्रदेश उपाध्यक्ष जवाहर बेढ़म, जिला अध्यक्ष भानुप्रताप सिंह तथा मोहन रारह आदि मौजूद थें[17]

18. आग गई वह काली रात – पहले घोषणा, बाद में हस्ताक्षर :–

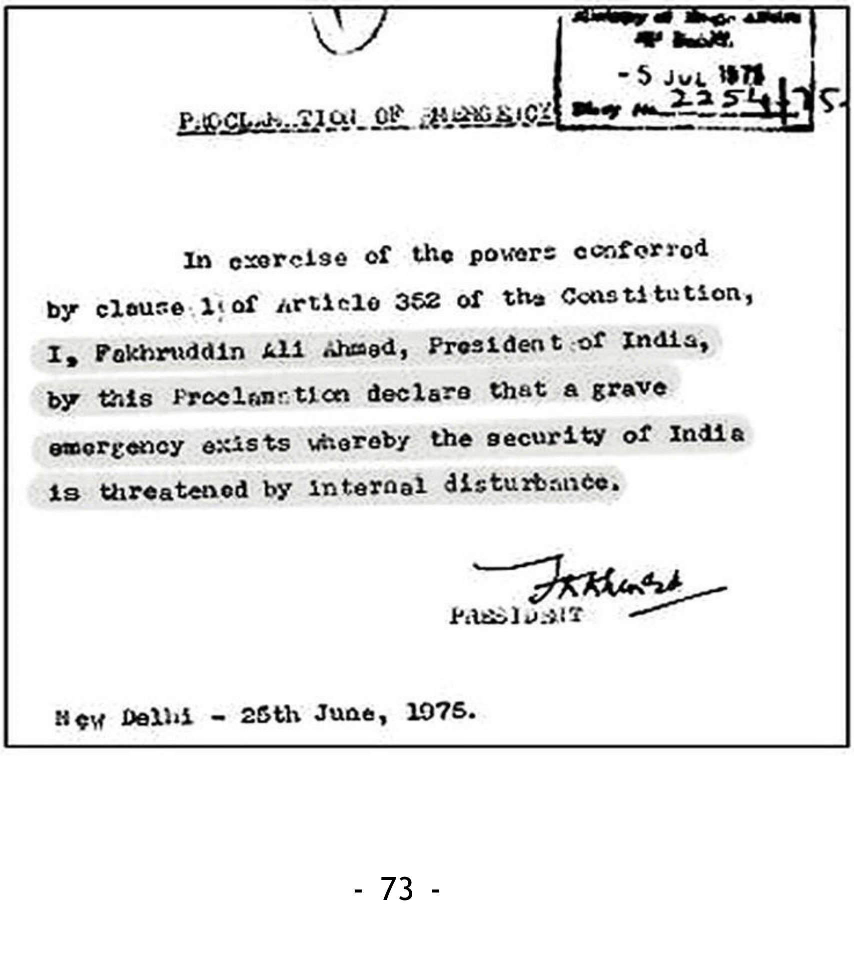
-5 JUL 1975
2254/75

PROCLAMATION OF EMERGENCY

In exercise of the powers conferred by clause 1 of Article 352 of the Constitution, I, Fakhruddin Ali Ahmed, President of India, by this Proclamation declare that a grave emergency exists whereby the security of India is threatened by internal disturbance.

PRESIDENT

New Delhi - 25th June, 1975.

25 जून की मध्यरात्रि को मंत्रिमण्डल की अनुशंषा पर राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने देश में आपातकाल की घोषणा कर दी। यद्यपि माना जाता है कि आपातकाल की घोषणा रेडिया पर पहले कर दी गई थी तथा बाद में सुबह मंत्रिमण्डल की बैठक के बाद उस पर राष्ट्रपति ने हस्ताक्षर किया। यद्यपि संवैधनिक प्रावधान है कि मंत्रीमण्डल की बैठक के बाद उसकी अनुशंषा पर जब राष्ट्रपति हस्ताक्षर कर देते हैं तब आपातकाल की घोषणा की जा सकती है।[18]

19. इंदिरा गांधी :–

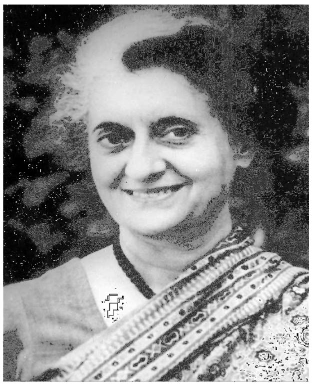

आपातकाल के दौरान भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के करीब एक अमरीकी जासूस हुआ करता था। विकिलीक्स के हालिया केबल्स का दावा है कि सन् 1976 से ही अमरीकी सरकार को पता था कि इंदिरा गाँधी सन् 1977 में आम चुनाव करा सकती है। एक अन्य केवल के मुताबिक आपातकाल के एक दिन बाद अमरीकी दूतावास ने संदेश भेजा था कि आपातकाल के पीछे संजय गाँधी व आर. के. धवन अहम शख्स थे।[19]

20. जेपी ने दिया आंदोलन को नेतृत्व :–

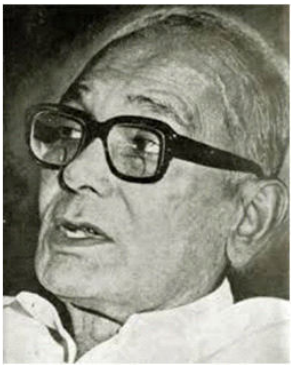

गुजरात के असंगठित नव निर्माण आंदोलन के आंदोलन से सबक लेते हुए जेपी ने बिहार के छात्र आंदोलन को एक संगठन, लक्ष्य, नेतृत्व और करिश्मा प्रदान किया। उन्होंने छात्रों से आग्रह किया कि वे एक साल के लिए अपना कॉलेज छोड़कर एक वैकल्पिक राजनीतिक प्रणाली के निर्माण के लिए संघर्ष करें।

लगभग सभी राजनीतिक दल अपने मतभेद भुलाकर जेपी के साथ खड़े हो गये। जल्दी ही आंदोलन का लक्ष्य प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी को हटाना और भ्रष्टाचार तथा एकाधिकार शासन का अंत हो गया। बताया जाता है कि जेपी मार्च 1975 के 'संसद मार्च' में 4 लाख से भी अधिक लोग सम्मिलित हुए। 25 जून 1975 को रामलीला मैदान की महारैली में जेपी ने पुलिस और सैनिक बलों से असंवैधानिक और अनैतिक आदेशों को नहीं मानने का आग्रह किया। बाद में इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगाने के लिए 'आंतरिक अशांति' की आशंका को इसी भाषण के आधार पर तर्कसंगत ठहराया था।[20]

21. दो शीर्ष अदालतों का निर्णय :–

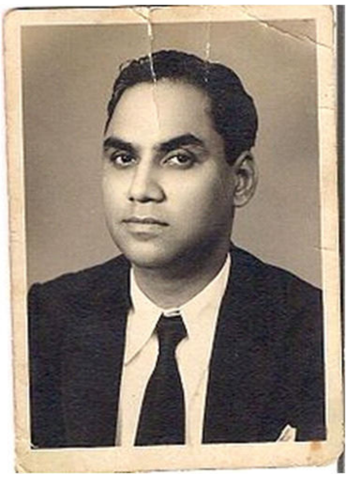

इस पूरी स्थिति में इलाहाबाद हाईकोर्ट के निर्णय ने आग में घी डालने के लिए काम किया। 12 जून, 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जगमोहन लाल सिन्हा ने इंदिरा गाँधी का चुनाव निरस्त कर छह साल तक चुनाव

न लड़ने का प्रतिबंध लगाया। उन पर चुनाव में सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग, अधिक खर्च करने का आरोप राजनारायण ने लगाया था। उच्च न्यायालय ने आरोपों को आंशिक रूप से सही ठहराया। इंदिरा गाँधी ने इस्तीफा से इन्कार करते हुए फैसले को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी। सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश जस्टिस कृष्ण अय्यर ने 24 जून 1975 के अपने अंतरिम आदेश में इंदिरा गाँधी को बिना शर्त राहत नहीं दी। पूर्व दृष्टांतों के आधार पर इंदिरा गाँधी को प्रधानमंत्री बने रहने, संसदीय कार्यवाही में भाग लेने की अनुमति दी पर संसद में वोट देने की अनुमति नहीं दी। विपक्ष की प्रधानमंत्री से इस्तीफे की मांग तेज हो गई।[21]

22. जंजीरों में जकड़े गए जॉर्ज :–

आपातकाल के दौरान तत्कालीन केन्द्र सरकार ने विपक्षी नेता जॉर्ज फर्नांडीस और 24 अन्य लोगों के खिलाफ बड़ौदा डायनामाइट नामक आपराधिक मामला दर्ज किया था। सरकार की तरफ से सीबीआई ने यह आरोप लगाया था कि जॉर्ज और उनके सहयोगियों ने सरकारी प्रतिष्ठान और रेलवे लाईन उड़ाने के लिए डायनामाइट की तस्करी की। समाजवादी नेता जॉर्ज को जेल में जंजीरों में जकड़ कर रखा गया था। आपातकाल के बाद हुए चुनाव में जनता पार्टी की सरकार आने पर फर्नांडीस और उनके सहयोगियों के खिलाफ चल रहा मामला वापिस ले लिया गया था।[22]

23. आपातकाल के 'सूत्रधार':—

समाजवादी नेता राजनारायण को आपातकाल का सूत्रधार माना जाये तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। सन् 1971 के चुनाव में रायबरेली से इंदिरा गाँधी से हारने के बाद राजनारायण ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। लंबी बहस के बाद 12 जून 1975 में न्यायालय में इंदिरा गाँधी का चुनाव अवैध घोषित कर दिया। यहीं से आपातकाल लगाने की कहानी शुरू हुई। आपातकाल के बाद 1977 में हुए लोकसभा चुनाव में राजनारायण ने एक बार फिर इंदिरा गाँधी का मुकाबला किया और उन्हें भारी मतों से हराया। केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार बनने पर राजनारायण को मंत्री पद से नवाजा गया। यह अलग बात है कि राजनारायण की वजह से जनता पार्टी टूटी।[23]

24. आपातकाल के 'खलनायक' :—

इन्दिरा गाँधी के छोटे पुत्र संजय गाँधी की आपातकाल में खासी भूमिका रही। आपातकाल के दौरान अपनी माँ इंदिरा गाँधी के प्रमुख सलाहकार के रूप में वे कार्य किया करते थे। इस दौरान दिल्ली के कई इलाकों में अतिक्रमण हटाने से लेकर जबरन नसबंदी थोपे जाने के पीछे भी उनका ही हाथ होने की चर्चा राजनीतिक गलियारों में रहीं। सन् 1977 में लोकसभा चुनाव में पराजय का सामना करना पड़ा। 23 जून 1980 को एक दुर्घटना में उनकी मौत हो गई। संजय गाँधी की भूमिका को उस दौरान के अनेक कांग्रेसी नेता भाई नापसंद करते थे लेकिन संजय के सामने बोलने की उनकी हिम्मत नहीं होती थी। एक दुर्घटना ने 34 वर्ष की उम्र में ही संजय गाँधी को देश की राजनीतिक से छीन लिया।[24]

25. फैसले ने बदली राजनीतिक हवा :–

इलाहबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जगमोहन लाल सिन्हा आपातकाल के चर्चित चेहरों में शुमार हैं। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी को लोकसभा चुनाव के खिलाफ दायर याचिका पर उन्होंने ऐतिहासिक फैसला दिया। इसके तहत इंदिरा गाँधी का चुनाव अवैध घोषित किया गया था। सिन्हा के फैसले से देश ही नहीं दुनिया भी सन्न रह गई। इंदिरा गाँधी के खिलाफ दायर याचिका में उनके प्रतिद्वन्दी राजनारायण ने उनके खिलाफ सत्ता के दुरूपयोग के आरोप लगाए थे। उस दौर में सिन्हा ने जो ऐतिहासिक फैसला दिया उसकी चर्चा आज चार

दशक बाद भी होती है। सात साल पहले सिन्हा इस दुनिया से विदा हो गए थे।[25]

26. सम्पूर्ण क्रान्ति के नायक :–

सम्पूर्ण क्रान्ति के जनक के रूप में पहचान बनाने वाले जयप्रकाश नारायण की पहचान लोकनायक के रूप में रही है। सन् 1974 में बिहार और गुजरात में चले छात्र आन्दोलन का नेतृत्व जयप्रकाश नारायण ने किया। आपातकाल के दौरान 21 महीने की जेल काटने के बाद सन् 1977 के लोकसभा चुनाव में जनता पार्टी के गठन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। उन्हें आपातकाल के हीरो के रूप में पहचाना जाता है। पहली बार गैर कांग्रेसी सरकार के केन्द्र में सत्तारूढ़ होने के लिए जयप्रकाश नारायण को ही श्रेय जाता है। राजनीति में रहते हुए भी जयप्रकाश नारायण ने कभी सक्रिय राजनीति में आने या पद की महत्वाकांक्षा नहीं पाली।[26]

27. क्या है आपातकाल :–

देश में आतंरिक अशांति को खतरा होने, बाहरी आक्रमण होने अथवा वित्तीय संकट की हालात में आपातकाल की घोषणा की जाती है। देश में सन् 1962 में चीन के साथ एवं 1971 में पाकिस्तान के साथ युद्ध के दौरान आपातकाल का दौर देखा था, पर यह बाहरी आक्रमण के कारण लगाया गया था। 25 जून 1975 की मध्यरात्रि 21 मार्च 1977 के बीच जो आपातकाल का दौर देश ने देखा, वह 'आतंरिक अशांति' के कारण अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत लगाई गई थी।

सन् 1971 के युद्ध में सोवियत संघ ने भारत का साथ दिया था तथा अमरीका ने पाकिस्तान का। घरेलू मोर्चे पर इसका असर यह हुआ कि आर्थिक क्षेत्र में भारत की नीतियां अधिकाधिक समाजवादी होती गई तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भी भारत कई तरह की संधियों आदि के माध्यम से सोवियत संघ के निकट आता गया।

व्यापार कारोबार पर राज्य का नियंत्रण अधिकाधिक बढ़ता गया। आयकर की दरें अपने 80–90 प्रतिशत तक पहुंच गई थीं। आर्थिक स्वतंत्रता सीमित से सीमित होती जा रही थी। दुर्भाग्य से 1971–72 और 1972–73 भारी सूखा के वर्ष भी रहे। इससे एक तरफ अनाज उत्पादन गिरा तो दूसरा तरफ बिजली उत्पादन पर भी नकारात्मक असर हुआ। इन्हीं वर्षों के दौरान कच्चे तेल के दाम तीन गुना बढ़े जिससे 1971 के बाद के वर्षों में मंहगाई दर 10 प्रतिशत से भी अधिक रही। समन्वित असर यह हुआ कि गरीबी, बेरोजगारी तथा मंहगाई अपने चरम पर पहुंच रहे थे। नतीजा था व्यापक असंतोष। पर एकाधिकारवाद की ओर बढ़ रही कांग्रेस एक राजनीतिक दल के रूप में एक असंतोष को समायोजित करने के लिए तैयार नहीं था।[27]

28. लोकतंत्र का काला दिन :–

सियासी बवंडर, भीषण राजनीतिक विरोध और कोर्ट के आदेश के चलते इंदिरा गाँधी अलग–थलग पड़ गई। ऐसे में पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री सिद्धार्थ शंकर राय ने उनको देश में आतंरिक आपातकाल घोषित करने की सलाह दी। इसमें संजय गाँधी का भी प्रभाव माना जाता है क्योंकि तब तक वह भी संविधानेत्तर शक्ति की तरह व्यवहार करने लगे थे। सिद्धार्थ शंकर ने आंतरिक अशांति के चलते देश की सुरक्षा पर मंडरा रहे खतरे के चलते इमरजेंसी लगाए जाने संबंधी मसौदे को तैयार किया था।

राष्ट्रपति की मुहर – 25 जून, 1975 की रात को राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने प्रधानमंत्री की सलाह पर उस मसौदे पर मुहर लगाते हुए देश में संविधान के अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल घोषित कर दिया। इसके तहत लोकतंत्र को निलंबित कर दिया गया। संवैधानिक प्रावधानों के तहत प्रधानमंत्री की सलाह पर वह छह महीने बाद 1977 तक आपातकाल की अवधि बढ़ाते रहे।[28]

29. राजनीतिक असंतोष :–

सन् 1973–75 के दौरान इंदिरा गाँधी सरकार के खिलाफ देशभर में राजनीतिक असंतोष उभरा। गुजरात का नव निर्माण आंदोलन और जेपी का सम्पूर्ण क्रांति का नारा उनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण था।[29]

30. ऐतिहासिक फैसला :–

1971 के चुनाव में सोशलिस्ट पार्टी के नेता राजनारायण को इंदिरा गाँधी ने रायबरेली से हरा दिया। उन्होंने इलाहाबाद हाईकोर्ट में अर्जी दायर कर इंदिरा पर आरोप लगाया था कि इंदिरा ने चुनाव में सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग कर चुनाव जीता। शांति भूषण ने उनका केस लड़ा। इंदिरा गाँधी को हाईकोर्ट में पेश होना पड़ा। वह किसी भारतीय प्रधानमंत्री के कोर्ट में उपस्थित होने का पहला मामला था।

12 जून, 1975 को इलाहाबाद हाईकोर्ट के जज जगमोहन लाल सिन्हा ने फैसले सुनाते हुए इंदिरा गाँधी को दोषी पाया। रायबरेली से इंदिरा गाँधी के निर्वाचन को अवैध ठहराया। उनकी लोकसभा सीट रिक्त घोषित कर दी गई और उन पर छह साल तक चुनाव लड़ने पर पाबंदी लगा दी गई। हालांकि वोटरों को रिश्वत देने और चुनाव धांधली जैसे गंभीर आरोपों से मुक्त कर दिया गया।[30]

31. नवनिर्माण आंदोलन :–

आर्थिक संकट और सार्वजनिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार के खिलाफ

छात्रों और मध्यम वर्ग के उस आंदोलन से मुख्यमंत्री चिमनभाई पटेल को इस्तीफा देना पड़ा। केन्द्र सरकार को राज्य विधानसभा भंग कर राष्ट्रपति शासन लगाने के लिए मजबूर होना पड़ा।[31]

32. सम्पूर्ण क्रान्ति :—

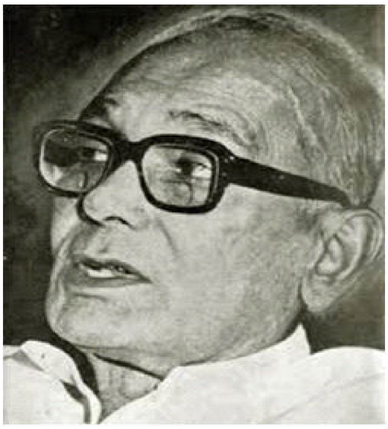

मार्च—अप्रैल 1974 में बिहार के छात्र आंदोलन का जयप्रकाश नारायण ने समर्थन किया। उन्होंने पटना में सम्पूर्ण क्रान्ति का नारा देते हुए छात्रों, किसानों और श्रम संगठनों से अहिंसक तरीके से भारतीय समाज का रूपान्तरण करने का आव्हान किया। एक महीने बाद देश की सबसे बड़ी रेलवे यूनियन राष्ट्रव्यापी हड़ताल पर चली गई। इंदिरा सरकार ने निर्मम तरीके से इसे कुचला। इससे सरकार के खिलाफ जन असंतोष बढ़ा। 1966 से सत्ता में काबिज इंदिरा के खिलाफ इस अवधि तक लोकसभा में 10 अविश्वास प्रस्ताव पेश किये गये।[32]

33. अंग्रेजों जैसे जुल्म ढाए थे पुलिस ने :—

फिरोजाबाद : पूरे 40 साल पहले 25 जून 1975 को देश में आपातकाल लागू होते ही राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया था। शहर में पीडी जैन इंटर कॉलेज में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का शिविर लगा था। जैसे ही संघ पर प्रतिबंध लगाने की घोषणा हुई, तो शिविर को निर्धारित अवधि से दो दिन पहले ही आनन—फानन में खत्म कर दिया गया। इसके बाद बचते बचाते किसी तरह

स्वयं सेवकों को उनके जिलों तक पहुंचाया गया। पुलिस ने उस दौरान अंग्रेजों जैसे जुल्म सत्याग्रहियों पर ढाए थे।

पीडी जैन इंटर कॉलेज में आयोजित प्राथमिक संघ शिक्षा वर्ग के समापन कार्यक्रम में शामिल होने के लिए दो दिवसीय प्रवास पर सर संघ चालक बाला साहब देवरस आए हुए थे। देवरस को नागपुर जाते समय रास्ते में ही गिरफ्तार कर लिया गया। शहर में अफरा–तफरी मच गई। आपातकाल लगते ही गिरफ्तारियां शुरू हो गई थीं। कई कार्यकर्ता 26 जून की रात को गिरफ्तार हो गए। आचार्य लाल नरूला एवं लक्ष्मीनारायण जैन को गिरफ्तार कर श्री नगर स्थित संघ कार्यालय पर ताला डाल दिया गया। आंदोलन में सत्याग्रही रहे बुजुर्ग बताते हैं कि कार्यकर्ताओं के घर दिन रात ऐसे दबिशें दी गईं, जैसे किसी बदमाश को पकड़ने पुलिस आई हो। आधी रात को सीढ़ियाँ से घरों में पुलिस वाले घुस आते थे, मारपीट करते हुए जेल भेज देते थे। साथियों को या जानकारों को हर तरह से उत्पीड़ित किया गया। इस दौरान युवा पुलिस को चकमा देने में कामयाब रहे 14 नवम्बर 1975 को जवाहर लाल नेहरू के जन्मदिन के मौके पर जब लोक संघर्ष समिति ने आहवान किया तो जत्थों के रूप में गिरफ्तारी देने का सिलसिला शुरू हो गया। गिरजा शंकर, पं. रामस्वरूप, सुशील मिश्रा, रविन्द्र शर्मा दिनकर, प्रकाश गुप्ता आदि के नेतृत्व में जत्थे निकलते और तहसील पर गिरफ्तारियां देते। पूरे समय जेल में बंद रहे आश्चर्य लाल नरूला व लक्ष्मी नारायण जैन इलाहाबाद की नैनी जेल से रिहा होकर आए, तो हजारों लोगों ने उनकी आगवानी की।[33]

34. आपातकाल की मनाई वर्षगांठ – लोकतंत्र की करें रक्षा :–

भरतपुर– सर्वोदय संस्थान की ओर से 25 जून 1975 को लगाए गए आपातकाल की वर्षगांठ पर आयोजित गोष्ठी में वक्ताओं ने वर्तमान पीढी से लोकतंत्र की रक्षा का आव्हान किया। इस अवसर पर आपातकाल के दौरान जेल गए लोकतंत्र के प्रहरियों का पुष्पहार, शॉल एवं प्रशस्ति पत्र देकर अभिनन्दन किया गया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ अतिथियों ने माल्यार्पण व दीप प्रज्वलन कर किया। गोष्ठी में पत्रकार गोपाल शर्मा ने कहा कि 38 वर्ष बाद भी लोकतंत्र को खतरा बरकरार बना हुआ है। उन्होंने कहा लोकतंत्र की रक्षा के लिए ऐसे लोगों को आगे आना चाहिए जो वास्तव में लोकतंत्र के सच्चे प्रहरी हैं। पूर्व सांसद पं. रामकिशन ने वर्तमान लोकतंत्र में विद्यमान खामियों को दूर करने का आव्हान किया। पूर्व विधायक मुकुट गोयल ने उपस्थित जनों से संकल्प लेने को कहा कि देश में आपातकाल जैसा दिन कभी नहीं आये।

नगर सुधार न्याय के पूर्व अध्यक्ष गुलराज गोपाल खण्डेलवाल ने कहा कि देश की स्वतंत्रता की रक्षा करने वाले सैनानी हैं, जिन्होंने कठिन यातनायें सहन करते हुए देश की रक्षा की। संस्थान अध्यक्ष गिरधारी तिवारी, व्यापार महासंघ के जिलाध्यक्ष संजीव गुप्ता, डॉ. सतीश भारद्वाज, मदनलाल आजाद एवं मूलचन्द आर्य ने आपातकाल के संस्मरण सुनाए और कहा कि पहले लोकतंत्र ईमानदार था, लेकिन आज का लोकतंत्र पूरी तरह भ्रष्ट हो चुका है। संचालन अनिल लोहिया ने व आभार सुनील गोयल ने जताया।[34]

35. विकीलीक्स का खुलासा – भूमिगत होकर चला रहे थे गतिविधियाँ – आपातकाल में सीआईए से मदद को तैयार थे फर्नांडीज :–

एक अंग्रेजी अखबार की रिपोर्ट के अनुसार विकिलीक्स ने राजग सरकार

में रक्षा मंत्री रहे जॉर्ज फर्नाडींज के संबंध में खुलासा किया है कि वे सन् 1975 में आपातकाल के दौरान तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के खिलाफ सीआईए और फ्रांस से आर्थिक मदद लेने को तैयार थे। आपातकाल के दौरान जॉर्ज फर्नांडीज भूमिगत होकर सरकार के खिलाफ गतिविधियाँ चला रहे थे।

रिपोर्ट के मुताबिक खुद को अमरीकी साम्राज्यवाद का विरोधी बताने वाले जॉर्ज फर्नांडीज नवम्बर 1975 में कहा था कि वे सरकार के खिलाफ गतिविधियाँ चलाने के लिए सीआईए से भी धन और मदद लेने के लिए तैयार थे। रिपोर्ट के मुताबिक जॉर्ज फर्नांडीज ने 1 नवम्बर 1975 को फ्रांसीसी नेता के साथ एक बैठक में कहा था कि वे आपातकाल का विरोध करने वाले सरकारी प्रतिष्ठानों को ध्वस्त करना चाहते हैं। इसलिए वे उनकी मदद चाहते हैं। जॉर्ज फर्नांडीज ने सबसे पहले फ्रांसीसी सरकार से मदद मांगी। जब फ्रांसीसी सरकार ने इनकार कर दिया तो उन्होंने फ्रांसीसी नेता टरलैक से पूछा कि क्या वे सीआईए के कुछ सम्पर्क बता सकते है। हालांकि फ्रांसीसी नेता सीआईए संपर्क की जानकारी से इनकार कर दिया था।

यह है दस्तावेज में –

अंग्रेजी अखबार 'द हिन्दू' की रिपोर्ट के मुताबिक विकिलीक्स ने खुलासा किया है कि 28 नवम्बर 1975 को एक केबल नई दिल्ली में मौजूद अमरीकी दूतावास से वांशिगटन भेजा गया। इस केबल में कहा गया कि 8 नवम्बर को कोई मिस गीता ने अमरीकी लेबर काउन्सलर से आग्रह किया है कि क्या वो जॉर्ज फर्नांडीज की अमरीकी राजदूत से मुलाकात करवा सकते हैं।

विकिलीक्स के मुताबिक फ्रांसीसी नेता टरलैक से मुलाकात के दौरान जॉर्ज ने दावा किया था कि उनके पास करीब 300 लोग हैं, जो देश में विध्वंसक गतिविधियाँ करने के लिए पूरी तरह से तैयार हैं। जॉर्ज फर्नांडीज उस वक्त ऑल इंडिया रेलवे मेन्स फेडरेशन के अध्यक्ष थे और इमरजेंसी की घोषणा के साथ ही वे भूमिगत हो गए थे।

हालांकि विकिलीक्स के खुलासे का ये कहना है कि उसे ऐसा कोई केबल नहीं मिला, जिससे पता चलता हो कि अमरीका ने जॉर्ज फर्नांडीज की मदद की। कई केबल्स से पता चलता है कि अमरीका ने जॉर्ज के आग्रह पर काफी रूचि दिखाई थी और इस अंदरखाने बहस भी हुई थी।

विकिलीक्स करेगा और खुलासे –

लंदन – भंडाफोड करने वाली बेवसाइट विकीलीक्स 1970 के दशक के 17 लाख से अधिक अमरीकी राजनयिक और खुफिया दस्तावेज जारी करने जा रहा है। विकिलीक्स के संस्थापक जुलियान असांज ने यह खुलासा किया है। वेबसाइट द्वारा जारी किए जाने वाले दस्तावेज में केबल्स, खुफिया रिपोर्ट और कांग्रेस द्वारा किए गए पत्राचार शामिल होंगे।

असांज ने लंदन में इक्वाडोर दूतावास में रहकर अधिकतर काम किया है और उन्होंने प्रेस एसोसिएशन को बताया कि रिकॉर्ड विश्व में अमरीका के 'व्यापक प्रभाव' को दिखाता है।

अंसाज ने दुष्कर्म और यौन उत्पीड़न के आरोपों में स्वीडन को अपने प्रत्यार्पण से बचने के लिए पिछले नौ महीने से इक्वाडोर के दूतावास में शरण ले रखी है। विकिलीक्स ने वर्ष 2010 में 2,50,000 से अधिक अमरीकी केबल्स जारी कर दुनियाभर में तहलका मचा दिया था।[35]

36. लोकनायक की 113वीं जयन्ती पर पीएम मोदी ने कहा – लोकतांत्रिक ढांचे को मजबूत बनाने के लिए आपातकाल को याद रखें :–

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 तक लगे आपातकाल को लोकतंत्र पर सबसे बड़ा आघात करार दिया। उन्होंने कहा कि इसकी यादों को बनाए रखने की जरूरत है ताकि देश के लोकतांत्रिक ढांचे और मूल्यों को और मजबूत बनाने के लिए इससे सबक लिया जा सके।

लोकतंत्र के प्रहरी कार्यक्रम में मोदी ने कहा कि उस अवधि में देश को संकट के जिस दौर से गुजरना पड़ा, उसे भारतीय लोकतंत्र को संतुलित किया और यह मजबूत होकर निकला। मोदी ने आपातकाल के खिलाफ संघर्ष करने वालों का आभार जताया। उन्होंने आपातकाल के खिलाफ संघर्ष करने वालों और जेल जाने वाले कुछ लोगों को सम्मानित भी किया। लोकनायक जयप्रकाश नारायण की 113वीं जयन्ति पर श्रद्धांजलि देते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि जयप्रकाश नारायण एक संस्थान और आदर्श थे। इमरजेंसी के दैरान एक नई राजनीतिक पीढ़ी ने जन्म लिया जो जेपी की प्रेरणा से लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति पूरी तरह से समर्पित थे। मोदी ने कहा, आपातकाल विरोधी संघर्ष से जो सबसे बड़ा संदेश निकल कर सामने आया, वह दमन के खिलाफ संघर्ष करने की प्रेरणा थी। इसलिए आज राजनीति में कई लोग अपने प्रारम्भिक दिनों को इमरजेंसी से, जेपी आंदोलन नवनिर्माण आंदोलन से जोड़ते हैं, जिसने देश को नई तरह की राजनीति प्रदान की। लोकतंत्र के लिए जयप्रकाश नारायण के संघर्ष को मानक बनाये जाने पर जोर देते हुए उन्होंने कहा कि उनके भाषणों में उन लोगों के गहरे आक्रोश की अभिव्यक्ति होती है जो आपातकाल के दौरान प्रभावित हुए थे।

वाजपेयी, फर्नांडिस से की मुलाकात –

इससे पहले प्रधानमंत्री पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के आवास पर जाकर उनसे मिली। मोदी ने एनडीए के पूर्व संयोजक जॉर्ज फर्नाडिंस के आवास पर भी जाकर उनसे भेंट की जिन्होंने उन दिनों में लोकतंत्र के लिए संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

आडवाणी को सम्मान –

प्रधानमंत्री मोदी ने समारोह में भाजपा के वरिष्ठ नेता लालकृष्ण आडवाणी, शिरोमणि अकाली दल के प्रकाश सिंह बादल, राज्यपाल कल्याण सिंह, ओपी कोहली, बलराम दास टंडन और बजूभाई वाला, लोकसभा के पूर्व डिप्टी स्पीकर करिया मुंडा के अलावा भाजपा नेता वीके मल्होत्रा, जयन्ती बेन मेहता और सुब्रमण्यम स्वामी को सम्मानित किया गया। उन्होंने राकांपा नेता डीपी त्रिपाठी, पत्रकार वीरेन्द्र कपूर, के विक्रम राव, प्रो. रामजी सिंह, कामेश्वर पासवान और आरिफ बेग को भी सम्मानित किया।[36]

37. आपातकाल ने सिखाया मोदी को राजनीति का पाठ :–

40 वर्ष पूर्व इंदिरा गांधी द्वारा लगाया गया आपातकाल भारतीय राजनेताओं के लिए एक ऐसा समय माना जाता है जिसे उन्होंने पूर्ण रूप से राजनीतिक रूप से निभाया था। संजय गाँधी के साथ कई अन्य कांग्रेस नेताओं ने भी इंदिरा गाँधी के इस फैसले पर साथ दिया। जिन्हें समकालीन राजनीति के इतिहास में याद भी किया जाता है। आपातकाल के विरूद्ध किए गए प्रयासों में वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भी सहभागिता निभाई थी। नवयुवक के तौर पर उस समय अपनी समझदारी

और सूझबूझ का कौशल दिखाने के लिए मोदी को काफी प्रोत्साहन भी मिला और वही एक दौर था जब मोदी खुद को राजनीति में प्रवेश करता महसूस कर पा रहे थे। दिल्ली में अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में चलाए जा रहे जनसंघ सत्याग्रह में मोदी ने पहली बार सहभागिता की। सन् 1971 में नवयुवक के तौर पर वे इन सत्याग्रहों का हिस्सा बने। इस दौरान मुक्ति वाहिनी का साथ देने के विरोध में सरकार ने उन्हें जेल में भी डाल दिया। कई प्रकार की उच्च स्तरीय जिम्मेदारियों के चलते एक वर्ष के अंदर ही मोदी को अहमदाबाद में स्वयंसेवक कार्यालय का प्रचारक बना दिया। एक या दो साल के भीतर उनका कद बढ़ गया था। उसी समय नवनिर्माण आंदोलन इंदिरा गाँधी के लिए एक राजनीतिक संकट में तब्दील हो चुका था। इस दौरान मोदी स्वयंसेवक कार्यालय में आए पत्रों के जबाव देते थे और कार्यकर्ताओं के लिए रेल व बस के रिजर्वेशन का कार्य किया करते थे। आपातकाल के दौरान लोगों में 'क्या सही है' इस बात की समझ बढ़ाने के लिए 'सरू सर्व जाने' (सही क्या है सभी को जानना चाहिए) कार्यक्रम के तहत उन्होंने जन जागृति शुरू की। आपातकाल के विरूद्ध मोदी को गुप्त रूप से कार्यों को करना पड़ा जिसके लिए आरएसएस ने उन्हें गुजरात की लोक संघर्ष समिति का अधिकारी नियुक्त किया। इस दौरान दिल्ली की जेल में कैद लोगों से वे अलग–अलग रूप व कपड़ों में जाया करते थे। साथ ही उन्होंने अपना एक नकली नाम भी रखा 'प्रकाश।' इन साहसी कार्यों से वे जनता के लिए अद्वितीय शोभा के रूप में सामने आये।

भारतीय मजदूर संघ की नींव रखने वाले दत्तोपंत थेगड़ी से भी उनकी नजदीकियाँ बढ़ने लगी। सरसंघचालक के पिता कहे जाने वाले मधुकरराव भागवत मोदी के विश्वसनीय सलाहकार भी थे। देश भर में नीतियों को पूरा करने और गुप्त रूप से किसी हितकारी कार्यक्रम को परिणाम देने के लिए वे काफी पहचाने जाने लगे। उन्हें 'विचारशील' व्यक्ति भी कहा जाने लगा। संघ की कार्यकारिणी को संभालने के दौरान 37 वर्ष पूर्व उन्होंने राजनीति में प्रवेश करने का फैसला

लिया था।[37]

38. याद रखने की जरूरत है कि आपातकाल के पीछे पूरा सत्ता प्रतिष्ठान था, सिर्फ इंदिरा गाँधी नहीं। उस दौरान देश की स्वतंत्र संस्थाओं ने घुटने टेक दिए थें। सच यह भी है कि इमरजेंसी के खिलाफ हमारा संघर्ष बहुत कमजोर था।

क्या आपातकाल के सबक याद हैं

यह सच है कि आखिर जनता के वोट ने अधिनायकवाद के खतरे को रोका। बेशक, 1977 का चुनाव भारतीय लोकतंत्र का स्वर्णिम अध्याय था। लेकिन याद रहे कि जनता का वोट आपातकाल की ज्यादतियों और सत्ताधारियों के अहंकार के खिलाफ था, लोकतांत्रिक नियम–कायदे के उल्लंघन के खिलाफ नहीं। दक्षिण भारत में आपातकाल की ज्यादतियां नहीं हुई, वहां जनता ने 1977 में भी कांग्रेस को जमकर जिताया। दरअसल हमारे जनमानस में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं और नियम–कायदे को लेकर कोई गहरी समझदारी न उस वक्त थी, न आज है।

लाल कृष्ण आडवाणी के बयान से उठने वाला असली सवाल यह नहीं है कि आज इमरजेंसी स्थिति बन सकती है या नहीं। जाहिर है अगर दोबारा

आपातकाल आएगा, तो उसी रूप में संविधान के अनुच्छेद 352 के सहारे तो नहीं आएगा। वह राष्ट्रवाद, संस्कृति या विकास का कोई नया लबादा ओढ़कर भी आ सकता है। असली सवाल यह है कि अगर आज इमरजेंसी जैसी स्थिति बनती है, तो क्या हम उसे पहचानने और उसका मुकाबला करने के लिए तैयार है? क्या हम मजबूत नेता की जगह सामूहिक नेतृत्व पसंद करेंगे? क्या हम स्वायत्त संस्थाओं की आजादी की रक्षा करेंगें? क्या हमारा मीडिया लोकतंत्र पर हमले को पहचानेगा? क्या हमारे बुद्धिजीवी ऐसे किसी हमले के खिलाफ बीच का रास्ता छोड़कर ठोस आवाज उठाएंगे? सवाल यह है कि क्या हमें आपातकाल के सबक याद है? इसका जवाब लालकृष्ण आडवाणी को नहीं, हमें और आपको देना है।[38]

39. अभी बाकी हैं बहुत खुलासे :

विकिलीक्स पर भी राजनीति?

विकिलीक्स के ताजा खुलासों ने यह साबित कर दिया कि राजनीति ने विकीलीक्स को गंभीरता से नहीं लिया है और विकिलीक्स से कुछ भी नही सीखा है। जब विकिलीक्स की कोई सूचना आती है तो सरकारं और राजनीतिक पार्टियां अपनी राजनीति की तराजू परस सूचना को तौलती हैं। ताजा खुलासे देश के दो बड़े नेताओं के बारे में आए– राजीव गाँधी और जार्ज फर्नाडिस। कांगेस पार्टी ने राजीव गाँधी के खिलाफ किसी सबूत से इंकार कर दिया, लेकिन जार्ज को निशाना बनाया और कांग्रेस के प्रवक्ता ने मानों एक तरह से फैसला ही सुना दिया कि आपातकाल के दौरान जार्ज को अमरीकी खुफिया एजेंसी सीआईआई से पैसे मिले थे। ये कैसी राजनीति हैं। विकीलीक्स द्वारा जारी सूचनाओं में यह सरकारें व पार्टियां अपनी सहूलियत देख रही है। कांग्रेस ने यह बात को बिल्कुल भुला दिया कि जॉर्ज इस देश के रक्षा मंत्री रहे हैं, उसे बस यह याद रहा कि जॉर्ज हमेशा ही कांग्रेस के विरोधी थें। दूसरी ओर, भाजपा ने राजीव गाँधी और कांग्रेस पर निशाना साधा,

लेकिन जार्ज पर मुह चुरा लिया। यह कैसी राजनीति है? कांग्रेस विकीलीक्स के खुलासे के आधार पर जार्ज को निशाना बना रही है, लेकिन उसने प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के उस बयान को भुला दिया, सरकार इन दस्तावेजों की सच्चाई, विषय वस्तु और यहां तक कि उनके होने की भी पुष्टि नहीं कर सकती?

लीक्स की अहमियत

सूचनाओं से संसार बदलता है। जब दुनिया में सरकारें अपने ही लोगों से झूठ बोल रही हों, तब सरकारें पूरा सच न बोल रही हों, जब सरकारें गलत नीतियां अपना रही हों, जब सरकारें गरीबों को जायज फायदा भी न दे रही हों, तो उन सूचनाओं का महत्व बढ़ जाता है, जो न्याय की राह आसान बना सकती हैं। आज जूलियन असाज और विकीलीक्स जैसे संस्थानों की दुनिया को जरूरत है। अमरीका की सरकार से बचकर इक्वाछोर के दूतावास में शरण लेने वाले असाज ने पिछले साल कहा था, 'लोगों की बालने की शक्ति और मिलकर प्रतिरोध करने की शक्ति भ्रष्ठ और अलोकतांत्रिक ताकतों को डरा देती है। अगर एक बार हम लोगों ने बोलना बंद कर दिया और विरोध करना बंदर कर दिया अगर हमने एक दूसरे से मुंह मोड़ लिया तो हम ज्यादा समय स्वतंत्र नहीं रह पाएंगे।

ऐसे विकीलीक्स के खिलाफ दुनिया में कुछ सरकारें सक्रिय है। अमरीका ज्यादा परेशान है, क्योंकि उसने महाशक्ति बनने या बने रहने के लिए काफी गलत तरीकों से दुनिया को संचालित किया है और सबसे ज्यादा सूचनाऐं उसकी ही तिजोरी से लीक हो रही हैं। कोई आश्चर्य नहीं, अमरीकी सेना ने विकीलीक्स को दुश्मन बताया और समाज को उसका पीड़ित।

नही सुधरी सरकारें।

जूलियन मानते हैं कि सरकारों में विकीलीक्स के कारण सुधार आया है, जेकिन वास्तव में ज्यादातर देशों पर कोई असर नहीं पड़ा है। खासकर, भारत और

पाकिस्तान जैसे देशों में तो विकीलीक्स की सूचनाओं पर भी राजनीति हुई है। आम लोगों को शायद अभी भी ऐसी सूचनाओं का इंतजार है, जो सरकारों के झूठे–क्रूर चेहरों पर से नकाब पूरी तरह हटा दे, शायद तभी सरकारें अपने कामकाज में लोगों के अनुकूल सुधार लाने के बारे में सोचेंगी।

अभी और भांडाफोड़

जूलियन असांज ने पिछले साल ही कह दिया था, विकीलीक्स के पास दस लाख से ज्यादा दस्तावेज है, जिन्हे जारी करने की तैयारी की जा रही है, ये दस्तावेज दुनिया के सभी देशों को प्रभावित करेंगें।[39]

40. इतिहास का काला पन्ना – आपातकाल को कांग्रेस के लोकतत्रं विरोधी दृष्टिकोण के प्रमाण के रूप में याद कर रहे हैं – ए. सूर्यकान्त

– कांग्रेस इस धारणा पर चल रही है कि नेहरू–गाँधी परिवार के सदस्य को सरकारी कामकाज में दखल देने के लिए किसी औपचारिक पद की आवश्यकता नहीं है।

– कांग्रेस के रवैये में कोई परिवर्तन नहीं आया है, इसलिए अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है।

देश के अन्दर और बाहर हर कोई यह भलीभाँति जानता है कि केन्द्र सरकार के भीतर जो कुछ चलता है उसे एक संविधानेत्तर शक्ति केन्द्र द्वारा नियंत्रित किया जाता है। यह भी कोई रहस्य नहीं है कि कांग्रेस अध्यक्षा सोनिया गाँधी 2004 के लोकसभा चुनाव में सप्रंग की जीत के बाद सीधे–सीधे मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री बनाने के पश्चात सुपर संवैधानिक सत्ता बन गई थी। सरकार पर पकड़ बनाए रखने के लिए वह नियमित तौर पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करती है। चूंकि कांग्रेस में इस प्रकार की संविधानेत्तर शक्तियों की परम्परा सी रही है, इसलिए कांग्रेस को इसमें किसी सिद्धान्त, संविधान के उल्लंघन जैसी कोई बात नजर नहीं आती। नेहरू गाँधी परिवार कांग्रेस के कामकाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पार्टी इस धारणा पर चल रही है कि इस परिवार के सदस्य को सरकारी कामकाज में दखल देने के लिए किसी औपचारिक पद की आवश्यकता नहीं है।

आमधारणा के विपरीत यह प्रक्रिया नेहरू के दिनों ने ही शुरू हो गई थी। उनकी बेटी इंदिरा गाँधी ने राजनीति में दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी थी और सन् 1950 के दशक में आखिरी वर्षों में नेहरू ने उन्हें कांग्रेस का आक्रामक रूप से संविधानेत्तर गतिविधियों में दखल 1970 के दशक में देखने को मिला। तब युवक कांग्रेस के अध्यक्ष संजय गाँधी ने केंद्रीय मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों को आदेश देने शुरू कर दिये थे। शासन की यह पद्धति आपातकाल के दौरान तमाम हदें पार कर गईं। अपनी माँ प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी द्वारा प्रेरित संजय गाँधी ने संघीय स्तर पर और राज्यों में समानान्तर सत्ता केन्द्र स्थापित कर लिया था। केन्द्रीय मंत्रियों, मुख्यमंत्रियों, आईएएस और आईपीएस अधिकारियों के पर कतर दिए गए थे और पूरे भारत में भय का शासन कायम कर दिया गया था। इंदिरा गाँधी, संजय गाँधी के कारनामों से इस कदर अभिभूत हुई थीं कि उन्होंने अपने प्रचण्ड बहुमत के बल पर सन् 1971–76 के लोकसभा के कार्यकाल को एक वर्ष का विस्तार दे दिया था। यह भयावह दौर तब खत्म हुआ जब लोगों ने चुनाव में कांग्रेस को उखाड़ फेंका। इंदिरा

गांधी ने यह चुनाव इन खुफिया रिपोर्टों के बाद कराया था कि जनता उनका समर्थन करेगी।

यह कांग्रेस के शासन का इतिहास है, किन्तु बहुत से कांग्रेसी दिखावा करते हैं कि ऐसा कुछ हुआ ही नहीं या फिर वह लोगों की स्मृति से लोप हो गया है, किन्तु वे लोग जिनका लोकतंत्र में अटल विश्वास है, फिर से ऐसा नहीं होने देना चाहते। आतंक के दिनों को भूलना मुसीबतों को फिर से न्यौता देने के समान है। इसलिए लोकतंत्र की खातिर आपातकाल की वर्षगांठ 25 जून पर इनके स्याह दिनों को याद करना जरूरी है।

इसी आलोक में कुछ संगठनों व व्यक्तियों पर समानान्तर सत्ता खड़ी करने संबंधी केन्द्रीय मंत्रियों के आरोपों की भर्त्सना करना जरूरी हो जाता है। उदाहरण के लिए, भ्रष्टाचार की समस्या का समाधान करने क अनिच्छुक सरकार प्रधानमंत्री और सांसदों को लोकपाल के दायरे में लाने से पैर खींच रही है। यह ऐसा है जो नागरिकों के कड़े तबके को परेशान कर रहा है। नेहरू के दिनों से ही कांग्रेस भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के कदम उठाने से हिचकिचाती रही है। उदाहरण के लिए आजादी के बाद से ही कांग्रेस पार्टी के वफादार सदस्यों को ही राज्यपाल के रूप में नियुक्त करती रही है। इसी प्रकार उसने हमेशा प्रयास किया है कि चुनाव आयुक्त ऐसा व्यक्ति न बन जाये जो स्वतंत्र रूप से फैसले कर सकता हो। आपातकाल के दौरान कांग्रेस खुलेआम स्वतंत्र मीडिया और न्यायपालिका के खिलाफ अभियान चलाती रही है। संविधान में 42वें संशोधन पर संसद में हुई बहस से ही साफ हो जाता है कि कांग्रेस न्यायपालिका, मीडिया और स्वतंत्र विचारों वाले नौकरशाहों के किस कदर खिलाफ है। सीएम स्टीफेन जैसे लोगों ने खुलेआम 'समर्पित न्यायपालिका' की वकालत की थी। यह समर्पण संविधान के प्रति न होकर कांग्रेस के प्रति अभीष्ट था। इसके बाद भी हालात में कोई परिवर्तन नहीं आया। हमेशा यह प्रयास किया जाता रहा है कि पार्टी के समर्थक या फिर दागदार छवि

वाले व्यक्ति संवैधानिक पदों पर तैनात कर दिये जायें। इसकी सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है चुनाव आयुक्त के रूप में नवीन चावला की तैनाती, जिन्हें शाह जांच आयोग किसी भी सार्वजनिक पद को अयोग्य ठहरा चुका है। इसका दूसरा उदाहरण है कांग्रेस द्वारा मानकों को धज्जियाँ उड़ाते हुए भ्रष्टाचार के एक आरोपी को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त (सीवीसी) के तौर पर तैनात करना।

इस परिप्रेक्ष्य में कपिल सिब्बल और पी. चिदम्बरम जैसे कुछ केन्द्रीय मंत्रियों के प्रवचन सुनना अजीब लगता है, जो सन् 1980 के दशक में मीडिया विरोधी बिल लाने के कर्णधार थे। कुछ दिन पहले उन्होंने संयुक्त रूप से मीडिया को संबोधित करते हुए मजबूत लोकपाल बिल लाने की पक्षधर सिविल सोसायटी के सदस्यों पर हमला किया कि बाहरी लोगों द्वारा किए गए फैसलों के आधार पर सरकार चलाना सही नही है। मजबूत लोकसभा के खिलाफ एक अन्य दलील यह थी कि सरकार के समानान्तर एक और ढांचा खड़ा नहीं किया जा सकता। इन मंत्रियों ने हैरानी जताते हुए कहा कि सरकार अपनी शक्तियों को कम करने का कार्य कैसे कर सकती है? किन्तु क्या मनमोहन सिंह पिछले सात वर्षों से यही नही कर रहे है? क्या उसने अपनी शक्तियाँ संवैधानेत्तर सत्ता सोनिया गाँधी के हाथों में नहीं सौंप दी? पी. चिदम्बरम की दलील तो इससे भी अधिक हास्यास्पद थी कि देश में संविधान है, जिसके मूल ढांचे में बदवाल नहीं किया जा सकता। कांग्रेस के दर्जनों सांसदों व नेताओं ने सुप्रीम कोर्ट द्वारा प्रतिपादित संविधान के मूलभूत ढाँचे के विचार की संसद के भीतर और बाहर अनेक बाहर धज्जियाँ उड़ाई हैं। उन्होंने तो यहाँ तक कहा है कि उनके पास सुप्रीम कोर्ट के जजों को सबक सिखाने के अपने तरीके हैं।

आपातकाल की वर्षगांठ पर हमें उन भयावह संवैधानिक संशोधनों पर भी नजर डालनी चाहिए जो कांग्रेस ने आपातकाल के दौरान किए थे। इनमें प्रधानमंत्री को संविधान से ऊपर स्थापित करना, सुप्रीम कोर्ट व हाईकोर्ट की शक्तियों को कम करना और राष्ट्रपति को कार्यकारी आदेशों के माध्यम से संविधान संशोधन की

शक्ति प्रदान करना शामिल था। इन संशोधनों ने संविधान के मूलभूत सिद्धान्तों को ही ध्वस्त कर दिया था। कांग्रेस के रवैये में अभी भी कोई परिवर्तन नहीं आया है, इसलिए अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है। हमें 25 जून को खुद यह याद दिलाने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए कि कांग्रेस अथवा उसके नेतृत्व वाली सरकार क्या–क्या शरारतें करने में समर्थ है? हमें विरोध से घृणा करने वाली कांग्रेस द्वारा आपातकाल के दौरान मारे गए, सताए गए और जेल में ठूंस दिए गए लाखों लोगों का स्मरण करना चाहिए।[40]

सन्दर्भ –

1. दैनिक जागरण, 25 जून 2015, आगरा–मथुरा, पृष्ठ संख्या–11
2. तत्रैव
3. तत्रैव
4. तत्रैव
5. तत्रैव
6. तत्रैव
7. तत्रैव
8. तत्रैव
9. तत्रैव
10. तत्रैव
11. तत्रैव
12. तत्रैव
13. तत्रैव
14. राजस्थान पत्रिका, अलवर, 17 मई, 2014 पृष्ठ संख्या–2
15. राजस्थान पत्रिका, गुरूवार, अलवर, 25 जून 2015, पृष्ठ संख्या–9
16. तत्रैव
17. तत्रैव
18. तत्रैव
19. राजस्थान पत्रिका, जयपुर, रविवार, 14 अप्रेल, 2013
20. राजस्थान पत्रिका, अलवर, 25 जून 2015, पृष्ठ संख्या–9
21. तत्रैव
22. तत्रैव
23. तत्रैव

24. तत्रैव

25. तत्रैव

26. तत्रैव

27. तत्रैव

28. दैनिक जागरण, आगरा / मथुरा, 25 जून 2015, पृष्ठ संख्या–11

29. तत्रैव

30. तत्रैव

31. तत्रैव

32. तत्रैव

33. तत्रैव

34. राजस्थान पत्रिका, भरतपुर, गुरूवार, 27 जून 2013

35. राजस्थान पत्रिका, अलवर, मंगलवार, 9 अप्रेल, 2013

36 राजस्थान पत्रिका, अलवर, सोमवार, 12 अक्टूबर, 2015

37. राजस्थान पत्रिका, अलवर, 25 जून 2015, पृष्ठ संख्या–9

38. अमर उजाला, गुरूवार, 25 जून 2015

39. राजस्थान पत्रिका, जयपुर, 14 अप्रेल, 2013

40. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 25 जून 2011.

अध्याय चतुर्थ

आपातकाल में प्रेस / मीडिया की प्रेस क्लिपिंग का अध्ययन

अध्याय चतुर्थ –

आपातकाल में प्रेस / मीडिया की प्रेस क्लिपिंग का अध्ययन

लोकतंत्र की मजबूती का मीडिया की आजादी से सीधा संबंध है। स्वस्थ्य लोकतंत्र की धमनियों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता रक्त की तरह बहती है और निष्पक्ष मीडिया लोकतंत्र का हृदय है जो सुनिश्चित करता है कि रक्त संचार सुचारू रूप से होता रहे। यही कारण है कि जब भी जहाँ भी लोकतंत्र को कमजोर करने या उसकी हत्या करने की कोशिश की गयी। पहला वार मीडिया की आजादी पर किया गया। कोई भी तानाशाह स्वतंत्र मीडिया का पक्षधर कभी नहीं हो सकता। तानाशाही में भय और आतंक के विरूद्ध डटकर खड़ी होने वाली मीडिया को बेरहमी से कुचला जाता है। भारत में भी आपातकाल के बहाने तानाशाही का ऐसा भी रूप देखा है।

ठीक चालीस साल पहले 25 जून 1975 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने भारत में आपातकाल लगाया था। आपातकाल के लगते ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू हो गया। प्रेस को साफ संदेश दे दिया गया था कि उनको इंदिरा इज इंडिया एण्ड इंडिया इज इंदिरा मानना होगा या भुगतना होगा। कुछ ने झुकने से साफ इंकार कर दिया कई ऐसे भी थे जो रेंगने लगे फिर क्या था, भारतीय मीडिया के इतिहास का सबसे काला अध्याय बन गया आपातकाल का वह दौर।

1. मीडिया की बेवाकी से परेशान थी इंदिरा गांधी :–

इसकी शुरूआत असल में सन् 1967 के दौरान ही हो चुकी थी। तब तक अजेय मानी जाने वाली कांग्रेस पार्टी के खिलाफ देश भर में माहौल बन गया था। आजादी के बाद पहली बार देश के कुल आठ राज्यों में कांग्रेस की हार हुई थी। देश के अखबार भ्रष्टाचार, मंहगाई और लचर कानून व्यवस्था के खिलाफ खुलकर लिख

रहे थे। इससे कांग्रेस पार्टी बहुत असहज महसूस कर रही थी। सन् 1967 के चुनाव के बाद पहली बार कांग्रेस को समझने में आने लगा कि असली विपक्ष का होना क्या होता है। कॉग्रेस में हर रोज विपक्ष का सामना करना और विपक्ष के हमलों की खबरों को अखबार में छपते देखना कांग्रेस सरकार के लिए दूभर हो रहा था पर जब सन् 1971 में बांग्लादेश मुक्ति युद्ध में भारत ने सहयोग किया और इंदिरा गाँधी ने उनकी प्रशंसा भी की। लेकिन शायद इंदिरा मीडिया से हर वक्त ऐसा व्यवहार चाहती थी। पाकिस्तान के खिलाफ 1971 की जीत का असर अधिक दिनों तक नहीं रह सका। इस जीत से देश की हालत कहाँ बदल पायी थी। जनता मँहगाई और कुव्यवस्था से त्रस्त थी। सन् 1973 में गुजरात के अहमदाबाद में व्यापक छात्र आंदोलन की शुरूआत हुई। इस आंदोलन का जयप्रकाश नारायण ने समर्थन किया। ऐसा ही एक ओर छात्र आंदोलन विहार में भी शुरू हुआ। धीरे–धीरे जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में एक आंदोलन जनआंदोलन का रूप लेने लगा। फिर क्या था, जय प्रकाश नारायण ने पूरे देश में 'सम्पूर्ण क्रांति' आंदोलन का आव्हान किया। इस परिणाम स्वरूप हुआ कि पूरे देश में इंदिरा विरोधी लहर की शुरूआत हो गयी। अखबारों ने जमकर इस आंदोलन से जुड़ी खबरें छापीं। आखिरकार जब 12 जून 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जगमोहन लाल सिन्हा ने इंदिरा गाँधी का चुनाव निरस्त कर उन पर 6 साल तक चुनाव न लड़ने का प्रतिबंध लगा दिया और उनके मुकाबले हारे राजनारायण सिंह को चुनाव में विजयी घोषित कर दिया था तो इस घटना ने इंदिरा गाँधी के सामने संवैधानिक चुनौती खड़ी कर दी। यह मामला सन् 1971 में लोकसभा चुनाव का था जिसमें इंदिरा गाँधी के अपने मुख्य प्रतिद्वन्द्वी राजनारायण को पराजित किया था लेकिन राजनारायण ने हाईकोर्ट में चुनाव परिणाम को चुनौती दी थी और अन्ततः उनकी जीत हुई थी। इसके बाद भी इंदिरा गाँधी ने इस्तीफा देने से इंकार कर दिया और कांग्रेस पार्टी ने बयान जारी कर इंदिरा गाँधी का नेतृत्व पार्टी के लिए अपरिहार्य है। उसी दिन एक और घटना घटी। गुजरात में कांग्रेस के विरूद्ध विपक्षी जनता मोर्चा को भारी जीत मिली। इस

दोहरे झटकों से कांग्रेस बौखला गयी। 25 जून 1975 को दिल्ली के रामलीला मैदान में सभी विपक्षी नेताओं की सफल जनसभा हुई। आखिरकार इंदिरा गांधी ने अदालत के फैसले को मानने से इंकार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने की घोषणा की और 25 जून को आपात काल लागू करने की घोषणा कर दी गई।

2. प्रेस पर लागू हुआ सेंसरशिप :–

आपातकाल की घोषणा के साथ ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू कर दिया गया। स्वतंत्रता के बाद ऐसा पहली बार हुआ था। प्रेस पर पूर्ण आपातकाल लगाया गया था। सभी अखबारों के सम्पादको पर आपातकाल के दोरान हो रही ज्यादतियां की खबर ना छापने के लिए दबाव बनाया गया। बड़ी संख्या में पत्रकार इस दबाव के आगे नतमस्तक हो गये। मीडिया में सत्ता की चापलूसी करने वाले पत्रकारों ने भारतीय पत्रकारिता को हमेशा के लिए शर्मिन्दा कर दिया।

अधिकतर अखबारों में केवल सरकारी विज्ञप्तियों को ही खबर की तरह छापा जा रहा था। मीडिया में आपातकाल और सरकार विरोधी खबरों के लिए कोई जगह नहीं थी। खबरों को छापने से पहले सरकारी अधिकारी को दिखाना आवश्यक था। किसी भी खबर को बिना सूचित किये नहीं छापा जा सकता था। जैसे कई अखबारों ने मजबूरी में आपातकाल का विरोध नहीं किया। 9 जुलाई 1975 को दिल्ली के 47 संपादकों ने देश में समाचार पत्रों पर लगाये गये सेंसरशिप और इंदिरा गाँधी की नीतियों पर अपना समर्थन व्यक्त किया।

साप्ताहिक हिन्दुस्तान पत्रिका ने खुलकर सरकार की तरफदारी की। पत्रिका ने 6 फरवरी 1977 को 'राजनीतिक शतरंज के पुराने खिलाड़ी और नए मोहरें' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित किया जिसमें आने वाले चुनाव में कांग्रेस का पलड़ा भारी होने की बात कही गई थी जबकि देशभर में कॉग्रेस के खिलाफ माहौल था। अन्ततः 1977 के चुनाव में कांग्रेस की बुरी तरह हार भी हुई।

निश्चित तौर पर कई अखबारों और पत्रिकाओं को अपना अस्तित्व बचाये रखने के लिए झुकना पड़ा पर पत्रकारों की बड़ी जमात जिस तरह से रेंगने के लिए तैयार हो गयी उससे भारतीय पत्रकारिताओं पर कभी न मिटने वाला दाग लग गया।

3. जो झुकने को नहीं हुए तैयार :—

इन सरकारी शिंकजे के बावजूद बड़ी संख्या में ऐसे भी पत्रकार थे जिन्होंने अपने जमीर पर दाग नहीं लगने दिया। प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष करते हुए कुलदीप नैयर, सूर्यकान्त बाली, विक्रमराव, वीरेन्द्र कपूर, श्याम खोंसला, देवेन्द्र स्वरूप, रतन मलकायी और दीनानाथ मित्र जैसे पत्रकारों ने जेल की यातनायें झेली। कुल 327 पत्रकारों को मीसा कानून के अन्तर्गत जेलों में बंद कर दिया गया। कई अखबारों और पत्रिकाओं ने अपने तरीके से प्रेस पर लगे सेंसरशिप का विरोध किया। कुछ संपादकों ने संपादकीय का स्थल खाली छोड़कर सरकार का विरोध किया। कुछ ने संपादकीय के स्थान पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में महापुरूषों की उक्तियों को छापा।

सरिता में 6 महीने तक कोई संपादकीय कालम नहीं छपा। सरिका ने जुलाई 1975 के अंक में संपादकीय को सेंसर अधिकारी द्वारा काला किए गए वाक्यों और शब्दों सहित हुबहू प्रकाशित कर दिया। इस अंक में 27—28 संख्या के पृष्ठ लगभग पूरी तरह काले थे।

प्रेस में प्रतिबंध को लेकर ऐसा भय का वातावरण बना कि सेमिनार और अधिनियम जैसे अनेक पत्र पत्रिकाओं को अपने प्रकाशन बंद करने पड़े। सरकार ने 3801 समाचार पत्रों के डिक्लेरेशन जब्त कर लिये और 290 अखबारों के विज्ञापन बंद कर दिये गये।

आपातकाल से पहले देश में चार समाचार समितियाँ थीं — पीटीआई,

यूएनआई, समाचार भारती और हिन्दुस्तान समाचार। सरकार ने इसे मिलकर एक समिति समाचार का गठन किया जिससे यह पूरी तरह सरकारी नियंत्रण में रहे। 18 दिसम्बर 1975 को अध्यादेश द्वारा प्रेस परिषद को समाप्त कर दिया गया। आपातकाल के दौरान आकाशवाणी और दूरदर्शन पर जनता का ऐसा विश्वास उठा कि लोग बीबीसी और वॉयस ऑफ अमेरिका सुनते थे।

ऐसा नहीं था कि सरकार ने विदेशी पत्रकारों को परेशान ना किया हो। ब्रिटेन के टाइम और गार्जियन के समाचार प्रतिनिधियों को भारत से निकाल दिया गया। रायटर सहित अन्य एजेन्सियों टेलेक्स और टेलीफोन काट दिये गये। 7 विदेशी संवाददाताओं को भारत छोड़ने का हुक्म सुनाया गया।

आपातकाल के चालीस साल बीत चुके हैं। पर भारतीय पत्रकारिता के उस काले दौर को हमेशा याद रखने की जरूरत ताकि आने वाली पीढ़ियों को प्रेस की स्वतंत्रता, के लिए अपना सब कुछ दांव पर लगा देने वाले पत्रकारों से सीख मिलती रहे।

4. इन्दिरा ने आपातकाल की भारी कीमत चुकाई :—

आपातकाल के बाद आम चुनाव हुए उत्तर भारत में पूर्ण पराजय हुई दक्षिण के राज्यों में भारी जीत हुई और इंदिरा गाँधी चुनाव हार गई।

5. नई दिल्ली :—

राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने कहा है कि सन् 1975 में देश में लगी आपात स्थिति शायद एक टाले जा सकने लायक घटना थी। कांग्रेस व इंदिरा गाँधी ने उस विपदा के लिए भारी कीमत चुकाई। तब आपातकाल के दौरान मौलिक अधिकारों व राजनीतिक गतिविधियों पर लगी रोक बड़े पैमाने पर हुई गिरफ्तारियों और प्रेस की स्वतंत्रता पर पाबंदी का जनता पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था। हाल में प्रकाशित द डोमेटिक डिकेटः द इंदिरा गांधी ईयर्स पुस्तक में प्रणव मुखर्जी ने ये बाते कही हैं।

6. दिशाहीन था जे.पी. आन्दोलन :–

उस दौरान इन्दिरा गाँधी मंत्रिमण्डल में जूनियर मंत्री रहे मुखर्जी ने तब जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में आंदोलन में शामिल विपक्ष के नेताओं को भी अपनी किताब में नही बख्शा है। मुखर्जी की नजर में जेपी का आंदोलन दिशाहीन था जेपी आक्रामक रूख के बारे में मुखर्जी ने लिखा है कि जिस दिन इलाहाबाद हाईकोर्ट ने इंदिरा गाँधी को लोकसभा की सदस्यता के अयोग्य करार दिया और उसके दूसरे ही दिन जेपी घटना के दौरान मैदान से इंदिरा के इस्तीफे के लिए गरजने लगे।

7. सिद्धार्थ शंकरराय के कहने पर लगा था आपातकाल :–

प्रणव मुखर्जी ने यह खुलासा किया है कि इंदिरा गाँधी को 1975 में आपातकाल लागू करने क संवैधानिक प्रावधानों की जानकारी नहीं थी। सिद्धार्थ शंकर राय ने उन्हें इस निर्णय तक पहुंचाया। राय तब पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री थे। आपातकाल के दौरान हुई ज्यादतियाँ पर गठित शाह आयोग के समय राय आपातकाल को सही ठहराने से मुकर गए और उस फैसले को अपना मानने से इंकार कर दिया।

ऐसे लागू हुआ था आपातकाल –

आपातकाल लागू होने से कुछ समय पहले के 25 जून 1975 की रात को नाटकीय क्षण को याद करते हुए लिखते हैं कि पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री राय के सुझाव पर इंदिरा गाँधी ने तो सिर्फ अमल किया था। राय तब कांग्रेस कार्यसमिति और केन्द्रीय संसदीय बोर्ड के सदस्य थे। तब इंदिरा गाँधी के सर्वाधिक प्रभावशाली सलाहकारो में थे और तब विभिन्न मुद्दों पर उनकी राय मांगती थी।

द ड्रामेटिक डिकेड : द इंदिरा गाँधी ईयर्स में है कई अनकही बातें :–

प्रणव मुखर्जी ने उस उथल पुथल वाले समय के बारे में अपने विचार भारत की स्वतंत्रता के बाद के इतिहास में अपनी किताब 'द डामेटिक डिकेड : द

इंदिरा गाँधी ईयर्स' में किया है जिसका अभी हाल में प्रकाशन हुआ है।

आपातकाल की उपलब्धियों का भी किया गुणगान –

प्रणव मुखर्जी ने यह भी का है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि आपातकाल ने जनता के जीवन में अनुशासन लाया, आर्थिक विकास हुआ, मंहगाई पर अंकुश लगा, पहली बार व्यापार लाभ में बदला, विकास पर खर्च बढ़ा और कर चोरी और तस्करी के खिलाफ कार्यवाही हुई लेकिन शायद इस घटना को टाला जा सकता था।[1]

रक्षामंत्री बंशीलाल और संजय गाँधी भी इस चुनाव के विरूद्ध थे।[2] प्रसिद्ध पत्रकार कुलदीप नैयर का विचार था कि प्रधानमंत्री की सारी राजनीति के पीछे उनका उद्देश्य अपने सुपुत्र संजय गाँधी के लिए राजनीतिक भूमिका तैयार करना था।[3]

सन् 1975 में आपातकाल में संसद तथा विधानसभाओं की कार्यवाही के प्रकाशन पर रोक लगा दी। यह विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा प्रेस की स्वतंत्रता पर आघात था।[4]

सन् 1975–76 के आपात में निरूद्ध व्यक्तियों की संख्या 175000 तक पहुँच गयी थी।[5] सन् 1975 में लोकसभा में प्रश्नविधि को स्थगित कर दिया। समाचार–पत्रों पर सेंसर थोप दिया गया। संसद की कार्यवाही के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगा दिया।[6]

यहाँ तक हुआ कि न्यायालय भी कार्यपालिका अधिकारियों की मनमानी से नागरिकों की रक्षा नहीं कर सके और विरोधी दलों के अनेक नेताओं को आन्तरिक सुरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया।[7]

8. आपातकाल की हिन्दी पत्रकारिता का अनुशीलन :–

25 जून 1975 भारत के इतिहास में एक ऐसा काला दिवस रहा है जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने आपातकाल की घोषणा का भय, आतंक और दहशत का माहौल बना दिया। 19 महीनों तक चले आपातकाल के काले बादल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर भी छाये और इंदिरा गाँधी ने प्रेस पर भी सेंसरशिप थोप दी। आपातकाल के चलते पत्रिका के स्वरूप में बड़ा बदलाव देखा गया और लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहा जाने वाला मीडिया तानाशाही का शिकार हुआ।

वर्ष 1974 तक पत्रकारिता के माध्यम से सत्ता और सरकार की सर्वत्र आलोचना हो रही थी। देश में भ्रष्टाचार, शैक्षणिक अराजकता, मँहगाई और कुव्यवस्था के विरोध में समाचार–पत्रों में बढ़–चढ़कर लिखा जा रहा था। गुजरात, बिहार में छात्र आंदोलन ने जन आंदोलन का रूप ले लिया था जिसके नेतृत्व का भार लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने अपने कंधो पर ले लिया। उन्होंने पूरे देश में सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन का आव्हान कर दिया था दूसरी और लम्बे समय तक सत्ता में बने रहने, सत्ता का केन्द्रीयकरण करने, अपने विरोधियों को मात देने और बांग्लादेश बनाने में अपनी अहम भूमिका के कारण, इंदिरा गाँधी में अधिनायकवादी प्रवृतियां बढ़ती चली गई और जब इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के बाद अपने आपको सत्ता में बेदखल पाया तो उन्होंने कुछ चापलूसों के परामर्श से आपातकाल की घोषणा का निर्णय ले लिया। 25 जून 1975 को दिल्ली के रामलीला मैदान में विपक्षी नेताओं की जनसभा से इंदिरा गाँधी घबरा गई और उन्होंने आपातकाल की घोषणा कर दी।

आपातकाल के दौरान एक ओर जहाँ सत्ता और सरकार की चापलूसी करने वाले पत्रकार थे। वहीं दूसरी ओर प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष करने वाले पत्रकारों की भी कमी नहीं थी जिन्होंने सेंसरशिप को स्वीकार किया और रोजी–रोटी के लिए नौकरी को प्राथमिकता दी। यही स्थिति साहित्यकारों के साथ भी थी।

स्वतंत्र भारत में वर्ष 1975 में आपातकाल की घोषणा के साथ ही पत्र–पत्रिकाओं पर सेंसरशिप लगा दी गई किन्तु तमाम प्रतिबंधों के बावजूद अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पद पूरी तरह ग्रहण नहीं लग सका। पत्र–पत्रिकाओं पर सेंसर लगा तो बुलेटिनों ने कुछ हद तक इसकी क्षतिपूर्ति की। कुछ संपादकों ने संपादकीय का स्थान खाली छोड़कर तो कुछ न अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में महापुरूषों की उक्तियों को छापकर सरकार का विरोध किया।

सेंसरशिप और अन्य प्रतिबंधों के कारण सरकार और समाज के बीच सूचनाओं का प्रसारण एकतरफा हो रहा था। सरकार की घोषणाओं और तानाशाही रवैये की खबर तो किसी न किसी रूप में जनता तक पहुँच जाती थी। सरकारी प्रेस विज्ञप्तियों के सहारे भी अखबारों में अधिकतर समाचार छप रहे थे। एकतरफा पक्ष की बार–बार प्रस्तुति से पत्र–पत्रिकाओं की विश्वसनीयता पर भी प्रश्नचिन्ह खड़ा हो गया था इसलिए एकतरफा संचार के कारण आपातकाल के 19 महीनों तक सरकार गलतफहमी में रही, जिसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ा।

सेंसरशिप के कड़े प्रतिबंधों और भय के वातावरण के कारण अनेक पत्र–पत्रिकाओं को अपने प्रकाशन बंद करने पड़े। इनमें सेमिनार और अधिनियम के नाम उल्लेखनीय हैं। आपातकाल के दौरान 3801 समाचार पत्रों के डिक्लेरेशन जब्त कर लिये गये विदेशी पत्रकारों को भी प्रताड़ित किया गया। ब्रिटेन के टाइम और गार्जियन के समाचार प्रतिनिधियों को भारत से निकाल दिया गया। रायटर सहित अन्य एजेन्सियों के टेलेक्स और टेलीफोन काट दिए गए। आपातकाल के दौरान 51 पत्रकारों के अधिस्पष्टीकरण रद्द कर दिए गए। इनमें 43 संवाददाता 2 कार्टूनिस्ट तथा 6 केमरामेन थे। 7 विदेशी संवादाताओं को भी देश से बाहर जाने को कहा गया।

प्रेस की स्वतंत्रता पर अंकुश डालने के लिए समाचार समितियों का विलय किया गया। आपातकाल के पूर्व देश में चार समाचार समितिया थीं पीटीआई,

यूएनआई, हिन्दुस्तान समाचार और समाचार भारती जिसे मिलाकर एक समाचार परिषद का गठन किया गया जिससे यह पूरी तरह सरकारी नियंत्रण में रहे।

आपातकाल के दौरान आकाशवाणी और दूरदर्शन पर से जनता का विश्वास उठ चुका था। भारत के लोग उस समय बीबीसी और वायस ऑफ अमेरिका सुनना शुरू कर दिया था।

आपातकाल की घोषणा के बाद प्रधानमंत्री के द्वारा ली गई पहली बैठक में प्रस्ताव आया कि प्रेस परिषद को खत्म किया जाये। 18 दिसम्बर 1975 को अध्यादेश द्वारा प्रेस परिषद समाप्त कर दी गई। आपातकाल के दौरान भूमिगत संचार व्यवस्था के द्वारा एक समान्तर प्रचार–तंत्र खड़ा हो गया। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो जनजीवन को एकपक्षीय समाचार मिल पाता और सच्ची खबरों से वंचित रह जाते। आपातकाल में संचार अवरोध का खामियाजा जनता पर ही नहीं पड़ा। अपितु सत्ता और सरकार आपातकाल विरोधियों की मनोदशा को नहीं समझ पाये संचार अवरोध का कितना बड़ा खामियाजा सत्ता को उठाना पड़ सकता है यह वर्ष 1977 के चुनाव परिणाम से सामने आया।

संपादकों का एक समूह चापलूसी की हद किस तरह पार कर रहा था इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि दिल्ली के 47 संपादकों ने 9 जुलाई 1975 को इंदिरा गाँधी द्वारा उठाये गये सभी कदमों में अपनी आस्था व्यक्त की जिसमें समाचार–पत्रों पर लगाया गया सेंसर भी शामिल है। सेंसरशिप के कारण दिनभर एकपक्षीय खबर छपने को बाध्य हुई। दिनमान ने सेंसरशिप लगाये जाने का विरोध भले ही ना किया हो किन्तु सेंसरशिप हटाये जाने पर संपादकीय अवश्य लिखा है।

आपातकाल की लोकप्रिय पत्रिका 'सप्ताहिक हिन्दुस्तान' भी सेंसरशिप लागू होते ही सरकार की पक्षधर हो गई। यह पत्रिका सरकार की कितनी तरफदारी कर रही थी इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि चुनाव की

घोषणा के बाद 6 फरवरी 1977 के अंक में राजनीतिक शतरंज के पुराने खिलाड़ी और नए मोहरे, शीर्षक से प्रकाशित आलेख में कांग्रेस का पलडा भारी होना सुनिश्चित किया गया है जबकि वास्तविकता यह है कि वर्ष 1977 के चुनाव में कांग्रेस की बुरी तरह हार हुई थी। आपातकाल के पूर्व सरिता में चुटीले बेबाक और धारदार लेख तथा संपादकीय छपा करते थे। सत्ता की मनमानी पर कड़ा प्रहार किया जाता रहा किन्तु आपातकाल लगने के बाद सेंसरशिप के कारण सिलसिला टूट गया। सेंसरशिप थोपे जाने और सत्ता के तानाशाही रवैये के कारण सरिता ने 6 महीनों में संपादकीय कालम लिखना छोड़ दिया।

सारिका का जुलाई 1975 का अंक सेंसरशिप का पालन कड़ाई से किए जाने का जीवंत दस्तावेज बन गया है। सेंसर अधिकारी द्वारा सारिका के पन्नों पर काला किए गए वाक्यों और शब्दों को संपादक ने विरोध स्वरूप वैसे ही प्रकाशित कर दिया था। इस अंक के पृष्ठ सं. 27–28 को तो लगभग पूर्ण तरह काला कर दिया गया था। इसके बाद अंकों में संपादकीय विभाग इतना संभल गया कि सेंसर अधिकारी को पृष्ठ काला करने की नौबत ही नहीं आई।

लोकराज के 5 जुलाई 1975 के अंक में आपात घोषणा शीर्षक से संपादकीय छपां इस संपादकीय में कहा गया है कि कुछ लोगों के अपराध के लिए सम्पूर्ण प्रेस जगत को सेंसरशिप क्यों झेलना पड़े? लोकराज के 12 जुलाई 1975 के अंक में अनुशाासन पर्व शीर्षक से एक संपादकीय छपा जिसमें आपातकाल की घोषणा का स्वागत किया गया था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सेंसरशिप की कैंची ने पत्रकारिता के स्वरूप को ही बिगाड़ दिया था। दहशत और आतंक के माहौल में अधिकांश पत्र–पत्रिकाओं ने सेंसरशिप को स्वीकार कर लिया था।

संपादकीय खाली छोड़ने और पृष्ठों को काले अंक को हूबहु छापने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं रह गया था।

आपातकाल की यह अवधि पत्रकारिता की दृष्टि से ऐसी रही कि यह अलग पहचान लिए है। आपातकाल हिन्दी पत्रकारिता के संबंध में आज अधिक सामग्री उपलब्ध नहीं हैं ऐसे में डॉ. अरूण कुमार भगत द्वारा आपातकाल की हिन्दी पत्रकारिता का अनुशीलन विषय पर किया गया शोध कार्य महत्वपूर्ण है।[8]

9. कुलदीप नैयर वरिष्ठ पत्रकार की कहानी :–

सन् 1975 में इंदिरा गाँधी के खिलाफ जब चुनावों में धांधली के आरोप के बाद इलाहाबाद हाईकोर्ट का फैसला आया तब जगमोहन लाल सिन्हा जज थे। मैं तब 'इंडियन एक्सप्रेस' में काम किया करता था। हम सब, जो जयप्रकाश नारायण या जेपी आंदोलन से जुड़े थे। वो तो यही चाहते थे कि फैसला इंदिरा जी के खिलाफ ही हो पर मन ही मन हम ये भी समझते थे कि उस वक्त इतनी मजबूत और ताकतवर इंदिरा गाँधी के खिलाफ फैसला देने की हिम्मत आखिर किस न्यायाधीश में होगी। 1971 में जब उन्होंने पाकिस्तान को दो हिस्से किये थे तब अटल बिहार वाजपेयी ने उन्हें 'दुर्गा' कहा था। इंदिरा के खिलाफ जब फैसला आया तब जाहिर है कि हम सब खुश हुए तब तक कभी सोचा ही नहीं था कि इसके क्या परिणाम हो सकते हैं। जेपी का हैडक्वार्टर, इंडियन एक्सप्रेस हुआ करता था, जब भी वे दिल्ली आते तो विभिन्न संस्करणों के संपादकों से मिलते थे।

फैसला आने के एक या दो दिन बाद जब जेपी दिल्ली आये तो उन्होंने हम सभी को बुलाया, उन्होंने पूछा – इंदिरा गाँधी सुप्रीम कोर्ट में अपील करने वाली हैं। हम बस इंतजार कर सकते हैं पर फिर भी हम ये चर्चा करने लगे कि मान लो अगर उन्हें पद से हटाया जाता है तब चुनाव होंगे। जेपी का कथन था कि चुनाव के बारे में बात करना फिजूल है क्योंकि वो वापिस सत्ता में आ ही जाएगी। असल में उनके शब्द थे। ''मैं सोचता हूँ कि यदि चुनावों की घोषणा होती तो हमें इसमें मान लेना चाहिए या नहीं न सोचकर, इसका बहिष्कार क्यों कर देना चाहिए? उस समय हममें से कुछ ने जबाव दिया जेपी हो सकता है कि आप सभी को रिपोर्टरों, संपादकों

को पत्रों से मिले फिडबैक के आधार पर हम ये तो कह सकते हैं कि लोगों में बहुत गुस्सा है। भले जेपी वो इसे जाहिर करे या न करें। यहाँ लोगों का मिजाज भांपने के लिए हम अगले दिन के ''इंडियन एक्सप्रेस'' में एक प्रतिष्ठ छापेगें कि उसी दिन शाम के 5 बजे रामलीलाल मैदान में जेपी एक जनसभा को संबोधित करेगें और फिर जो हुआ वो अविश्वसनीय था। रामलीला मैदान को छोड़िए, कनोट प्लेस तक लोगों का हुजूम ही हुजूम था। उस समय रामनाथ गोयनका, इंडियन एक्सप्रेस के मालिक थे और तब उन्होंने कहा कि अब हमें इस मुद्दे के साथ आगे बढ़ना चाहिए, तब मैं फील्ड में काम किया करता था।

मैं सबसे पहले जगजीवन राम से मिला तथा मैंने देखा कि उन्होंने अपने फोन का रिसीवर उठा के अलग रखा हुआ था, मैंने पूछा कि ऐसा क्यों तो उन्होंने कहा, हमें नहीं पता पर हो सकता है कि इंदिरा गाँधी मेरे फोन कॉल टेप करवा रही हों और मुझे भी ऐसा लगता है कि किसी भी वक्त मुझे गिरफ्तार किया जा सकता है। फिर मैं कमलनाथ के पास गया 'इंडियन एक्सप्रेस' के बोर्ड का पुनर्गठन हुआ था और रामनाथ गोयनका की जगह के. के. बिरला अध्यक्ष बनाये गये। कमलनाथ बोर्ड के सदस्य थे। मैं कमलनाथ को जानता था वो मुझे पंजाबी में हैलो कहा करते थे। में उनसे एक बार मिला भी था। वे संजय गाँधी के करीबी थे। उन्होंने मुझसे कहा, तुम संजय गांधी से क्यों नहीं कहते कि वो हमारे लिए लिखे? मेंने कहा कि हाँ अगर वो कुछ करते हैं तब मैं जरूर ऐसा करूंगा। उन्होंने पूछा, क्या तुम उनसे मिलना चाहते हो? मैंने जबाब दिया, अभी तो नहीं पर फिर कभी तो मिलूंगा। आपातकाल के बाद मैंने उनका वादा याद दिलाया और संजय गाँधी से मिलने मैं श्रीमती इंदिरा गाँधी के घर पहुंचा। मुझे आज भी याद है कि वो बरामदे में थीं। वो हार चुकी थी। सब जगह कागज बिखरे हुए थे। घर उस समय प्रधानमंत्री आवास ही था, संजय गाँधी एक पेड़ के नीचे बैठे थे। मुझे देखकर वो आई पर मैंने उनसे कहा नहीं आज मैं आपका नहीं संजय गाँधी का इन्टरव्यू लेने आया हूँ। मैंने संजय से पूछा, आपको

कैसे लगा था कि इतना सब कर आप आगे जा पायेंगे? उन्होंने कहा, इसमें परेशानी ही क्या थी? बंशीलाल की मदद के साथ हम अच्छा ही कर रहे थे। (बंशीलाल उस समय रक्षा मंत्री थे, इससे पहले वो हरियाणा के पहले मुख्यमंत्री रह चुके थे, पर बाद में संजय उन्हें दिल्ली ले आये।) शायद मुझे कहीं और बंशीलाल भी मिल सकता। उन्होंने आगे कहा, मैंने जो स्कीम बनायी थी उससे आने वाले 30 सालों तक कोई चुनाव नहीं था। मैंने एक नोट भी बनाया था, उन्होंने उस नोट की एक प्रति मुझे भी दी जिसमें एक ऐसी नई व्यवस्था थी जो संसदीय नहीं बल्कि अध्यक्षीय थी यानि समग्र शक्तियाँ एक व्यक्ति पर केन्द्रित थीं, यहाँ चुनाव प्रत्यक्ष नहीं बल्कि अप्रत्यक्ष थे। यानि सभी चीजें अप्रत्यक्ष रूप से ''मैनेज'' की जा सकती थी।

इस सबके बीच मैंने सोचा मुझे इलाहाबाद जाकर जज (जगमोहन सिन्हा) से तो जरूर मिलना चाहिए। वहाँ पहुंच कर मैंने उनके घर के बारे में पता किया और उनके पास पहुँच गया जब वे मुझसे मिले तब मैंने उनसे कहा कि जिस बात ने मुझे सबसे ज्यादा आश्चर्य में डाला वो थी आपका फैसला आने से पहले उसके बारे में किसी को अंदाजा नहीं हुआ कि वो क्या होगा? आपने ये कैसे किया? उनसे मिलने पर मैंने सबसे पहले यही सवाल पूछा ''उन्होंने बताया कि उन्होंने केस के इतिहास आदि से जुड़े हिस्से अपने स्टेनो को बोलकर लिखवाए गये पर बाकी पूरा फैसला उन्होंने अपने हाथ से लिखा था, स्टेनो को भी छुट्टी पर भेज दिया।

उनके एक साथी जज ने सिन्हा को ये भी बताया कि उन्होंने किसी से ये भी सुना है कि धवन (आर.के. धवन, इंदिरा गाँधी का निजी सचिव) सिन्हा को सुप्रीम कोर्ट का जज बनाने की सोच रहे हैं। ऐसा मुझे सिन्हा ने बताया कि वो साथी उन्हें कुछ और ही संदेश देना चाह रहे थे और जैसे मैंने अपनी किताब ''द जजमेंट इनसाइड स्टोरी ऑफ द इमरजेंसी इन इंडिया'' में भी लिखा है कि चरणसिंह ने सिन्हा का पता लगाया और उन्हें सजा भी दी। सिन्हा ने मुझे बताया कि वो साधु संतो को बड़ा मानते थे तो उन्होंने (इंदिरा गाँधी के मददगारों ने) कुछ साधु संतों को

मेरे पास भेजा जिससे कि वो मेरे फैसले के बारे में कुछ जान सकें। सिन्हा ने आगे बताया जब मैंने उनका पूरा गेम प्लान देखा और उस केस की सभी बहसों को पढ़ने के बाद नतीजे पर पहुंचा तो मेरे दिमाग में से साफ हो चुका था कि इंदिरा गाँधी ने अपनी शक्तियों का दुरूपयोग किया है और मैं सजा दूंगा। सिन्हा पर काफी दबाव डाला गया। उनके परिवार को परेशान किया गया पर नही वे नरम पड़े न ही अपने फैसले से डिगे।[9]

मनमोहनी दौर और उसके बाद पैदा हुई पीढ़ी के लिए इमरजेंसी एक शब्द है जिसका बूढ़े पुराने नेता कांग्रेस को गरियाने के लिए इस्तेमाल करते हैं। मगर राजनीति में जरा भी दिलासा रखने वालों के लिए इमरजेंसी एक बेहद जरूरी पाठ है। लोकतंत्र की कद्र करने वालों के लिए लोकतंत्र से ताकत जाने वालों के लिए भी इसे याद रखना जरूरी है।

25 जून 1975 का दिन जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने आंतरिक उपद्रवियों का हवाला देते हुए देश में आपातकाल लागू किया था। इसके साथ ही जयप्रकाश नारायण समेत सभी विरोधी नेताओं को जेल में डाल दिया गया था। संसद का कार्यकाल 6 बर्ष कर दिया गया था। तमाम मौलिक अधिकार रद्द कर दिए गए। कोर्ट के पर कतर दिए गए। प्रेस पर सेंसरशिप के जरिए खामोश कर दिया गया। इस सबके साथ ही इंदिरा की सरकार और उनके छोटे शहजादे और राजनीतिक वारिश संजय गाँधी की मनमानियों का सिलसिला भी चल निकला। कागज पर इसे पांच सूत्रीय कार्यक्रम कहा गया। संजय गाँधी अपने नाना पंडित नेहरू के समाजवाद और मम्मी की कथित गरीब समर्थक नीतियों से कतई प्रभावित नहीं थे। वह कैपिटलिस्ट व्यवस्था के भक्त थे और साथ ही बेतरह अधीर भी। उन्हें बिना कुछ किए ही बजरिये मम्मी असीमित शक्ति मिल गई थी। बिना किसी जबावदेही के और इसका उन्होंने क्रूर ढंग से फायदा उठाया मगर इमरजेंसी सिर्फ इंदिरा गाँधी और संजय के कारनामों का चिट्ठा ही नहीं है। इस दोनों के इर्दगिर्द

सत्ता की गिरी मलाई चाटने के लिए कई लोग जुटे थे। ये उनकी भी कहानी है और उनसे से भी बढ़कर ये उन विरोधी नेताओं, कार्यकर्ताओं और आम लोगों की कहानी है जिन्होंने इस निरंकुशता का दंश झेला।

इमरजेंसी पर देश में कई किताबें, लेख और संस्मरण लिखे गये। ये दो तरह के थे एक जिन्होंने इसे भोगा उन्होंने अपना नजरिया लिखा, मसलन इंडियन एक्सप्रेस की समाचार एजेंसी में उस समय संपादक रहे कुलदीप नैयर की किताब 'इमरजेंसी रिटोल्ड या फिर इतिहासकारों ने भी भारतीय राजनीतिक के एक अध्याय के तौर पर लिखा इसके लिए तमाम फर्स्ट हैण्ड अकाउण्टेन्ट अखबारी रिपोर्ट और इमरजेंसी की जांच के लिए जनता सरकार द्वारा बनाये गये शाह कमीशन की रिपोर्टो के आधार पर माना गया।

पहले में बहुत सब्जेक्टिविटी रही और दूसरे में बहुत आब्जेक्टिविटी रही दोनों का ही अपना महत्व है।

मगर जब एक किताब आई है जिसने शानदार ढंग से दोनों के बीच संतुलन साधा है। इस किताब का नाम है द इमरजेंसी ए पर्सनल हिस्ट्री। किताब को इंडियन एक्सप्रेस की कन्सल्टिंग एडिटर कूमी कपूर ने लिखा है।

कूमी कपूर इमरजेंसी के वक्त इंडियन एक्सप्रेस अखबार के साथ बतौर रिपोर्टर जुड़ी थी। उनके पति वीरेन्द्र कपूर फाईनेन्सियल एक्सप्रेस के साथ थे। वीरेन्द्र का एक रोज संजय गाँधी के खास युवा नेता अंबिका सोनी से झगड़ा हो गया। नतीजा वीरेन्द्र कपूर भी डीआईआर की धाराओं के तहत जेल में थे। यहाँ से कूमी का दौहरा संघर्ष शुरू हुआ। बतौर रिपोर्टर इमरजेंसी के दौर की तमाम खबरें करना, अपनी कुछ महीनों की बच्ची को पालना और वीरेन्द्र के लिए पैरवी और भागदोड़ करना, यह तो हुई पर्सनल बात किताब को लिए कूमी ने उस दौर के तमाम अहम लोगों के लेने इंटरव्यू लिए, हर उपलब्ध लिखित शब्द को खंगाला, शाह कमीशन की तीन खण्डों की रिपोर्ट को या फिर उस दौर के अखबार, बाद के दर्शकों

से लिखी गई किताबों को या फिर समय–समय पर होने वाले खुलासे और इन सबको मिलाकर इमरजेंसी, उसके पहले और उसके बाद की एक मुकम्मल तस्वीर पेश की गई।

किताब बहुत ही रोचक है, इसकी भाषा सरल है। इसमें किस्सो की भरमार है। मगर उनकी सतह के नीचे सियासत के कई जख्मी सबक कुलबुलाते नजर आते हैं। 355 पन्नों को पढ़ने के दौरान कभी भी बोरियत नहीं होती छोटे–छोटे अध्यायों को पढ़ने में सहूलियत रहती है। भारती की कहानी हो या बंशीलाल की चाटुकारिता, ललित का बुलडोजर, रूखसाना सुल्तान का नसबंदी अभियान हो या फिर जॉर्ज फर्नाडिश और सुब्रह्मण्यम स्वामी की सरकार से लुका छिपी।

बॉलीवुड पर भी चला सरकारी डण्डा –

विरोध प्रदर्शन का तो सवाल नहीं उठता था क्योंकि जनता को जगाने वाले लेखक, कवि और फिल्मी कलाकारों तक को नहीं छोड़ा गया। कहते हैं – मीडिया, कवियों और कलाकारों का मुँह बंद करने के लिए नहीं बल्कि इनसे सरकार की प्रशंसा करवाने के लिए विद्याचरण शुक्ल सूचना प्रसारण मंत्री बनाये गये थे।

उन्होंने फिल्मकारों को सरकार की प्रशंसा में गीत लिखने और गाने पर मजबूर किया। ज्यादातर लोग झुक गये लेकिन किशोर कुमार ने आदेश नहीं माना। उनके गाने रेडिया पर बजने बंद हो गये। उनके घर पर आयकर के छापे पड़े। अमृत नाहटा की फिल्म ''किस्सा कुर्सी का'' को सरकार विरोधी मानकर उसके सारे प्रिंट जला दिये गये। गुलजार की आवाज पर भी पाबंदी लगाई गई।

10. सारे विपक्षी नेताओं को जेल, मीसा, का कहर और डी.आई.आर.:–

सरकार का विरोध करने पर दमनकारी कानून मीसा के तहत देश में एक लाख ग्यारह हजार लोग जेल में ठूंस दिये गये। खुद जेपी की किडनी कैद के दौरान खराब हो गयी। कर्नाटक की मशहूर अभिनेत्री डॉ. स्नेहलता रेड्डी जेल से

बीमार होकर निकली बाद में उनकी मौत हो गयी। उस काले दौर में जेल यातनाओं को दहला देने वाली कहानियाँ भरी पड़ीं है।[10]

किस्सा कुर्सी का 1977 – मोदी सरकार से मदद की गुहार –

इमरजेंसी के दौरान बैन हुई किस्सा कुर्सी का दोबारा होगी रिलीज –

इमरजेंसी के दौरान रिलीज से रोकी गई फिल्म 'किस्सा कुर्सी का' का दोबारा रिलीज होगी। सरकार पर फिल्म 'किस्सा कुर्सी का' के नेगेटिव और प्रिंटस जलाने के आरोप लगे थे। फिल्म के निर्माता और पूर्व सांसद अमृत नाहटा के बेटे राकेश नाहटा अब दोबारा से फिल्म बनाने जा रहे हैं।

राकेश नाहटा के मुताबिक 'सेंसर बोर्ड' के फिल्म पास न करने के बाद मामला सुप्रीम कोर्ट में लंबित था। राकेश दावा करते हैं कि बावजूद इसके दिल्ली में संजय गाँधी और तात्कालीन सूचना प्रसारण मंत्री विधाचरण शुक्ल के निर्देश पर काम कर रही एक टीम ने छापा मारा और इस फिल्म के नेगेटिव्स ले जाकर जला दिये। वहीं इस संबंध में दायर एक आर.टी.आई. से भी साफ हो चुका है कि सन् 1975 में रिलीज के लिए तैयार इस फिल्म के नेगेटिव्स जलाये जा चुके हैं।

राकेश नाहटा ने अब खत लिखकर प्रधानमंत्री मोदी से गुहार लगाई है कि मौजूदा सरकार इस फिल्म के नेगेटिव्स और प्रिंटस दिलवाये या फिर आर्थिक क्षति और मानसिक क्षति के लिए मुआवजा दें। राकेश किसी तरह की राहत ना मिलने पर एक सरताज के इंतजार के बाद सुप्रीम कोर्ट जाने का मन भी बना चुके हैं।

कई कट्स के साथ 'किस्सा कुर्सी का' पार्ट–2 तो रिलीज हुई पर पूर्व सांसद और फिल्मकार अमृत नाहटा आजादी से अपनी बात नहीं रख पाये। अमृत नाहटा के देहांत के बाद अब उनके बेटे उनके लिखे स्क्रिप्ट पर 'किस्सा कुर्सी का' पार्ट–3 बनायेगें जिसमें इमरजेंसी के दौरान की ज्यादतियों और राजनीतिक भ्रष्टाचार के राज खुलने के दावे किये जा रहे हैं।

11. न केस न दलील फिर भी हुई जेल :—

लोकतंत्र सेनानियों के लिये काल रात्रि जैसी थी 25 जून 1975 की रात, एटा के सैकड़ो लोगों ने 19 महीने काटी आपातलकाल की जेल

एटा : 'किसी के ऊपर न कोई केस दर्ज था और न कोई दलील, न अपील और न कोई वकील। फिर भी तमाम लोग जेल में डाल दिये गये। 19 माह तक सिर्फ इसलिए जेल में रहना पड़ा है कि लोकतंत्र को बचाए रखने के लिए आवाज उठाई थी। मीसा बंदियों के दिलों में 1975 में लगाए गए अपातकाल की धुंधली यादें आज भी जिंदा हैं।

25 जून 1975 की रात कालरात्रि जैसी थी, जब देश में इमरजेंसी लागू की गई। अगली सुबह से ही पुलिस ने सामाजिक संगठनों, प्रेस, राजनीतिक दलों, समाजसेवियों को सूचीबद्ध कर जेल भेजना शुरू कर दिया। एटा के करीब उस वक्त 200 लोग मीसा में बंद हुये। इनमें भाजपा के बुजुर्ग नेता पूर्व राज्यमंत्री गेंदालाल गुप्ता, पूर्व सांसद महादीपक सिंह शाक्य, रमाकांत वैद्य, अतिवीर सिंह जैन, राजेन्द्र प्रसाद शर्मा, बैनीराम आदि लोग जेल में थे। कई ऐसे लोग भी हैं, जो अब इस दुनिया में नही हैं। इनें स्व. बचान सिंह राठौर, स्व. फकीर चन्द अग्रवाल जैसे लोकतंत्र रक्षक सेनानी शामिल हैं।[11]

12. जीवन का अधिकार भी नहीं रहा :—

सन् 1975–77 आपातकाल की घोषणा के साथ ही सभी नागरिकों के मौलिक अधिकार निलंबित कर दिए गए। अभिव्यक्ति का अधिकार ही नहीं, लोगों के पास जीवन का अधिकार भी नहीं रह गया। 25 जून की रात्रि से ही देश में विपक्ष के नेताओं की गिरफ्तारियों का दौर शुरू हो गया। जयप्रकाश नारायाण, लालकृष्ण आडवाणी, अटल बिहारी वाजपेयी, जॉर्ज फर्नांडीस आदि बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया। लोगों को रखने के लिए जेलों में जगह नहीं बची। आपातकाल के बाद प्रशासन और पुलिस के द्वारा भारी उत्पीड़न की कहानियाँ सामने आईं। प्रेस पर भी सेंसरशिप लगा दी गई। हर अखबार में सेंसर अधिकारी बैठा दिया, उसकी अनुमति के बाद ही कोई समाचार छप सकता था। सरकार विरोधी समाचार छपने पर गिरफ्तारी हो सकती थी। 23 जनवरी 1977 को मार्च में चुनाव घोषणा के साथ प्रतिबंधों में ढील दे दी गई।[12]

फिल्मों ने दिखाया दर्द :–

13. हजारों ख्वाहिशे ऐसी 2005 :–

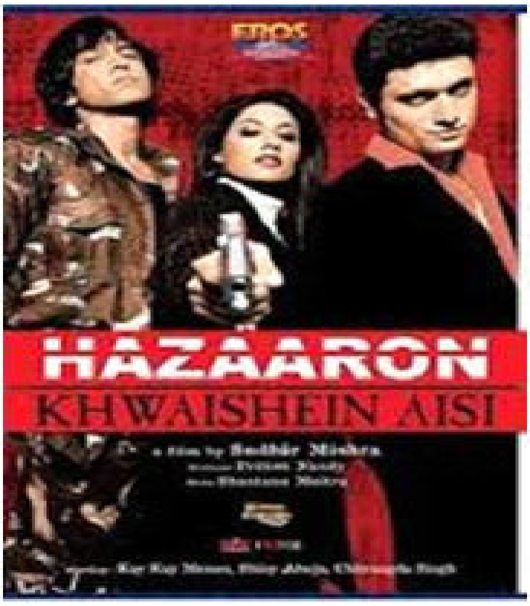

निर्देशक सुधीर मिश्रा की यह फिल्म आपातकाल की पृष्ठभूमि पर बनी है। फिल्म में उस दौरान बढ़ रहे नक्सलवाद पर भी प्रकाश डाला गया है।[13]

14. नसबन्दी 1978 :–

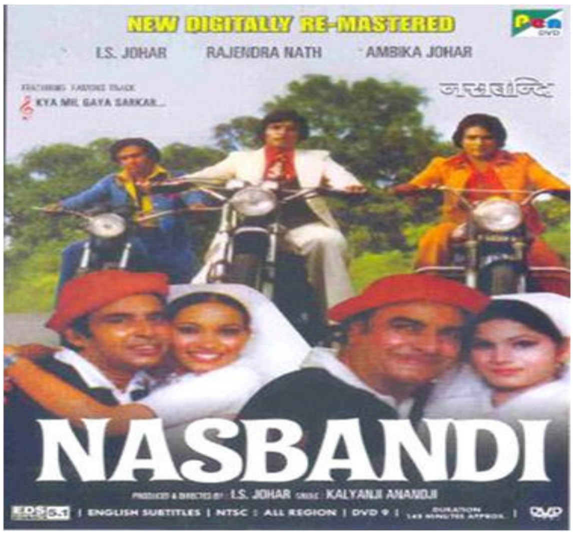

सरकार द्वारा चलाए गए नसबंदी अभियान पर कटाक्ष करती आइ.एस. जौहर की इस फिल्म की रिलीज को प्रतिबंधित कर दिया गया क्योंकि इसमें इंदिरा गाँधी सरकार के कार्यो को दिखाया गया था।[14]

15. किस्सा कुर्सी का 1977 :–

अमृत नाहटा की इस फिल्म में शबाना ने भोली भाली जनता का किरदार निभाया है। आपातकाल पर बनी इस फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया गया और सभी प्रिंट जला दिये गये।[15]

16. आँधी 1975 :–

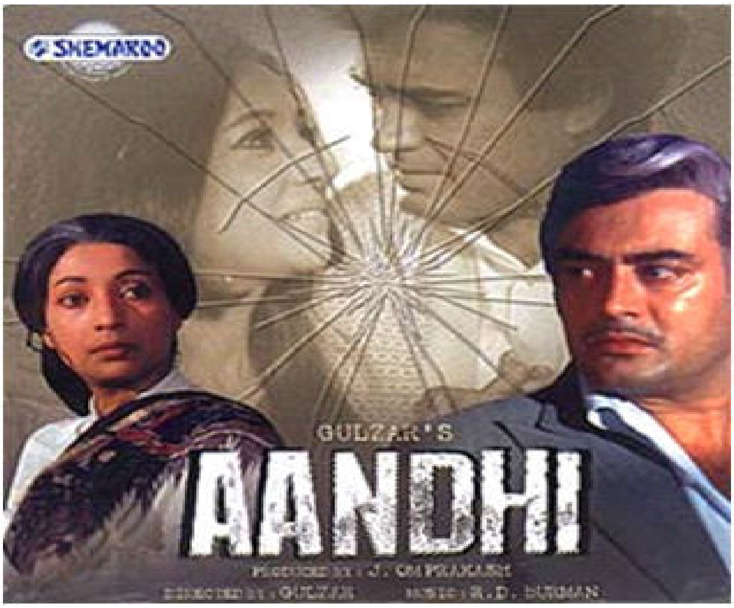

गुलजार की इस फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया गया क्योंकि यह इंदिरा गांधी पर आधारित थी।[16]

17. आपातकालः–

दुनिया के जिस सबसे बड़े लोकतंत्र का नागरिक होने की बात हम दुनिया को बड़े फख्र से बताते हैं, उसी लोकतंत्र को आज से चालीस साल पहले आपातकाल का दंश झेलना पड़ा। नयी पीढ़ी तो आपातकाल की विभीषिका से बिल्कुल अंजान है। उसे सुनकर या पढ़कर इसके बारे में जानकारी जरूर है लेकिन 25 जून 1975 की रात को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी द्वारा देश पर थोपे गए आपातकाल के दंश से उसके भुक्तभोगी आज भी उबर नहीं पाये हैं। नागरिकों के सभी मूल अधिकार खत्म कर दिये गये। राजनेताओं को जेल में डाल दिया गया। अखबारों पर सेंसरशिप लगा दी गई थी। पूरा देश सुलग उठा था। जबरिया नसबंदी जैसे सरकारी कृत्यों के प्रति लोगों में भारी रोष था। कहते हैं कि लोकतंत्र की यही खूबी है कि आबोहवा में रहा समाज व्यवस्था की खामियों को तुरन्त दूर कर लेता है। लिहाजा यही हुआ। यह आपातकाल ज्यादा दिन नहीं चल सका। करीब 19

महीने बाद लोकतंत्र फिर जीता, लेकिन इस जीत ने कांग्रेस पार्टी की जड़े हिला दीं।[17]

18. एक अनजान भय की चादर में सिमटे होते थे लोग।

सवाल–जवाब से निकली राजस्थान पत्रिका के संस्थापक कर्पूर चन्द्र कुलिश की जीवन धारा 'धाराप्रवाह' में आपातकाल के दौर का सटीक चित्रण किया गया है। सवालों के जवाब में कुलिश ने आपातकाल के 21 महीनों का वर्णन अपने अंदाज में किया है। पेश है आपातकाल में परिदृश्य पर उनकी दृष्टि....

आपका व्यक्तित्व सदैव स्वच्छन्द और बन्धमुक्त दौर में अपने भीतर हमेशा कुछ नया करने की चाह को कैसे दबा पाए?

उत्तरः– दो–तीन महीने तो लगातार तनाव के वातावरण में नियमित दिनचर्या में बंधे–बंधाए क्रम और माहौल में मेरा वक्त गुजरता गया लेकिन धीरे–धीरे उस माहौल में सहजता और अनुकूलता का भाव स्थापित होने लगा। मैनें महसूस किया कि सेंसरशिप भी सख्ती और कठोरता की तहों से निकलकर अब सामान्य दिनचार्य या प्रक्रिया का अंग बनती जा रही है। पाठक भी लीक से हटकर कुछ नयापन तलाश रहें है। प्रशासन की गांवों के विकास के लिए निरन्तर प्रयासरत है और

साथ–साथ प्रचार माध्यमों का भी ध्यान इस ओर खीचना चाहता हूँ। कुछ तो वक्त की नब्ज पढ़ते हुए, कुछ मौके की नजाकत समझकर अपने बुद्धि–कौशल का उपयोग करते हुए, मैनें एक निश्चित किया और उस पर अमल करना शुरू कर दिया। निश्चय कहूं तो मन में एक संकल्प उठा कि क्यों न इस वक्त का सदुपयोग करते हुए मै राजस्थान के समग्र दौरे पर निकल जाऊं। राजस्थान एक विशाल राज्य है। बहुत सारे गांव और गांवों की जिन्दगी के ऐसे पक्ष है जो अभी तक पत्रकारों की पहुंच से अनछुए है। उन गांवो का वहां के लोगों का आंखों देखा हाल, क्यूं न अक्षरशः अखबार के लिए लिखता रहूं। कोई योजनाबद्ध तरीके से सर्वेक्षण या विकास कार्यो की रिपोर्टिंग करने जैसा मेरा उद्देश्य नहीं था। बस मन में एक विचार जगा कि पाठक को पढ़ने के लिए भी कुछ नई सामग्री मिलेगी और मैं भी अपने पाठकों से और गांवो से नजदीक से परिचित हो जाऊँगा। बस तुरन्त अपनी 1972 मॉडल की 'फोर्ड फाल्कन' गाड़ी खुद ही चलाता हुआ राजस्थान क समग्र दौरे पर निकल पड़ा। एक–एक जिले में पांच–पांच, सात–सात दिन घूमता रहा। नित्य प्रति रिपोर्ट लिखकर सारा वृत्तान्त अखबार में छपने भेज देता, जो साथ–साथ पत्रिका में छपता रहता।

आपातकाल के दौरान शहरों में जनता के मन में क्या भाव थे, यह तो आप रोजाना देखते थे। उस समय गांव के लोगों की क्या मनोदशा थी?

उत्तरः– उन दिनों गांव के लोग, एक अनजान भय की चादर में सिमटे होते थे। लोग भयभीत रहते थे, पता नहीं कब, कौन अफसर, किस नीति के नाम पर, क्या कुछ जोर–जबरदस्ती कर गुजरे, यह आशंका गांव के लोगों के दिल में, धड़कनों के साथ–साथ पलती थी। गांवों में लोगो के मन मे खटका बना रहता था, विशेष रूप से जिस तरह से नसबंदी का प्रचार और इसका क्रियान्वयन बलपूर्वक ढंग से जोर–जबरदस्ती के साथ किया गया था, बंधक मजदूर छुड़ाने का अभियान चला था। इन सब अभियानों को माध्यम बनाकर कुछ अफसरों, कर्मचारियों, नेताओं ने

अपने निजी रागद्वेष का बदला लेना शुरू कर दिया था। अपने व्यक्तिगत और जातिगत वैमनस्य निकालने शुरू कर दिए थे, जिसका असर और प्रचार दोनों ही जनता में गलत हुआ। लोग डर जाते, बढ़ा–चढ़ा कर घटना का प्रचार करते और शासन की छवि आम जनता के मन में बिगड़ती जाती। प्रशासन और नेताओं के इस व्यवहार से जनता में भीतर ही भीतर एक आक्रोश पलने लगा था। परिस्थितियों के विरोध में एक जलजला सा लोगों में पनपने लगा था। लेकिन वह भाव दबा रहता था क्योकि लोग उस वक्त बेबस थे।

इसी यात्रा का नियमित वृत्तान्त अखबार में छपता रहा, जो बाद मे एक पुस्तक के रूप में भी छपा। इन लेखों का तथ्य क्या होता था?

उत्तरः– उन लेखों का न तो कोई राजनीति से लेना–देना था। नही आपातकाल में कोई सरोकार था। मैनें तो मात्र गांवों के अनछुए पक्षों को नजदीक से देखा और अपने अनुभवों को लिख भेजा। तथ्य क्या होता था? गांवो की कहानी होती थी। हमारे यहा। कानोड़ में नागरबेल का पान होता है। ताम्बूल पत्र, देशी पत्ता कहते है जिसे। ऐसा कड़क पान होता था कि पापड़ की तरह मुंह में चबाया जाता था। अब यह पान कैसे उगते है, पनवाड़ियों की जीवनवृत्ति और दिनचर्या क्या है, पानों का चलन और इतिहास क्या है, लोगों को इस संदर्भ में मान्यता क्या है, यही सब लिखकर भेज देता था। गांव की जब यही कहानी 'पत्रिका' में छपती थी तो गांव के लोगों का सिर गौरव से ऊँचा होता था, अरें आज हमारे गांव के बारे में पत्रिका में छपा है।

प्रशासन की नजर में आपका यह दौरा किस तरह आंका गया, क्या आपने अपने लेख में सेंसरशिप के दबाव को महसूस नहीं किया।

उत्तरः– दबाब कैसा, बल्कि मेरे काम को तो प्रशासन वाले अपने कार्य में सहयोग मान रहे थे। सैंसर वालों ने मेरे लेखों की तरफ ध्यान देना ही बंद कर दिया था।

सरकारी और गैर सरकारी, दोनों लोगों को मेरा काम पसन्द आने लगा था। इसका परिणाम यह रहा कि सूचना कार्यालय के एक वरिष्ठ अधिकारी शंकर भट्ट, मुझसे मिलने आए। उनका प्रस्ताव था कि मेरे इस कार्य का अच्छा प्रचार–प्रसार होना चाहिएं मेरे आलेख पत्र सूचना कार्यालय से साइक्लोस्टाइल होकर देश के सभी समाचार पत्रों में प्रकाशन हेतु भेजे जाने लगे।[18]

19. आपात काल के लिए देश के समूचे सत्ता प्रतिष्ठान को माना जाना चाहिए जिम्मेदार। सिर्फ इंदिरा गाँधी पर दोषारोपण करना ठीक नहीं।

क्या हमें सबक अब भी याद है?

आपातकाल के बार में आगाह करने के पीछे लालकृष्ण आडवाणी की जो भी मंशा रही हो, उसका एक फायदा हुआ है। हर साल आपातकाल की बरसी चुपचाप नहीं गुजरेगी। हो सकता है इस विवाद के बहाने नई पीढ़ी को आपातकाल के बारे में पता लग जाए। शायक इस बहाने हम अपने गिरेबान में झांक लें। हो सकता है कि हम अपने आप से एक कड़ा सवाल पूछ लें। अगर आज कोई नेता आपातकाल लगाने की कोशिश करता है तो क्या हम उसका मुकाबला करने को तैयार है? क्या हमारा लोकतंत्र सुरक्षित है? हम आपातकाल का पूरा सच न तो खुद याद रखने की हिम्मत करते हैं, न नई पीढ़ी को बताने की परवाह करते है। हमने अपना दिल बहलान के लिए आपातकाल के बारे में एक मिथक बना रखा है। मिथक

यह है कि आपातकाल इंदिरा गाँधी की व्यक्तिगत सनक थी लेकिन पूरे देश ने उसे खारिज कर दिया। यह मिथक हमें दिलासा देता है कि हम हिन्दुस्तानियों में कुछ खास बात है कि हमारा लोकतंत्र सुरक्षित है। सच यह है कि आपातकाल के पीछे देश का पूरा सत्ता प्रतिष्ठान था, सिर्फ इंदिरा गाँधी नहीं। सच यह भी है कि आपातकाल के दौरान देश की स्वतंत्र संस्थाओं ने एक–एक करके घुटने टेक दिए थे। सच यह भी है कि अगर चंद समर्पित और बेखौफ हिन्दुस्तानी आपातकाल के खिलफ न लड़तें तो हमारे पास याद करने को बहुत कुछ नहीं रहा। सच यह भी है कि अगर इंदिरा गाँधी 1977 का चुनाव करवाने की गलती नहीं करती तो हमारे लोकतंत्र का इतिहास बहुत अलग हो सकता था।

अपने लोकतंत्र पर गर्व करना और पड़ोसियों को नसीहत देना हम हिन्दुस्तानियों की आदत बन गया है। दरअसल हमें लोकतंत्र को हासिल करने और उसे बचाने के लिए संघर्ष नहीं करना पड़ा। देश की आजादी के साथ–साथ हमें लोकतंत्र भी मिल गया। नेपाल, बांग्लादेश और पाकिस्तान की जनता को लोकतंत्र पाने या बचाने के लिए संघर्ष करना पड़ा, कुर्बानी देनी पड़ी। उसकी तुलना में आपातकाल के खिलाफ हमारा संघर्ष बहुत छोटा था। आजादी की लड़ाई से निकली कांग्रेस पार्टी पूरी इंदिरा गाँधी के सामने बिछ गई थी। विरोधी दलों का संघर्ष भी आधा–अधूरा था। सीपीएम ने विरोध किया लेकिन उसकी वजह बंगाल की राजनीति थी, लोकतंत्र मे आस्था नहीं। सीपीआई और देश के अधिकांश कम्युनिस्ट इंदिरा गाँधी के साथ खड़े थे। जनसंघ और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ता जेल गए लेकिन संघ के प्रमुख बालासाहेब देवरस ने इंदिरा गाँधी को चिठ्टी लिखकर उस पर पानी फेर दिया। अकाली दल के कार्यकर्ताओं ने बड़ी हिम्मत दिखाई लेकिन यह कहना मुश्किल है कि उनकी लड़ाई इंदिरा गाँधी के खिलाफ थी या आपातकाल के खिलाफ। समाजवादी कार्यकर्ताओं का संघर्ष लोकतंत्र का संघर्ष था लेकिन उनकी ताकत बहुत कम थी। राजनीतिक तंत्र

आपातकाल का प्रभावी विरोध करने में विफल रहा।

आपातकाल के इक्कीस महीनों के दौरान लोकतंत्र की स्वायत्त संस्थाओं का इतिहास तो और भी शर्मनाक रहा था। कुछेक अपवादों को छोड़कर सारी अफसरशाही अधिनायकवाद की सेवा में जुट गयी थी। जिसे झुकने को कहा गया उसने रेंगना शुरू कर दिया। आज हम सब इलाहाबाद उच्च न्यायालय के जज जगमोहन लाल सिन्हा को श्रद्धा से याद करते है जिन्होनें इंदिरा गाँधी के खिलाफ फैसला देने की हिम्मत दिखाई। लेकिन सच यह है कि सुप्रिम कोर्ट ने इलाहाबाद हाई कोर्ट के फैसले को पलट दिया था। एक अनजान से जज हंसराज खन्ना को छोड़कर पूरा सुप्रीम कोर्ट आपातकाल के असंवैधानिक आदेशों पर मुहर लगा रहा था।

इस पाप में भगवती और चन्द्रचूड़ जैसे दिग्गज जज भी शामिल थें। इंडियन एक्सप्रेस जैसे कुछ अखबारों को छोड़ दें तो अधिकतर मीडिया आपातकाल के महिमामंडन में शामिल था। सीएसडीएस सरीखी संस्थाओं को छोड़ दें तो देश के बड़े–बड़े बुद्धिजीवी इंदिरा गाँधी के दरबारी बन चुके थे। समझदार लोग भी हमेशा की तरह बीच का रास्ता निकालते हुए आपातकाल की आलोचना के साथ–साथ उसके गुण गिन रहे थे। और जनता? यह सच है कि आखिर जनता के वोट ने अधिनायकवाद के खतरे को रोका।

21 महिनो के उजले और काले पक्षः–

आपातकाल के लंबे दौर में काले और उजले दोनों पक्षों को देखा। एक तरफ मौलिक अधिकारों का पूरी तरह से निलंबन कर दिया गया तो दूसरी तरफ सरकारी मशीनरी में कुछ अनुशासन और कर्मठता भी आई

– आपातकाल को विनोदा भावे ने 'अनुशासन पर्व' कहा।

– सरकारी काम काज में समय की पाबंदी दिखने लगी।

- घंटो देरी से चलने वाली ट्रेने समय पर चलने लगी।
- जमाखोरों पर सख्त कार्यवाही होने लगी। सारे देश में अतिक्रमण व्यापक पैमाने पर हटाए गए।
- अधिकारियों में जिम्मेदारी और चुस्ती दिखाई देने लगी।
- मुनाफाखोरी पर रोक लगी व महंगाई भी काबू में आई। जिससे जनता ने राहत महसूस की।
- संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकार और न्यायिक सुरक्षा जैसी मूलभूत कानूनी संरक्षण समाप्त कर दिए गए।
- प्रेस पर पाबंदी लगा दी गई। सरकार की आलोचना करना किसी के लिए भी संभव नहीं रह गया।
- सत्ता के केंन्द्रीयकरण को बढ़ावा मिला। लोकतांत्रिक चेतना के प्रसार को तगड़ा झटका लगा।
- जबरन नसबंदी की गई। कई मामलों में तो अविवाहित लोगों को भी नहीं बख्शा गया। उत्पीड़न बढ़ा।[19]

20. आपात काल का स्मरणः–

आपातकाल आधुनिक भारत के इतिहास का एक काला अध्याय है। आपातकाल थोपे जाने के 40 साल पूरे होने पर उसका स्मरण किया जाना आवश्यक है। इतिहास की भूलों का स्मरण भविष्य की गलतियों के लिए गुंजाइश को कम करता है। आपातकाल पर तमाम चर्चा के बाबजूद यह विचित्र है कि 40 साल बाद भी कांग्रेस इसकी जरूरत नहीं महसूस कर रही है कि उसे इंदिरा गाँधी की इस भयंकर गलती के लिए देशवासियों से माफी मांगनी चाहिए। इससे भी विचित्र यह है कि इंदिरा गाँधी के करीबी माने जाने वाले कुछ नेता यह स्थापित करने की

कौशिश कर रहे हैं कि आपातकाल के लिए इंदिरा गाँधी नहीं, बल्कि उनके सलाहकार जिम्मेदार थें। यह जानबूझकर तथ्यों को तोड़ने—मरोड़ने की शरारत भरी कोशिश है। आपातकाल थोपे जाते समय प्रधानमंत्री पद पर इंदिरा गाँधी ही आसीन थीं, न कि उनके सलाहकार। इसी तरह सभी इससे परिचित हैं कि आपातकाल इसलिए लागू किया गया, क्योंकि इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इंदिरा गाँधी के निर्वाचन को अवैध ठहरा दिया था। यह कहना सच्चाई से मुँह मोड़ना है कि इंदिरा गाँधी अपने सहयोगियों के बहकावे में आ गई थीं अथवा उन्हें आपातकाल लगाने के लिए उकसाया गया था। यदि कांग्रेस आपातकाल के लिए माफी मांगने के लिए तैयार नहीं तो यह उसकी मर्जी, लेकिन उसके नेताओं को देश को गुमराह करने की इजाजत नहीं दी जा सकती।

कांग्रेस की ओर से इंदिरा गाँधी के बचाव में यह तर्क देने की भी कोशिश होती रही है कि उस वक्त कथित अराजकता के महौल को दूर करने और बिगड़ी चीजों को दुरुस्त करने के लिए आपातकाल का सहारा लिया गया था। यह भी एक कुतर्क है, क्योंकि चार दशक बाद भी लोगों को यह अच्छी तरह स्मरण है कि हालात सुधारने के नाम पर किस तरह दमन चक्र चलाया गया और बुनियादी नागरिक अधिकारों को कुचलने के लिए कैसे—कैसे प्रयास किए गए? अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और नागरिक अधिकारों के दमन के साथ ही संविधान में छेड़छाड़ कर लोकतंत्र को निरीह बनाने का भी काम किया गया। आपातकाल के सिलसिले में इस तथ्य को भी याद रखना जरूरी है कि इस काले अध्याय की शुरूआत इसलिए हो सकी, क्योंकि तत्कालीन राष्ट्रपति तो कठपुतली साबित हुए ही, सर्वोच्च न्यायालय ने भी इंदिरा गाँधी की मनमानी के समक्ष घुटने टेकना बेहतर समझा। यह भी याद रखना जरूरी है कि कम्युनिस्ट दलों ने इस या उस बहाने इंदिरा गाँधी का साथ देना अथवा मौन रहना बेहतर समझां पिछले दिनों कुछ ऐसे स्वर सामने आए है कि फिर से आपातकाल लगने की आशंका के लिए कोई स्थान नहीं नजर आता। पिछले

चार दशकों में लोकतांत्रिक और संस्थाएं कहीं अधिक मजबूत हुई हैं। मीडिया मजबूत होने के संबंधी आशंकाओं को खारिज करती हैं, लेकिन इसकी आवश्यकता पहले भी थी और आज भी है इस तरह की संस्थाएं और अधिक सजग, सक्रिय और समर्थ बनें। इससे ही आम जनता के हितों और आकांक्षाओं की पूर्ति का मार्ग सही तरह से प्रशस्त होगा।[20]

21. आडवाणी की बेजा चिंताः–

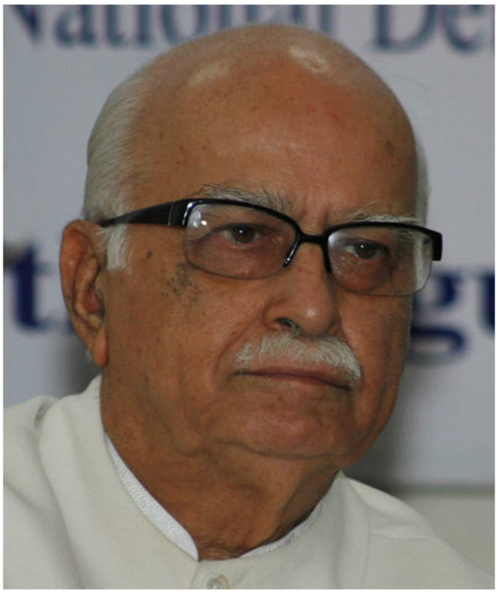

देश में आपातकाल की पुनरावृत्ति को लेकर लालकृष्ण आडवाणी की चिंता को निर्मूल ठहरा रहे हैं, डॉ. ऐ.के. वर्मा

भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता लालकृष्ण आडवाणी ने इंदिरा गाँधी द्वारा 25 जून 1975 को देश पर थोपे गये आपातकाल की चालीसवीं वर्षगांठ पर एक अनावश्यक विवाद को जन्म दे दिया। आपातकाल की पुनरावृत्ति की आशंका पर उन्होंने कहा कि 1977 से आज तक ऐसे कदम उठाए गए है जो मुझे आश्वस्त कर सकें कि अब नागरिक स्वतंत्रताऐं निलंबित या नष्ट नहीं की जाएगी। उनके कथन नेतृत्व को लेकर भी आश्वस्त है। इस बयान ने राजनीतिक रंग ले लिया है। वर्तमान

संदर्भों मे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की ओर से संकेत हो सकता है। एक दूसरे अंग्रेजी समाचार पत्र दैनिक में आडवाणी ने इससे इनकार किया, पर लोगों में आडवाणी के कथन के प्रति कौतूहल जरूर है। क्यों कहा उन्होंने ऐसा? और उनका असली इरादा क्या था?

पिछले कुछ समय से आडवाणी अपने बयानों से अपनी महत्वाकांक्षाओं को अभिव्यक्त करने के लिए जाने जाते रहे है। अटल बिहारी वाजपेयी के बाद वह खुद को भाजपा के स्वभाविक नेता के रूप में देखते थे। मोदी का अचानक राष्ट्रीय पटल पर आकर उन्हें विस्थापित करना संभवतः उन्हें अच्छा नहीं लगा, लेकिन मोदी को जो प्रचंड बहुमत मिला उससे वह चुप रहने को विवश हो गए। आडवाणी मोदी की आड़ में जनता और भाजपा को उलाहना तो नहीं दे रहे? अन्यथा स्वयं अपनी पार्टी और अपने प्रधानमंत्री के लिए अवांछित स्थिति पैदा करने के पीछे क्या मंशा हो सकती है? आडवाणी कैसे भूल सकते हैं कि मोदी के पास आपातकाल लागू करने का न कोई अवसर है, न कारण। 1977 से ऐसे संवैधानिक परिवर्तन कर दिए गए है कि अब आसानी से आपातकाल लागू करना संभव नहीं।

इंदिरा गाँधी ने विशेष परिस्थिति में अनुच्छेद 352 के अंतर्गत आंतरिक अशांति के आधार पर आपातकाल लागू किया था। रायबरेली से उनके निर्वाचन को उनके प्रतिद्वंद्वी राजनारायण ने चुनौती दी थी और इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इंदिरा गाँधी का निर्वाचन अवैध घोषित कर दिया था। जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन चल रहा था और सभी विरोधी दल इंदिरा गाँधी से मांग कर रहे थे कि वह त्यागपत्र दें। 1975 की पुनरावृत्ति न हो इसके लिए संविधान में 44वें संशोधन के द्वारा कई मूलभूत परिवर्तन किए गए है। एक, अब आंतरिक अशांति के आधार पर नहीं, वरन केवल युद्ध, वाह्य आक्रमण और सशस्त्र क्रांति के ही आधार पर आपातकाल लगाया जा सकता है। दो, आपातकाल लगाने के लिए प्रधानमंत्री को मौखिक नहीं, वरन मंत्रिमंडल का लिखित परामर्श राष्ट्रपति को देना पड़ेगा।

तीन, संसद के दोनों सदनों को अलग–अलग केवल एक महीने के भीतर अपने कुल सदस्यों के पूर्ण बहुमत और उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों के दो–तिहाई बहुमत से आपातकाल का अनुमोदन करना होगा जो केवल छह महीने के लिए ही वैध होगा। इतना ही नहीं, लोकसभा के दस फीसदी सदस्य आपातकाल समाप्त करने के लिए सदन की बैठक बुला सकते हैं और केवल साधारण बहुमत से आपातकाल समाप्त करवा सकते है।

1980 में मिनर्वा मिल्स मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि अनुच्छेद 352 के अंतर्गत आपातकाल की उद्घोषणा पर न्यायिक पुनर्निरीक्षण किया जा सकेगा। उसे कोई संवैधानिक उन्मुक्ति प्राप्त नहीं है। न्यायालय यह देख सकेगा कि आपातकाल लगाने के लिए राष्ट्रपति के संतोष का कोई विधिक और तथ्यात्मक आधार है भी या नहीं? कोई भी नागरिक इस आधार पर आपातकाल को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दे सकता है। मोदी सरकार के पास तो आपातकाल को पारित करवाने हेतु वांछित दो–तिहाई बहुमत न लोकसभा में है न राज्य सभा में। फिर तो आज, किसी भी स्थिति में, आपातकाल लागू हो ही नहीं सकता। आज सार्थक बहस यह होनी चाहिए कि हम और कौन–कौन से संवैधानिक, विधिक, प्रक्रियात्मक और राजनीतिक कदम उठाएं जिससे सत्तारूढ़ दल द्वार संवैधानिक शक्तियों के दुरुपयोग पर प्रतिबंध लगाया जा सके पर आडवाणी द्वारा मोदी पर सांकेतिक प्रहार कांग्रेस को किसी प्रकार से आपातकाल की विभीषिका के उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं करता। जिस तरह से मीसा (मेंटेनेंस ऑफ इंटरनल सिक्यूरिटी एक्ट), डीआईआर (डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स) और कोफेपोसा (कांजेर्वेशन ऑफ फॉरेन एक्सचेंज एंड प्रिवेंशन ऑफ स्मगलिंग एक्टिविटीज) में लोगो को जेलों में बंद किया गया, जिस तरह जवान और अविवाहित बच्चों की नसबंदी कराई गई और सौंदर्यकरण की आड़ में घर गिराए गए, उससे पता चला कि स्वतंत्रता का क्या मोल होता है। 44 वें संशोधन ने आपातकाल में भी मौलिक स्वतंत्रताओं को कई सुरक्षा प्रदान की है। एक, संविधान

के अनुच्छेद 19 में दी गई स्वतंत्रताएं अब केवल युद्ध और वाह्य आक्रमण के आधार पर लगे आपातकाल में ही निलंबित की जा सकेंगी, आंतरिक अशांति या सशस्त्र क्रांति के आधार पर नहीं। दो, आपातकाल की स्थिति में भी अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को लागू करवाने का अधिकार अब निलंबित नही किया जा सकेगा। तीन, अनुच्छेद 22 के अंतर्गत निवारक नजरबंदी अधिक से अधिक दो महिने ही की जा सकेगी जब तक कि उच्च–न्यायालय के न्यायाधीश की अध्यक्षता में बना बोर्ड उसे बढ़ाने की सिफारिश न करें।

आश्चर्य है कि आडवाणी ने मीडिया को भी लपेटा और कहा कि लोकतंत्र और नागरिक स्वतंत्रता को बचाने की उसकी प्रतिबद्धता की अभी परीक्षा होनी है। जबकि हकीकत यह है कि आपातकाल में भारतीय मीडिया ने जिस साहस का परिचय दिया आज उसी का नतीजा है कि मीडिया में लोगों का विश्वास बना हुआ है। शायद आडवाणी भूल गए कि 44वें संशोधन में मीडिया आपातकाल में भी संसद और विधानसभाओं की कार्यवाही को बिना प्रतिबंध रिपोर्ट कर सकती है। लेकिन आडवाणी की यह बात दुरुस्त है कि आपातकाल जैसी दुर्घटना को भारतीय राजनीतिक संस्कृति में अभिव्यक्ति नहीं मिली। जहां विभाजन पर अनेक फिल्मे बनीं, वहीं आपालकाल पर कोई नहीं। गुलजार की आंधी जरूर आई थी, जिसमें आपातकाल पर कुछ भी नहीं था। उसे भी उस दौरान प्रतिबंधित कर दिया गया था।[21]

22. भूल नहीं सकते आपातकालः–

आपातकाल में राजनेताओं, प्रेस और आम जनता के दमन तथा अभिव्यक्ति की स्वतत्रंता पर कुठाराघात की पीड़ा बयान कर रहे हैं – ए. सूर्यप्रकाश

एक व्यक्तिगत टिप्पणी के साथ इस लेख की शुरूआत करने के लिए क्षमा करें लेकिन मेरे दुःखदायी अनुभवों में से यह एक है। इंदिरा गाँधी ने 40 साल पहले जब देश पर आपातकाल थोपा था, तब कर्नाटक के पुलिस महानिरीक्षक मेरे संपादकीय बॉस हो गए थे। उन्हें राज्य में मुख्य सेंसर अधिकारी नियुक्त किया गया था। मैं उस वक्त बेंगलोर में एक अंग्रेजी दैनिक का संवाददाता था। उन्हें मेरी सभी न्यूज रिपोर्ट भेजी जाती थी ताकि वह इसे जारी करने की अनुमति दें। उनके पास पुलिस उपाधीक्षकों, इन्स्पेक्टरों और सूचना विभाग के अफसरों की भारी भरकम टीम थी। ये सभी अखबारों में अगले दिन के संस्करणों में छापी जाने वाली सभी संपादकीय सामग्री की भले प्रकार से जांच के लिए उत्तरदायी थे। यह 25 जून, 1975 से जनवरी, 1977 के आखिरी तक 19 महीने के लिए रूटीन काम था।

हमें कड़े निर्देश थे कि आईजीपी और उनके लोगों की अनुमति के बिना एक शब्द प्रकाशन के लिए न जाये। परिणाम यह था कि हमारे पास एक वैन थी जो हमारे और मुख्य सेंसर कार्यालयों के बीच दौड़ती रहती थी। सेंसर हर सामग्री की जांच परख करता था और किसी भी ऐसी सामग्री को हटा देता था जो किसी भी तरह इंदिरा गाँधी सरकार के खिलाफ लगती हो। वहाँ से उन पर सील और मुहर लगती थी। जिन खबरों की अनुमति मिलती थी, सिर्फ उन्हें ही प्रकाशित किया जा सकता था। कोई तरीका नहीं था कि कोई सेंसर के आदेशों का उल्लंघन कर सके, क्योंकि भयानक मीसा (आंतरिक सुरक्षा संरक्षण कानून) के तहत गिरफ्तारी हमारे सिर पर खतरे की तलवार की तरह लटकती रहती थी।

लोकतांत्रिक वातावरण में बड़े हुए युवा पाठकों के लिए ऐसी स्थिति की कल्पना करना भी कठिन होगा जब मीडिया सामग्री को आईजी पुलिस नाम की

छलनी से गुजरना पड़ता हो। अखबारों और टी.वी. चैनलों के संपादकीय विभागों में पुलिसवालों की कल्पना करें। वैसे, यह दमनकारी वातावरण के सैकड़ों उदाहरणों में से एक है जो आपातकाल के दौरान फैला हुआ था। ऐसे लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार ने संविधान को कुचलकर और अपने को फासिस्ट शासन में बदलकर किया था।

तानाशाह बन जाने के इंदिरा गांधी के फैसले की जड़ में उनके खिलाफ राजनारायण द्वारा दायर चुनाव याचिका इसमें सन् 1971 लोकसभा चुनाव के दौरान रायबरेली संसदीय क्षेत्र में उन पर भ्रष्ट तरीके अपनाने का आरोप लगाया गया था। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति जगमोहन लाल सिन्हा ने प्रधानमंत्री को भ्रष्ट तरीके अपनाने का दोषी पाया, संसद के लिए उनका चुनाव असंवैधानिक पारित किया और उन पर छह साल के लिए चुनाव लड़ने पर प्रतिबंध लगा दिया। इस फैसले के खिलाफ उनकी अपील पर न्यायमूर्ति वीआर कृष्ण अय्यर ने सुनवाई की। सब न्यायमूर्ति अय्यर के आदेश का इंतजार कर रहे थे जबकि इंदिरा गाँधी ने अपने सफदरजंग निवास के बाहर भाड़े की भीड़ के जरिये समर्थन जुटाने का माहौल बनाया।

न्यायमूर्ति अय्यर ने 24 जून को अपील पर आदेश दिया और उन्हें सशर्त बने रहने की अनुमति दी। इसमें उन्हें पद पर बने रहने की अनुमति थी, लेकिन उन्हें संसद में बहस में भाग लेने या वोट करने से मना कर दिया गया था। इसके साथ ही मामले को न्यायालय की बड़ी पीठ में भेज दिया गया था।

अब इंदिरा गाँधी के लिए एकमात्र सम्मानजनक रास्ता सर्वोच्च न्यायालय का अंतिम फैसला आने तक पद से दूर रहना था, लेकिन वह सत्ता छोड़ने की इच्छुक नहीं थी। पद पर बने रहने के उनके संकल्प को उनके बेटे संजय गाँधी और उनके चमचों के गिरोह ने समर्थन दिया। जो माँ–बेटे के इर्द–गिर्द जमा हो गये थे। कांग्रेस

का विरोध कर रही पार्टियाँ 12 जून को न्यायमूर्ति सिन्हा के फैसले के बाद से ही उनके इस्तीफे की माँग कर रही थी। न्यायमूर्ति अय्यर के 'सशर्त' बने रहने के आदेश ने उनके विचारों का समर्थन किया। जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई और अन्य नेताओं ने नई दिल्ली के रामलीला मेदान में 25 जून को हुई विशाल सभा को संबोधित किया और उन्हें सत्ता से हटाने की माँग की, लेकिन इदिरा गाँधी और उनके किचन कैबिनेट की दूसरी ही योजना थी। सिद्धार्थ शंकर राय संविधान को कुचलने के 'बेहतरीन विचार' के साथ आगे आये। उन्होंने इंदिरा गाँधी को संविधान की धारा 352 के अन्तर्गत आतंरिक आपातकाल लगाने की सलाह दी। वह सहमत हो गईं और उन्होंने घोषणा की कि देश को 'झटके वाले उपचार' की जरूरत है। उन्होंने राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद से राष्ट्रपति शासन की घोषणा के लिए आग्रह किया। प्रधानमंत्री ने इस सिलसिले में अपने मंत्रिमण्डल से विचार नहीं किया था, फिर भी 'रबर स्टाम्प' माने जाने वाले राष्ट्रपति अहमद ने तत्काल उनकी बात मान ली। इंदिरा गाँधी ने अगले दिन सुबह मंत्रिमण्डल की बैठक बुलाई और अपने निर्णय के बारे में 'सूचना दी'। तब तक उनके मंत्रियों के बीच इतना भय फैल गया था कि उनमें से किसी के पास पिछली रात हुई घटनाओं को लेकर कोई सवाल नहीं था या किसी को किसी चीज को लेकर कोई शंका नहीं थी। भारतीयों को यह समझने में बहुत देर नहीं लगी कि लोकतंत्र को कुचल दिया गया है क्योंकि उसके बाद जल्द ही कांग्रेस सरकार ने राजनीतिक नेताओं, कार्यकर्ताओं और पत्रकारों को मीसा के तहत गिरफ्तार कर लिया। प्रधानमंत्री निवास पर पहले ही की गई पर्याप्त तैयारी के कारण यह अभियान तुरंत–फुरंत हुआ। जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटलबिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी, मधु दंडवते, रामकृष्ण हेगड़े, अरूण जेटली समेत सैकड़ों राजनीतिज्ञ जेल भेज दिए गए। उसके बाद लोकतंत्र के अंतिम अवशेषों को नष्ट करने तथा न्यायपालिका और मीडिया का गला घोंटने के लिए संसद के जरिये कई कानून लागू किए गए और 39 से 42 तक संविधान

संशोधन किए गए। यह सब इसलिए ताकि इंदिरा गाँधी को सर्वोच्च नेता बनाया जा सके जो हर कानून से ऊपर हो।

संक्षेप में, कानून में सबसे लिए बराबरी और जीवन तथा स्वतंत्रता के अधिकार जैसे लोकतांत्रिक संविधान के मूलभूत मूल्यों को छीन लिया गया। सीएम स्टीफेन जैसे कांग्रेस नेताओं ने न्यायपालिका को धमकाया। वीसी शुक्ला ने पत्रकारों को धमकाया और उन 'प्रतिकूल' पत्रकारों की सूची बनाई जिन्हें सबक सिखाने की जरूरत थी। आर.एस.एस. से लेकर समाजवादियों तक के हजारों राजनीतिक कार्यकर्ताओं और माकपा कार्यकर्तातों को जेलों में यातनायें दी गईं।

भारत में तानाशाही का भयावह अनुभव तब समाप्त हुआ जब जनता ने मार्च 1977 लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को सत्ता से उखाड़ फेंका। तबसे चालीस वर्ष बीत चुके हैं। क्या हमें इन स्मृतियों का अन्त नहीं कर देना चाहिये? इसका उत्तर है नहीं क्योंकि उन्हें दूर–दूर तक ग्लानि नहीं है जिन्होंने आपातकाल के दौरान इतना जुल्म किया। उन्हें कोई प्रायश्चित भी नहीं है इसलिए आपातकाल को कभी नहीं भुलाना चाहिए और उन्हें कभी माफ नहीं करना चाहिए जिन्होंने भारत को तानाशाही में डूबो दिया था। कौन जानता है कि वे कब फिर ऐसा कर बैठें?[22]

23. लोकतंत्र पर लगा था ग्रहण :–

भारत की गिनती दुनिया के सबड़े बड़े लोकतांत्रिक देशों में होती है। सवा सौ करोड़ का यह देश लोकतंत्र में आस्था रखने वाले दूसरे देशों के लिए मिसाल है। तमाम अन्तर्विरोधी के बावजूद यहाँ लोकतंत्र की बयार सी बहती रही है और लोकतंत्र समृद्ध भी हुआ है। लेकिन यह भी सच है कि आजादी के इन 68 सालों में एक दौर ऐसा भी आया है जब लोकतंत्र पर ग्रहण भी लगा। आज का स्पॉटलाइट और साथ में एक विशेष पेज आपातकाल से जुड़े तमाम पहलुओं को समेटे हुए है ...

देश की संस्कृति में नहीं है तानाशाही रवैया –

भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता सुब्रमण्यम स्वामी का कहना है कि देश की संस्कृति में लोकतंत्र रचा–बसा है। यहाँ के लोगों को तानाशाही बर्दाश्त ही नहीं है। आपातकाल तो विघ्न था जिसका जनता ने कांग्रेस के खिलाफ वोट देकर प्रतिकार किया। पेश है कि उनसे हुई, राकेश रंजन की बातचीत के प्रमुख अंशः

आज के दौर में आपाताकल के बारे में सोचते हैं, तो क्या लगता है?

अंग्रेजों की गुलामी का ही असल है कि जो हमारे विचारों के विपरीत बात करते हैं, हम उन्हें सुन नहीं पाते। आपातकाल के दौर में भी शासन विरोधी स्वर सुनने कोई तैयार नहीं था। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का दमन हो रहा था हालांकि हमारी संस्कृति लोकतांत्रिक रही है। यह हमारी हिन्दू संस्कृति ही है जो सभी धर्मों को स्वीकारती है। भिन्न मतों का आदर करती रही है। शास्त्रार्थ की परम्परा अन्य किसी संस्कृति में नहीं मिलती। लोकतंत्र हमारी परम्परा में रचा–बसा है। बीच–बीच में विघ्न आए हैं और आपातकाल भी ऐसा ही विघ्न था।

आपातकाल के दौर में सेंसरशिप देखकर कैसा लगा था?

आपातकाल के दौर में जब सेंसरशिप लागू थी, तब भी मैं गाँवों में जाकर किसानों से मिलता था। अपनी बात रखता था। देश ही नहीं मैं तो आपातकाल के विरोधी

रहे मित्रों की सहायता से विदेश भी गया। एक बार नहीं दो बार गया। वहाँ भी आपातकाल के विरोध में खूब प्रचार किया। यहीं नहीं एक बार तो संसद में आकर भी इसके खिलाफ करीब एक मिनट बोलकर गायब हो गया। यह तभी संभव हो सका, जबकि हमारे देश में आपातकाल के विरोध में खड़े थे।

आज के दौर की तुलना आपातकाल से की जाए तो ...

जहाँ तक आडवाणी जी के बयान संदर्भ में बात कर रहे हैं तो वे स्पष्टीकरण दे चुके हैं कि जब तक भाजपा सत्ता में है, तब तक तो आपातकाल नहीं लगेगा। इसका अर्थ बिल्कुल साफ है कि भाजपा के कामकाज के तरीकों से जोड़कर उनके वक्तव्य को देखना अनुचित है।

ये तो मानना पड़ेगा कि आपातकाल के दौर में अनुशासन था ......

हमारी संस्कृत में है ही नहीं तानाशाही रवैया। आपातकाल के दफ्तरों में बाबू समय पर आने लगे थे। रेलगाड़ियाँ समय पर चलने लगी थीं। स्पष्ट कर दूँ कि भले ही कुछ समय तक कार्य अनुशासनात्मक रूप से चला लेकिन धीरे–धीरे लोगों को समझ में आने लगा कि यह कड़ा अनुशासन वास्तव में मनमानी से बचने की कोशिश हैं शासन की मनमानी को सिर झुकाकर मानते चलने को सही नहीं कहा जा सकता। धीरे–धीरे जनता समझने लगी तो इसके खिलाफ बोलने भी लगी। हमारी संस्कृति ही ऐसी है कि हम लम्बे समय तक तानाशाही सहन नहीं कर सकते।[23]

संदर्भ –

1– मुखर्जी, प्रणव 'द ड्रामेटिक डिकेड : द इन्दिरा गांधी ईयर्स' रूपा पब्लिकेशन, इण्डिया, 2014

2– नायर, कुलदीप : 'द जजमेंट : इन साइड स्टोरी ऑफ द इमरजेंसी इन इंडिया' (विकास पब्लिशिंग हाउस) 1977, पृष्ठ संख्या–155

3– तत्रैव पृष्ठ संख्या–2

4– चतुर्वेदी, गीता ''भारतीय राजनीतिक व्यवस्था'' पंचशील प्रकाशन, 2010, पृष्ठ संख्या–171

5– वसु, डीडी ''भारत का एक संविधान'' 2012, पृष्ठ संख्या– 177

6– कौशिक सुशीला 'भारतीय शासन एवं राजनीति' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1984 पृष्ठ संख्या–163

7– तत्रैव

8– डॉ. अरूण भगत, महात्मा गांधी कांशी विद्यापीठ, पीएचडी सन् 2009

9– कुलदीप नायर, वरिष्ठ पत्रकार : इंडियन एक्सप्रेस के साक्षात्कार पर आधारित।

10– कपूर, कूमी, 'द इमरजेंसी – ए पर्सनल हिस्ट्री, पैग्विन वाइकिंग' पेनजियन बुक लिमिटेड, 18 जून, 2015

11– दैनिक जागरा, 25 जून, 2015 आगरा–मथुरा पृष्ठ संख्या–11

12– राजस्थान पत्रिका, गुरूवार, 25 जून 2015 पृष्ठ संख्या–9

13– दैनिक जागरण, आगरा/मथुरा 25 जून 2015, पृष्ठ सख्या–1

14– तत्रैव

15– तत्रैव

16– तत्रैव

17– तत्रैव

18– राजस्थान पत्रिका, 25 जून 2015, अलवर, पृष्ठ संख्या–9

19– तत्रैव

20– दैनिक जागरण, 25 जून 2015

21– तत्रैव

22– तत्रैव

23– राजस्थान पत्रिका, गुरूवार, अलवर, 25 जून 2015

अध्याय पंचम

आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य, राजनीतिक परिवर्तन, राजनीतिक दलों पर उसका प्रभाव, राजनीतिक चेतना और बनती-बिगडती राजनीतिक पार्टियों की विवचेना।

अध्याय–पंचम

आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य, राजनीतिक परिवर्तन, राजनीतिक दलों पर उसका प्रभाव, राजनीतिक चेतना और बनती–बिगडती राजनीतिक पार्टियों की विवचेना।

1. आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य :–

25 जून, 1975 को देश में आपातकाल (आन्तरिक) की घोषणा के साथ करीब–करीब सभी विपक्षी नेताओं एवं प्रमुख कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। नवम्बर, 1976 में लोकसभा का कार्यकाल एक वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया था, इस दृष्टि से छठा आम चुनाव मार्च 1978 में होना था लेकिन तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने फैसला लिया कि छठी लोकसभा का चुनाव मार्च 1977 में हो जाना चाहिए। लोकसभा भंग करने की उनकी सिफारिश राष्ट्रपति ने स्वीकार कर ली। आपातस्थिति हटाई तो नहीं लेकिन इतनी ढील अवश्य दी गई कि राजनीतिक दलों को कानूनी कार्यकलापों और चुनाव प्रचार में कोई कठिनाई नहीं हो।

छठें आम चुनाव कराये जाने की आकस्मिक घोषणा ने विभिन्न प्रतिपक्षी राजनीतिक दलों के समक्ष गहन चुनौती उत्पन्न कर दी और आपसी विलय की विचारणा को अनिवार्य बना दिया। आपातकाल के दौरान प्रतिपक्षी नेताओं को आपसी विचार–विमर्श का अनायास ही अवसर मिल गया था। जेल से छूट कर बाहर आये नेताओं के लिए यर्थाथ को टालने या बंटे–बिखरे रहने के कारण स्वयं अपने अस्तित्व के विलोप का खतरा साफ था अतः उनके अपने–अपने पृथक अस्तित्व को समाहित करने तथा देश में व्याप्त राजनीतिक अभिशाप की स्थिति को समाप्त करने की प्रेरणाऐं सबल बन गईं। सौभाग्य से जयप्रकाश नारायण जैसा प्रभावी नैतिक नेतृत्व भी सुलभ हुआ और जो कार्य वर्षों में नहीं हो पाया वह अवसरजन्य स्थिति कारण कुछ दिनों में संभव हो गया अन्ततः चार विपक्षी दलों (संगठन कांग्रेस,

जनसंघ, भारतीय लोकदल, समाजवादी दल) ने मिलकर मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी का गठन किया।[1] इसी बीच कृषि मंत्री श्री जगजीवनराम ने मंत्रिमण्डल व कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से इतनी लम्बी सेवा करने के बाद अचानक त्याग पत्र दे दिया तथा 'लोकतांत्रिक कांग्रेस' का गठन करके जनता पार्टी के सहयोग से चुनाव लड़ने की घोषणा की। शीघ्र ही जनता पार्टी ने अपना चुनाव घोषण पत्र जारी किया। जिसमें 10 वर्षों के भीतर गरीबी दूर करने, पाँच वर्षों में अस्पृश्यता निवारण तथा बेरोजगारी समाप्त करने के अतिरिक्त सत्ता में आते ही तुरन्त संविधान निर्माताओं की भावनाओं के अनुरूप जनता और सांसद, संसद और न्यायपालिका और कार्यपालिका, राज्य और केन्द्र, नागरिक तथा सरकार के बीच संतुलन स्थापित करने और इसके लिए 42वें संविधान संशोधन अधिनियम को रद्द करने का देशवासियों को वचन दिया गया। उन्होंने तानाशाही के विरूद्ध लोकतंत्र के पक्ष में मत देने का आह्वान किया।

I. विभिन्न पार्टीयों का घोषणा–पत्र :–

चुनाव घोषणा–पत्र किसी भी दल की विचारधारा और मान्यताओं के प्रतीक होते हैं। घोषणाओं के माध्यम से ही राजनीतिक दल अपने विचारों को मतदाताओं के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इनमें राजनीतिक दलों द्वारा मतदाताओं को कतिपय आश्वासन दिये जाते हैं। पाश्चात्य देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं में मतदाताओं के राजनीतिक आचरण को प्रभावित करने में चुनाव घोषणा पत्रों का विशिष्ट स्थान होता है लेकिन भारत के पिछले पांच संसदीय निर्वाचनों का इतिहास यह बताता है कि यहाँ के राजनीतिक दल चुनावों की औपचारिकता मात्र पूरा करने के लिए ही घोषणापत्रों का प्रकाशन करते रहे हैं। अब तक के चुनावों में चुनाव प्रचार के समय घोषणा पत्रों को प्राथमिकता प्रदान नहीं की गई, अपितु दूसरे पक्षों पर अधिक बल दिया जाता रहा। विगत चुनावों में भारतीय मतदाताओं के आचरण से इस बात की पुष्टि हो जाती है कि उन्होंने भी मतदान करते समय घोषणापत्रों को

आधार नहीं बनाया। इन सब वास्तविकताओं के बावजूद चुनावों में घोषणापत्रों के महत्व से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

इन निर्वाचन में भी मतदाताओं को आकर्षित करने हेतु राष्ट्रीय स्तर और क्षेत्रीय राजनीतिक दलों ने अपने–अपने चुनाव घोषणापत्र प्रकाशित किये। जहाँ कांग्रेस ने अपने घोषणा पत्र में स्थिर सरकार, समाजवाद, गरीबी और असमानता को दूर करने पर बल दिया, वहीं दूसरी तरफ जनता पार्टी और उसके सहयोगी दलों और साम्यवादी दलों ने आपातकाल की आलोचना करते हुए देश में लोकतन्त्रीय स्वरूप की पुर्नस्थापना हेतु नागरिक स्वतन्त्रताओं को प्रतिष्ठित करने का आश्वासन दिया। देश के विभिन्न राजनीति दलों के घोषणापत्र इस प्रकार से थे :–

(अ) जनतापार्टी का घोषणापत्र[2]

10 फरवरी, 1977 को जनता पार्टी के उपाध्यक्ष चौधरी चरण सिंह ने अपने दल का चुनाव घोषणापत्र जारी किया। घोषणापत्र में आपातकाल के दमनचक्र, परिवार नियोजन की ज्यादतियों, सत्ता के केन्द्रीयकरण और मौलिक अधिकारों के हनन के लिए सरकार की निन्दा की गई। घोषणापत्र में दल के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दर्शन को मतदाताओं के सम्मुख रखा गया। गाँधीवादी समाजवाद को घोषणापत्र का मुख्य आधार बताया गया। घोषणापत्र में दो मुख्य आधार ''अर्थतन्त्र और प्रशासन का पूर्ण विकेन्द्रीयकरण'' प्रचलित किये गये। भय का वातावरण, सत्ता के गैर संवैधानिक केन्द्र, मजदूरों पर अत्याचार और 42वें संविधान संशोधन के लिए सरकार की निन्दा की गई।[3] घोषणापत्र में ''रोटी के साथ आजादी'' का स्वर प्रमुख था।

राजनीतिक क्षेत्र में जनता पार्टी ने निर्भयता का वातावरण बनाने और लोकतन्त्र की पुर्नस्थापना करने हेतु 19 सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया।[4] इस कार्यक्रम में आपातस्थिति को समाप्त करने, आन्तरिक सुरक्षा कानून को हटाने, 42वें

संविधान संशोधन को समाप्त करने, संविधान के अनुच्छेद 352 और 356 के दुरुपयोग को रोकने के लिए उनमें संशोधन करने, निर्वाचन प्रणाली में सुधार करने हेतु तारकुन्डे और अन्य विशेषज्ञ समितियों की सिफारिशों को लागू करने, न्यायपालिका की सत्ता को पुनः प्रतिष्ठित करने, कानून के शासन को पुनः स्थापित करने, प्रेस की स्वतन्त्रता को बहाल करने, आकाशवाणी और दूरदर्शन को स्वायत्तशासी संस्थाओं का स्वरूप प्रदान करने, मौलिक अधिकारों की सूची में से सम्पत्ति के अधिकार को हटाने, सामाजिक एजेन्सियों पर सरकारी नियन्त्रण और एकाधिकार को समाप्त करने और सरकारी कर्मचारियों को प्रताड़ित नहीं करने का आश्वासन दिया गया।

आर्थिक कार्यक्रम में सम्पत्ति के मौलिक अधिकार को समाप्त करने, काम प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करने, 10 वर्षों में भुखमरी का अंत करने, योजना प्राथमिकताओं में कृषि और भूमि सुधारों के लिए अधिक धनराशि आवंटित करने, गांवों और शहरों के बीच की विषमता के अंत करने, कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देने, वेतन और मूल्य नीति का निर्धारण करने और जल तथा ऊर्जा के सम्बन्ध में राष्ट्रव्यापी नीति के निर्धारण का संकल्प दोहराया गया।[5]

आश्वासन की राजनीति –

सामाजिक क्षेत्र में शिक्षा सुधार, पेयजल उपलब्ध कराने, स्वास्थ्य बीमा, नगर विकास के लिए वैज्ञानिक नीति, दबाव रहित परिवार नियोजन, नागरिक अधिकार आयोग की स्थापना, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष व्यवस्था, नारी अधिकारों की सुरक्षा करने, युवावर्ग की समृद्धि और गरीबों के लिए कानूनी सहायता प्रदान करने के कार्यक्रम पर विशेष बल दिया गया।[6]

विदेश नीति के क्षेत्र में, उपनिवेशवाद और रंगभेद का विरोध करने, विशुद्ध असंलग्नता की नीति का पालन करने, अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान करने, पड़ौसी देशों के साथ मैत्रिपूर्ण सम्बन्ध कायम करने, निशस्त्रीकरण

और तनाव शैथिल्य का समर्थन किया गया।[7]

प्रतिरक्षा के क्षेत्र में, सेनाओं को आधुनिकतम हथियारों से सज्जित करने, सीमा सुरक्षा बल जैसे अर्द्धसैनिक संगठनों को मजबूत बनाने, भूतर्पूव सैनिकों की सेवाओं का भूमि और जल संरक्षण कार्यक्रमों में उपयोग लिये जाने पर महत्व दिया गया।[8]

दल ने दिल्ली के लिए भी पूरक घोषणा–पत्र प्रकाशित किया। इसमें दिल्ली में विधानसभा की स्थापना करने और शुष्क बन्दरगाह स्थापित करने जैसे 27 सूत्रीय कार्यक्रम का उल्लेख किया गया।[9]

(ब) कांग्रेस का घोषणापत्र :–

8 फरवरी, 1977 ई. को तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने कांग्रेस का घोषणा पत्र जारी किया। घोषणापत्र में मुख्यतः राष्ट्र निर्माण में कांग्रेसी नेतृत्व की भूमिका, वाधीन भारत के लोकतांत्रिक, धर्म–निरपेक्ष और समाजवादी स्वरूप के निर्माण में दल की अहम भूमिका, 1971 के घोषणापत्र में दिये गये आश्वासनों को पूरा करने, 1971 और उसे बाद हुए विपक्षी दलों के गठबंधनों की भर्त्सना करने, आपातकाल की उद्घोषणा को उचित ठहराने, नवीन आर्थिक कार्यक्रम की उपलब्धियों का बखान करने, अनुसूचित जातियों और जनजातियों की दशा में सुधार करने, अल्पसंख्यकों की सुरक्षा का आश्वासन देने, उद्योगों के विकास को प्राथमिकता देने, रोजगार के व्यापक अवसर उपलब्ध कराने, श्रमिक वर्ग के हितों की रक्षा करने और उद्योगों में साझेदारी प्रदान करने, कीमतों को स्थिर रखने और जनता को उचित मूल्य पर आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध कराने, सभी बच्चों को प्राथमिक स्तर पर शिक्षा प्रदान करने, सैकण्डरी और हायर सैकण्डरी के स्तर को ऊँचा उठाने, स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाओं का विस्तार करने, परिवार नियोजन कार्यक्रम में जोर जबरदस्ती नहीं करने, महिलाओं और युवकों की स्थिति में सुधार करने जैसे आश्वासन दिये

गये। घोषणापत्र में भूमि सुधारों को लागू करने, विकास के लाभों को गांवों तक पहुंचाने, 42वें संविधान संशोधन के आर्थिक और सार्वजनिक महत्व का भी उल्लेख किया गया। विदेश नीति के क्षेत्र में, असंलग्नता की नीति को जारी करने, नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग करने और हिन्द महासागर को शांति क्षेत्र घोषित करने की मांग की गई।

घोषणापत्र के अनुसार कांग्रेस एक उद्‌देश्य से बंधी है और वह उद्‌देश्य है देश की एकता स्थापित करना, भारतीय व्यक्तित्व के ह्यास के बिना समाज को आधुनिक बनाना, उद्योगों और कृषि का विकास करना और जनसाधारण को ऊपर उठाकर शोषण को समाप्त करना है। विरोधी दलों पर कटाक्ष करने हुए कहा गया कि उन्होंने 'प्रजातन्त्र खतरे में है' का जो नारा दिया है, वह उन्हीं दलों का नारा है, जिन्होंने का कांग्रेस की प्रगतिशील नीतियों के क्रियान्वयन में बाधाएँ उपस्थित की हैं। कांग्रेस अपनी उपलब्धियों पर गर्व करती है। इंदिरा गाँधी के नेतृत्व में राष्ट्र ने बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया, राजाओं की शाही शैली समाप्त की, बांग्लादेश संकट का हिम्मत से मुकाबला किया, सिक्किम को भारतीय संघ से मिलाया, 1974 ई. में शांतिपूर्ण परमाणु विस्फोट किया, मंहगाई को नियंत्रत किया, आर्यभट्‌ट को अंतरिक्ष में स्थापित करके अंतरिक्ष विज्ञान में प्रवेश किया। यही अकेला दल है जो जो आम आदमी के लिए शांतिपूर्ण परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है।

अन्त में, घोषणापत्र में यह बताया गया है कि कांग्रेस का लक्ष्य गरीबी हटाना और असमानता और अन्याय को समाप्त करना है। चुनाव का उद्‌देश्य केन्द्र में ऐसी शक्तिशाली सरकार की स्थापना करना है जो भारत की स्वतंत्रता की रक्षा करने में सक्षम हो, और जो सहनशक्ति और शांतिपूर्ण परिवर्तन की परम्परा को बनाये रख सके।[10]

(स) लोकतन्त्री कांग्रेस का घोषणा पत्र :–

21 फरवरी, 1977 को लोकतन्त्री कांग्रेस के महासचिव हेमवतीनन्दन

बहुगुणा ने अपने दल का घोषणापत्र जारी किया। 10 पृष्ठीय इस घोषणा पत्र में आपातस्थति को तत्काल समाप्त करने, आंतरिक सुरक्षा कानून को वापिस लेने राजनीतिक बंदियों को तत्काल रिहा करने, आपत्तिजनक सामग्री के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध समाप्त करने, संसद में होने वाली बहस के प्रकाशन पर प्रतिबंध हटाने के संबंध में फिरोज गाँधी समिति की सिफारिशों को लागू करने, चुनाव में मतदाताओं को आतंकित करने के लिए पुलिस और अर्द्धसैनिकों का प्रयोग नहीं करने, आकाशवाणी, समाचार और दूरदर्शन जेसे सरकारी प्रचार के साधनों के संबंध में आपातकाल के पूर्व के नियमों को अपनाने और ''बंदी प्रत्यक्षीकरण'' की सुविधा और न्यायिक पुनरावलोकन को बहाल करने के आश्वासन दिये गये।[11]

घोषणा पत्र में यह दावा किया गया कि इस दल का विकास इसलिए हुआ कि सार्वजनिक जीवन में भय और आतंक समाप्त हो जाये और देश में वैज्ञानिक समाजवाद उत्पन्न हो। आधुनिक भारत के निर्माण में जवाहरलाल नेहरू की कल्पना को साकार करने का आश्वासन दिया गया। दल द्वारा संघीय स्वरूप को बहाल करने, किसी भी संगठन को राष्ट्र विरोधी घोषित करने वाले कानून की न्यायिक समीक्षा करने, राज्यों की इच्छा का विरोध करने, जीवन और स्वतंत्रता के संबंध में न्यायपालिका पर लगाने गये सभी प्रतिबन्धों को समाप्त करने, सम्पत्ति के अधिकार को मूल अधिकारों से हटाने, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों को अनिवार्य रूप से लागू करने, सार्वजनिक उद्योगों का विकास करने और औद्योगिक घरानों पर प्रतिबंध लगाने, उचित मूल्य पर जनता को जीवनोपयोगी वस्तुऐं प्रदान करने, उद्योगों में श्रमिको को साझेदार बनाने, कम से कम समय में भूमि सुधारों को लागू करने, कृषि उत्पादकों को उचित मूल्य प्रदान करने, प्रतिरक्षा और प्रतिरक्षा व्यवसाय को सुदृढ़ करने, जनाकांक्षाओं के अनुकूल प्रशासन में सुधार करने, शिक्षा की समान नीति निर्धारण करने, अल्पसंख्यकों में विश्वास पैदा करने और उर्दू को न्यायोचित स्थान प्रदान करने, अनुसूचित जातियों और जनजातियों को संरक्षण

प्रदान करने, गैर विकासीय खर्च में कमी करके रोजगार के अवसर बढ़ाने, मतदान की आयु 18 वर्ष करने और महिलाओं को विशेष सुविधाऐं प्रदान करने का आश्वासन दिया गया।

विदेशनीति के क्षेत्र में समाजवादी देशों से मित्रता बढ़ाने, पड़ौसी राष्ट्रों और विशेषकर पाकिस्तान और बांग्लादेश से मित्रता बढ़ाने, विश्वव्यापी निशस्त्रीकरण को बढ़ावा देने, आणविक शक्ति का शांतिपूर्ण प्रयोग करने और रंगभेद और उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्ष कर रही शक्तियों का समर्थन करने का संकल्प व्यक्त किया गया। प्रशासनिक ज्यादतियों के लिए न्यायिक जांच कराने तथा आपातकाल के समय पास किये गये जन विरोधी और लोकतंत्र विरोधी कानूनों की समीक्षा करने का भी उल्लेख किया गया। अन्त में, देश के लाखों युवकों, बौद्धिक वर्ग, शिक्षकों, श्रमिकों, किसानो और भूमिहीन श्रमिकों से निर्भयतापूर्वक मतदान करने की अपील की गई।[12]

(द) भारतीय साम्यवादी दल का घोषणा पत्र :–

09 फरवरी, 1977 को भारतीय साम्यवादी दल का चुनाव घोषणा पत्र जारी किया गया। घोषणा–पत्र में चुनाव का महत्व, आपातकालीन स्थिति का समर्थन, आपातकाल के बाद, उभरती नकारात्मक प्रवृत्तियों का विराधे, 10 सूत्रीय कार्यक्रम का उल्लेख, पिछली लोकसभा में भाकपा के सदस्यों द्वारा जनाधिकारों के लिए किया गया। संघर्ष और प्रगतिशील शक्तियों के जन समर्थन का उल्लेख किया गया।

घोषणा पत्र में लोकसभा चुनावों को महत्वपूर्ण बताते हुए यह कहा गया कि इस चुनाव में पूर्ण प्रजातन्त्र और समाजवाद के लिए फैसला होना है। देश की जनता से अनुरोध किया गया कि एकाधिकार विरोधी कार्यक्रमों और 20 सूत्रीय कार्यक्रम के पक्ष में स्पष्ट बहुमत दें। घोषणा पत्र में 1975 के आपातकाल की घोषणा के समर्थन और बाद में सरकार की अधिनायकवादी प्रवृत्तियों के विरोध की भी चर्चा

की गई। इसमें यह भी उल्लेख था कि सरकार की नकारात्मक प्रवृत्तियों के विरोध के फलस्वरूप भारतीय साम्यवादी दल (भाकपा) को निन्दा और बदनामी के अभियान का शिकार बनना पड़ा।

दल ने जनता के सम्मुख 10 सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया। लोकतंत्र की रक्षा हेतु आपातकाल को समाप्त करने, प्रेस सेंसरशिप को हटाने, सत्तारूढ़ दल के पक्ष में आकाशवाणी, दूरदर्शन और समाचार के दुरूपयोग को रोकने, 42वें संविधान संशोधन के जन विरोधी कानूनों को समाप्त करने, संसद की कार्यवाही को समाप्त करने और भूमि सुधार लागू करने के लिए लोकप्रिय समितियों के निर्माण की मांग की गई। द्वितीय मूल्यों को स्थिर रखने के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली को मजबूत करने, अनिवार्य वस्तुओं को उचित दाम पर उपलब्ध कराने, अनाज के थोक व्यापार का राष्ट्रीयकरण करने और जमाखारों के लिए बैंक से ऋण की व्यवस्था बन्द करने की बात कही गई। तृतीय आर्थिक स्वतन्त्रता और अर्थव्यवस्था मजबूत करने के लिए तेजी के साथ औद्योगिकीकरण और रोजगार की सुविधाऐं प्रदान करने, विश्व बैंक और अन्य नव साम्राज्यवादी शक्तियों के दबाव का मुकाबला करने, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की घुसपैठ को रोकने, सार्वजनिक क्षेत्र में प्रगति को प्रोत्साहन देने, मजदूरों की साझेदारी को बढ़ावा देने, चीनी, पटसन, विदेशी दवाईयों की कम्पनियों, बैंक उद्योग का पूर्ण राष्ट्रीयकरण करने, विगत दो वर्षों में बड़े उद्योगों को दी गई सभी सुविधाओं को निरस्त करने, छोटी इकाईयों को प्रोत्साहन देने, अधिक रोजगार प्रदान करने वाले उद्योगों का विकास करने और वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए अधिक पूंजी लगाने का आश्वासन दिया गया।

चतुर्थ, श्रमिक वर्ग के लिए न्यूनतम मजदूरी और बोनस प्रदान करने, अनिवार्य जमा योजना को समाप्त करने, कारखानों में तालाबन्दी और छंटनी पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाने, मजदूर संगठनों को हड़ताल और अन्य अधिकार प्रदान करने और सरकार द्वारा मजदूरों के बारे में बनाये जाने वाले कानूनों में उनकी राय

लिये जाने जैसे कार्यक्रम निर्धारित किये गये। पंचम्, घोषणा पत्र में किसानों, कृषि मजदूरों और जनजातियों के बारे में यह मांग की गई कि किसानों को उनके उत्पादन का सही मूल्य मिले। उन्हें ऋण, सिंचाई और कृषि सामग्री सस्ते दाम पर प्राप्त हो। काश्तकारों और बटाईदारों के हितों की रक्षा हों। बंधुआ मजदूरी प्रथा समाप्त हो। कृषि मजदूरों के लिए जीवनोपयागी मजदूरी तय की जायें। पूर्ण भूमि सुधार लागू किये जायें। बंजर जमीन भूमिहीनों में वितरित की जाये। षष्ठम्, जुलाहों और अन्य कारीगरों के बारे में दल ने मांग की कि उन्हें सस्ते दाम पर कच्चा माल मिले। इन दस्तकारों की प्रभावशाली सहकारी संस्थाऐं बनाई जानी चाहिए। सप्तम्, महिलाओं के बारे में दल के घोषणा पत्र में स्पष्ट किया गया कि महिलाओं को बराबरी का स्तर प्रदान करने वाले कानूनों को पूरी तरह से लागू किया जाये। समान काम के लिए समान वेतन दिया जाना चाहिए। परिवार कल्याण का व्यापक कार्यक्रम बने, जिसमें मां और बच्चे के बारे में यह मांग की गई कि उन्हें काम प्राप्त करने का अधिकार दिया जाये। मताधिकार की आयु 18 वर्ष की जाये। शिक्षा के क्षेत्र में इस तरह का आमूलचूल परिवर्तन किया जाये कि उसमें धर्मनिरपेक्षता और समाजवादी विचार दर्शन आ जाये। शिक्षण संस्थाओं के प्रशासन में विद्यार्थियों को प्रतिनिधित्व दिया जाये। सस्ती पुस्तकें और भोजन सुविधाऐं उपलब्ध हों। प्राथमिक और माध्यमिक शालाओं के अध्यापकों के वेतन में वृद्धि हो। कॉलेज शिक्षको के बारे में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सिफारिशों को लागू किया जाये। सभी अध्यापकों को सेवा सुरक्षा और लोकतांत्रिक अधिकार प्राप्त हों। नवम्, मुसलमानों, अन्य अल्पसंख्यकों और हरिजनों के बारे में यह मांग की गई कि प्रशासन ऐसे कदम उठाये जिससे मुसलमान, अन्य अल्पसंख्यक और पिछड़े वर्ग के अधिकार सुरक्षित रह सके। छूआछूत कानून को मजबूत बनाया जाये और जो इन वर्गों पर अत्याचार करते हैं, उनको दण्ड देने की सख्त व्यवस्था हो। दशम्, विदेश नीति के बारे में दल ने यह व्यक्त किया कि भारत की साम्राज्यवाद विरोधी नीति को मजबूत किया जाये।

विदेशी अड्डों, विशेषकर डियगोगर्सिया के विरूद्ध विश्व जनमत जाग्रत किया जाये। असंलग्नता की नीति को दृढ़ किया जाये और आर्थिक संबंधों में उत्तरोत्तर वृद्धि की जाये। अंत में, भारतीय साम्यवादी दल ने मतदाताओं से अनुरोध किया कि वे दल के प्रत्याशियों को मत और अन्य प्रजातांत्रिक और प्रगतिशील शक्तियों को समर्थन दें।[13]

(य) मार्क्सवादी साम्यवादी दल का घोषणा पत्र :–

मार्क्सवादी साम्यवादी दल ने अपने चुनाव घोषणा पत्र में आपातस्थिति को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं करने, आंतरिक सुरक्षा कानून को जारी रखने, अदालतों को अधिकारों से वंचित रखने, प्रेस को नियंत्रित करने, 42वें संविधान संशोधन द्वारा संघीय स्वरूप को क्षतिग्रस्त करने, जीवनोपयोगी वस्तुओं के मूल्य बढ़ने, कार्यपालिका पर संसद की सर्वोच्चता को समाप्त करने, सरकारी कर्मचारियों और मजदूरों के मंहगाई, भत्ते, वेतन और बोनस को रोकने, बढ़ती बेरोजगारी, दमनात्मक परिस्थितियों में लोकसभा चुनाव सम्पन्न कराने, जबरदस्ती नसबन्दी कराने और अन्य अपराधों के लिए कांग्रेसी सरकार को उत्तरदायी ठहराते हुए उसकी निन्दा की। घोषणापत्र में यह भी आरोप लगाया कि कांग्रेस ने 20 सूत्री कार्यक्रम को लागू नहीं किया।[14]

चुनाव घोषणा पत्र में दल के 12 सूत्रीय कार्यक्रम का भी उल्लेख किया गया। सभी वामपंथी और प्रजातांत्रिक शक्तियों को संगठित होकर कांग्रेस की नीतियों को पराजित करने का आव्हान किया। इसमें निम्नलिखित बिन्दुओं पर जोर दिया गया। प्रथम, आपातकाल को हटाया जावे। सभी राजनीतिक बंदियों को रिहा किया जाये। आन्तरिक सुरक्षा कानून और 42वें संविधान संशोधन को समाप्त किया जाये। आपत्तिजनक सामग्री के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध समाप्त किया जाये। द्वितीय, यह दल विदेशी पूंजी का राष्ट्रीयकरण करेगा और भारतीय व्यापार में बहुराष्ट्रीय व्यापार संस्थाओं और व्यक्तिगत पूंजी पर प्रतिबन्ध लगायेगा। तृतीय, विदेशी ऋण की अदायगी पर सीमा बांधी जायेगी। चतुर्थ, एकाधिकारवादी संस्थाओं का राष्ट्रीयकरण

किया जायेगा और चीनी, कपड़ा, पटसन, सीमेंट और औषधि उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जायेगा। मध्यम और छोटे उद्योगों को उचित सहायता दी जायेगी। पंचम्, विदेशी व्यापार को सरकार अपने हाथ में लेगी। षष्ठम्, सार्वजनिक क्षेत्र में अफसरशाही और भ्रष्टाचार को समाप्त किया जायेगा। सप्तम्, मजदूर संघों को यह अधिकार दिया जायेगा कि वे सामूहिक सौदेबाजी से अपने अधिकारों को प्राप्त करें और इन संघों के प्रतिनिधित्व का निर्णय गुप्त मतदान से किया जायेगा। सभी मजदूरों के लिए आवश्यकतानुसार न्यूतनम मजदूरी तय की जायेगी और जीवन स्तर से मंहगाई का बराबर मुआवजा दिया जायेगा। हाल ही में पारित बोनस कानून को समाप्त कर दिया जायेगा। अष्ठम्, जमींदारों की सारी भूमि सरकार अधिग्रहित करके जमींदारी प्रथा को समाप्त कर देगी और उसका वितरण भूमिहीन मजदूरों और किसानों में कर दिया जायेगा। उन्हें कम से कम आठ रूपये प्रतिदिन की मजदूरी निश्चित रूप से दी जायेगी। गरीब किसानों के सभी ऋण माफ कर दिये जायेंगे और गांवों में रहने वाले गरीब किसानों, मजदूरों और भूमिहीनों के लिए आसान ऋण की व्यवस्था की जायेगी। उन्हें खेती में काम आने वाली कच्ची सामग्री और उपकरण सस्ते दामों पर उपलब्ध कराये जायेंगे। इन लोगों के उत्पादन से उन्हें उचित दाम मिले, इसके लिए सरकार उचित दामों पर किसानों का उत्पादन खरीदेगी। किसानों पर कर कम करेगी तथा हरिजनों के विरूद्ध अत्याचार करने वालों के विरूद्ध सख्त कदम उठायेगी। नवम्, आवश्यक वस्तुओं पर भारी कर तथा लेवी हटाकर मूल्यों को गिराने का प्रयास किया जायेगा। अनाज के थोक व्यापार को सरकार अपने हाथ में लेगी। जन समितियों के निर्देशन में आवश्यक वस्तुओं का वितरण किया जायेगा। जमींदारों के अतिरिक्त अनाज की आवश्यक रूप से सरकारी खरीद की जायेगी। दशम्, काम करने के अधिकार को संविधान के मौलिक अधिकारों मे शामिल किया जायेगा और बेरोजगारी भत्ते की व्यवस्था की जायेगी। ग्यारहवें, 14 वर्ष तक की आयु तक निःशुल्क शिक्षा आवश्यक मानी जायेगी और निरक्षरता को समाप्त कर दिया

जायेगा। विदेशनीति के सम्बन्ध में सतत साम्राज्यवादी विरोधी तथा समाजवादी देशों के साथ सहयोग की नीति अपनाई जायेगी।

घोषणा पत्र में यह भी संकल्प व्यक्त किया गया कि दल ने जहां तक संभव हो सके, कांग्रेस के विरूद्ध अन्य दलों से समझौता कर विपक्षी मतों के विभाजन को रोकने का निर्णय किया है। यह दल उन सभी दलों और गुटों के साथ सहयोग करने के लिए तैयार है, जो प्रजातन्त्र की रक्षा के लिए कांग्रेस से संघर्ष कर रहे थे।[15]

(र) क्षेत्रीय दलों के घोषणा पत्र :—

पंजाब में अकाली दल और तमिलनाडु में द्रमुक और अन्ना द्रमुक ने भी अपने चुनाव घोषणा पत्र जारी किये। पिछले संसदीय चुनावों की तुलना में इस बार इन दलों के घोषणा पत्र का महत्व इसलिए अधिक था कि पहली बार ये दल राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिक दलों के सहयोगी बनकर चुनाव लड़ रहे थे। अतः इन दलों का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सोचना अपरिहार्य था परन्तु अपनी क्षेत्रीय प्रकृति को ध्यान में रखकर इन दलों ने प्रमुख रूप से क्षेत्रीय समस्याओं तक ही अपने को सीमित रखा जिन अन्य प्रमुख क्षेत्रीय दलों द्वारा घोषणा पत्र जारी किये गये, उनमें से प्रमुख थे — जम्मू कश्मीर में नेशनल कांफ्रेस, पश्चिमी बंगाल में फारवर्ड ब्लॉक और महाराष्ट्र में पीजेन्ट एण्ड वर्कस पार्टी। इनके अलावा रिपब्लिकन पार्टी (खोबरगड़े गुट) रिपब्लिकन पार्टी, गवई गुट और मुस्लिम लीग ने भी अपने चुनाव घोषणा पत्र प्रकाशित किये।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि विपक्षी दलों ने आपातकाल के 19 महीनों में हुई कथित ज्यादतियों के लिए सत्तारूढ़ कांग्रेस की भर्त्सना करते हुए देश के लोकतंत्रीय और संघीय स्वरूप को पुनः बहाल करने का स्पष्ट आश्वासन और संकल्प भारतीय मतदाओं के सम्मुख प्रस्तुत किया। साथ ही उनके घोषणा पत्रों में नागरिक अधिकारों को पुनः बहाल करने उनकी सुरक्षा को

सुनिश्चित करने वाले प्रावधानों का नियमन करने आन्तरिक सुरक्षा कानून को समाप्त करने, न्यायपालिका की स्वतत्रंता और निष्पक्षता को पुनः प्रतिष्ठित करने, स्वैच्छिक आधार पर परिवार नियोजन को लागू करने का आश्वासन दिया गया। दूसरी तरफ सत्तारूढ़ कांग्रेस ने शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की स्थापना करने, विपक्षी अराजकता को रोकने और देश के आर्थिक विकास को आगे बढ़ाने के लिए स्थायित्व जैसे मुद्दों को अपने घोषणापत्र का आधार बनाया। क्षेत्रीय दलों के घोषणापत्रों में राज्यों के लिए अधिक अधिकारों की मांग का स्वर प्रमुख था। लेकिन यह विडम्बना ही मानी जावेगी कि चुनाव प्रचार के समय सभी राजनीतिक दलों ने अपनी चुनाव सभाओं में घोषणापत्रों का यदा–कदा ही उल्लेख किया। इसी तथ्य को इंगित करते हुए कुलदीप नायर ने लिखा है कि ''चुनाव सभाओं में घोषणा पत्रों का उल्लेख भी नहीं हुआ। राजनीतिक दलों ने यदा कदा ही इनका उल्लेख किया। केवल दो ही नारों की प्रतिध्वनि सुनाई देती थी। विपक्ष 'लोकतन्त्र बनाम अधिनायकवाद' और कांग्रेस 'लोकतंत्र बनाम अराजकता' नारे का उल्लेख करती थी।[16] इन नारों ने घोषणा पत्र के महत्व को नगण्य बना दिया। इन घोषणा पत्रों का विश्लेषण करने से एक बात यह भी स्पष्ट हो जाती है कि विदेशनीति के क्षेत्र में सभी दलों ने असंलग्नता की नीति का पुरजोर समर्थन किया, यद्यपि विपक्षी दलों ने ''विशुद्ध असंलग्नता'' की नीति को अपनाने का संकल्प व्यक्ति किया। क्षेत्रीय दलों के घोषणा पत्र में भी देश की अखण्डता को सुरक्षित रखने की वचनबद्धता का स्वर विद्यमान था।

(II) विभिन्न पार्टियों द्वारा प्रत्याशियों का चयन :–

(अ) जनता पार्टी द्वारा प्रत्याशियों का चयन :– जब जनता पार्टी के नेता जेल से रिहा हो गये और उन्होंने 21 जनवरी 1977 को प्रत्याशियों का चयन और घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए 9 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। चौधरी चरण सिहं (लोकदल का नेता) को जम्मू कश्मीर, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, बिहार, राजस्थान और मध्यप्रदेश का

संयोजक बनाया गया । संगठन कांग्रेस के नेता नीलम संजीव रेड्डी को दक्षिण भारत के राज्यों आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, केरल और तमिलनाडू का उत्तरदायित्व सोंपा । भारतीय जनसंघ और सोशलिस्ट पार्टी के किसी भी नेता को चुनाव अभियान की बागडोर नहीं सौंपी गयी।

जनता प्रत्याशियों के चयन मापदण्डों के बारे में अनेक अभिमत सामने आये। इसमें दल बदलुओं को दल का प्रत्याशी नहीं बनाये और युवकों को प्रत्याशी बनाने पर जोर दिया गया। एक विचार ये भी था । ऐसे प्रत्याशियों का चयन करो जो कांग्रेस को चुनौती दे सके। दल में ऐसे प्रत्याशियों को प्राथमिकता दी जाये जो आपातकाल के समय जेल गये थे। इसके अलावा जिन नेताओं ने कांग्रेस से विद्रोह किया और चुनाव घोषणा के बाद कांग्रेस छोडने वालों को टिकट दिया गया । आपातकाल का विरोध करने वाले बुद्धिजीवियों को भी टिकट दिया गया और यह भी कहा गया कि चरित्रवान और निष्ठावान लोगों को ही चुना जाये ।

(ब) कांग्रेस द्वारा प्रत्याशियों का चयन :– आपातकाल में उसकी राजनैतिक गतिविधियां चरम सीमा में पहुंच गयी। सारे देश में स्थान–स्थान पर सभाएं और सम्मेलन आयोजित किये गये। देश के लगभग सभी समाचार पत्र (इण्डियन एक्सप्रेस और स्टेट्समेन को छोड़कर) और पत्र–पत्रिकाऐं उसका खुलकर समर्थन कर रहीं थी। वित्तीय साधनों की दृष्टि से उसके पास कोई कमी नहीं थी।

2 फरवरी 1977 तक दल की केन्द्रीय चयन समिति को अपने प्रत्याशियों का चयन करना था। इस समिति के सदस्यों में प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी, देवकान्त बरूआ, जगजीवनराम, यशवंत चव्हाण, सिद्धार्थ शंकर राय, सी.सुब्रहमण्यम के मलप्पा, बृहमानंद रेडडी और शंकरदयाल सिहं शामिल थे।

कांग्रेस दल की विजय की संभावनाओं को देखते हुए दल के टिकट

प्राप्त करने के लिए जबरदस्त होड लगी हुई थी। प्रादेशिक स्तर पर कांग्रेस का टिकट प्राप्त करने वालों ने भारी संख्या में अपने आवेदन पत्र प्रस्तुत किये। आंध्रप्रदेश कांग्रेस कमेटी के पास 42 स्थानों के लिए 200, बम्बई शहर के 6 संसदीय क्षेत्रों के लिए 135 और कर्नाटक के 28 स्थानों के लिए 750 आवेदन पत्र प्राप्त हुए।[17]

संजय गाँधी द्वारा तैयार सूची को रद्द करना पड़ा और युवक कांग्रेस के बहुत कम सदस्यों को टिकट प्रदान किये गये। अधिकांशतः वर्तमान सदस्यों को दल का प्रत्याशी बनाया गया। केन्द्रीय चयन समिति ने भंग लोकसभा के 252 सदस्यों को पुनः टिकट प्रदान किये। इस तरह 103 सदस्यों को टिकट नहीं दिया गया। कांग्रेस के प्रत्याशियों की सूची में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी उनके वरिष्ठ मंत्रिमण्डलीय सहयोगियों और संजय गाँधी का नाम उल्लेखनीय था। संजय गाँधी की उम्मीदवारी को ब्रिटिश समाचार पत्रों ने प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया। कुछ समाचार पत्रों ने उनके चित्र प्रकाशित किये।[18] इनके अलावा राजस्थान और आंध्रप्रदेश के राज्यपालों जोगिन्दर सिहं और आर.डी. भंडारे को भी दल का प्रत्याशी चुना गया ।

(III) कांग्रेस और गैर–कांग्रेस का मोर्चा :– लोकसभा का यह चुनाव अत्यधिक उत्तेजना और प्रतिस्पर्धा के वातावरण में लड़ा गया और गैर–कांग्रेस की तुलना में कांग्रेस की स्थिति अधिक सुविधाजनक थी। कांग्रेस को यह विश्वास था कि उसकी विजय निश्चित है और सरकार निर्माण में सफल हो जायेगी। आपातकाल में विपक्षी दलों के नेताओं और कार्यकर्ताओं की गिरफ्तारी और उन पर लगाये गये प्रतिबंधों से मनोबल गिर गया था।

(अ) गैर कांग्रेसवाद की चुनौतियाँ :– 23 जनवरी 1977 को चार गैर साम्यवादी विपक्षी दलों (भारतीय जनसंघ, संगठन कांग्रेस, भारतीय लोकदल और सोशलिस्ट पार्टी) ने जनता पार्टी के नाम से नये दल का गठन किया। इसके साथ यह निश्चय

किया कि दल के सभी प्रत्याशी एक ही चुनाव चिन्ह पर चुनाव लड़ेगें। परिणामस्वरूप जनता पार्टी और लोकतंत्री कांग्रेस के प्रत्याशियों ने भारतीय लोकदल के चुनाव चिन्ह "हलदर" को अपने तमिलनाडू में, जनता पार्टी के प्रत्याशियों ने संगठन कांग्रेस के चुनाव चिन्ह "चरखा काटती हुई महिला" पर चुनाव लड़ रहे थे।

प्रभुत्व क्षेत्रीय दलों में अकाली दल, तमिलनाडू में द्रमुक और अन्ना दुमुक, महाराष्ट्र में पीजेन्ट एण्ड वर्कस पार्टी, जम्मू कश्मीर में नेशनल कांफ्रेंस, गोवा में गोयान्तक पार्टी, केरल में केरल कांग्रेस और मुस्लिम लीग, पश्चिम बंगाल में फॉरवर्ड ब्लॉक और आर एम जी और नागालेंड यूनाइटेड फ्रंट चुनाव लड़ रहे थे।

निर्वाचन आयोग ने 39 ऐसे राजनीतिक दलों की एक सूची जारी की गयी जो आयोग में पंजीकृत तो थे, किन्तु उन्हें मान्यता प्राप्त नहीं थी ।

विपक्षी दलों की रणनीति कांग्रेस को प्रबलतम चुनौती देने की थी । उन्होंने निश्चय किया कि कांग्रेस के विरूद्ध अपने मतों के विभाजन को रोकेंगे और वो कांग्रेस के विरूद्ध एक ही प्रत्याशी खडा करना चाहते थे । इसलिए उन्होंने कांग्रेस के विरूद्ध विजय प्राप्त करने के लिए विपक्षी दलों ने गठबंधन कर लिया।

(ब) मोर्चा :– पहला मोर्चा जनता पार्टी और लोकतंत्री कांग्रेस वाला मोर्चा था । इस मोर्चे में मार्क्सवादी, साम्यवादी दल, अकाली दल, द्रमुक, रिपब्लिकन पार्टी (खोवरगडे गुट) पीजेन्ट एण्ड वर्कस पार्टी और झारखण्ड पार्टी प्रमुख थे।

मार्क्सवादी साम्यवादी दल और जनता पार्टी में समझौता सत्ता की साझेदारी पर नहीं हुआ। जनता पार्टी के अध्यक्ष मोरारजी देसाई ने यह स्पष्ट कर दिया कि जनता पार्टी मार्क्सवादी साम्यवादी दल का सहयोग तो लेगी लेकिन विजयी होने पर सरकार में शामिल नहीं करेगी।

दूसरा मोर्चा :– कांग्रेस और सहयोगी दलों का था । इस दल ने राष्ट्रीय स्तर पर

किसी भी राजनीतिक दल से समझौता नहीं किया । कांग्रेस ने तमिलनाडू में अन्ना द्रमुक, केरल में मुस्लिम लीग और केरल कांग्रेस, हरियाणा में विशाल हरियाणा पार्टी तथा जम्मू कश्मीर में नेशनल कांग्रेस के साथ चुनाव समझौता किया । भारतीय साम्यवादी दल के साथ राष्ट्रीय स्तर पर कोई समझौता नहीं किया । केवल पश्चिम बंगाल और तमिलनाडू के लिए 15 लोकसभा स्थानों के लिए भी यह समझौता किया गया ।

कांग्रेस के नेताओं की यह धारणा इसलिए उत्तरदायी रही राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय साम्यवादी दल के साथ किया गया समझौता उनके लिए घाटे का सौदा रहेगा क्योंकि भारतीय साम्यवादी दल का पश्चिम बंगाल केरल और तमिलनाडू में ही प्रभाव है। यदि राष्ट्रीय स्तर पर समझौता किया गया तो दल को हानि उठानी पड़ सकती है।

(स) संघर्ष :– इस संसदीय चुनाव में कांग्रेस और जनता पार्टी और उसके सहयोगी दलों में सीधा संघर्ष था । जनता पार्टी ने 384 प्रत्याशी खड़े किये जबकि इस सहयोगी दल लोकतंत्री कांग्रेस ने 39 प्रत्याशी खडे किये ।

जनता पार्टी और लोकतंत्री कांग्रेस में चुनाव में समझौता किया लेकिन कुछ स्थानों पर दोनों ही दलों में "मैत्रीपूर्ण संघर्ष था" कांग्रेस ने 493 स्थानों पर अपने प्रत्याशी खड़े किये और 50 स्थान सहयोगी दलों और व्यक्तियों के लिए छोड़ दिये।

चुनाव गठबंधनों से प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में खड़े हुए प्रत्याशियों की संख्या स्पष्ट हुई। इसके अनुसार 100 निर्वाचन क्षेत्रों में सीधा, 115 में त्रिकोणीय, 106 में चतुष्कोणीय, 66 में पंचकोणीय, 61 में षठकोणीय, 38 में सप्तकोणीय, 2 में बारहकोणीय, 2 में तेरह कोणीय और 2 में चौदह कोणीय संघर्ष था । महाराष्ट्र में सर्वाधिक रूप से 15 स्थानों के लिए सीधा संघर्ष था, इसके बाद महाराष्ट्र में 11, उत्तरप्रदेश, केरल और पश्चिम बंगाल में 9 स्थानों पर, कर्नाटक और उडीसा में 8

स्थानों पर और बिहार में 1 स्थान के लिए सीधा संघर्ष था।[19]

(IV) निर्वाचन आयोग की भूमिका :— भारत के संसदीय निर्वाचनों को सफलतापूर्वक सम्पन्न कराने में निर्वाचन आयोग की भूमिका रही है। आयोग को विपक्षी दलों के मन में इस भावना और विश्वास को संचार करना था कि इसमें सत्तारूढ़ दल द्वारा अनियमितताओं और भ्रष्ट तरीकों से चुनाव जीतने का प्रयास नहीं किया जायेगा। आपातकाल की पृष्ठभूमि में निर्वाचन आयोग की उत्तरदायित्व को बढ़ा दिया था।

1971 की जनगणना के बाद निर्वाचन क्षेत्रों का पुनः परिसीमन किया गया। छठी लोकसभा की सदस्य संख्या 542 निर्धारित की गई, नवीन परिसीमन में राज्यों से निर्वाचित सदस्यों की संख्या में 19 और केन्द्र शासित प्रदेशों में 1 प्रतिशत की वृद्धि की गई । फलस्वरूप मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान में तीन–तीन सदस्य बढ़े। जबकि गुजरात और पश्चिम बंगाल में दो–दो आंध्रप्रदेश, बिहार, हरियाणा, कर्नाटक, केरल औरे उडीसा में 4–1 सदस्य की वृद्धि हुई । अनुसूचित जातियों के लिए सुरक्षित स्थान 77 से बढाकर 78 तक कर दिये गये। जबकि अनुसूचित जनजातियों की संख्या 41 से घटाकर 38 कर दी गई।[20]

(अ) आचार संहिता :— निर्वाचन आयोग चुनाव अभियान और मतदान को शांतिपूर्ण ढंग से सम्पन्न कराना चाहता था। निर्वाचन आयोग ने 23 सूत्रीय आचार संहिता प्रस्तुत की। ये सूत्र निम्नलिखित थे।[21]

1. किसी दल या उम्मीदवार को कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए। जिससे विभिन्न जातियों और समुदायों, धर्मों या भाषा भाषियों के बीच वर्तमान मतभेद उभरे या उनमें परस्पर घृणा अथवा तनाव पैदा हो ।

2. अन्य राजनीतिक दलों की आलोचना उनकी नीतियों, कार्यक्रमों और अतीत के कार्यों के आधार पर की जानी चाहिए यह भी आवश्यक है कि किसी नेता या कार्यकर्ताओं की आलोचना में उसकी निजी जीवन के ऐसे पहलू को शामिल नहीं

किया जाना चाहिए। जिसका संबंध उसके सार्वजनिक जीवन से हो। अप्रमाणित आरोपों के आधार पर दलों या उनके कार्यकर्ताओं की आलोचना नहीं की जानी चाहिए।

3. राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों को यह आश्वासन देना चाहिए कि उनके समर्थन दलों द्वारा आयोजित सभाओं प्रदर्शनों में बाधा पहुॅचाने या उन्हें भंग करने की कोशिश नहीं करेंगे । एक राजनीतिक दल के कार्यकर्ता या उनके समर्थकों द्वारा आयोजित सभाओं में मौखिक अथवा लिखित प्रश्न पूछकर और अपने दल के प्रचार–पत्रक बांटकर बाधा नहीं पहुॅचानी चाहिए जिस स्थान पर एक दल की सभा हो रही है। उसके पास से होकर दूसरे दल को जुलूस नहीं निकालना चाहिये। एक दल द्वारा जारी किये गये पोस्टरों को दूसरे दल के कार्यकर्ताओं द्वारा नहीं हटाया जाना चाहिये ।

4. किसी पुलिस वाले के खिलाफ शिकायत रहने पर पुलिस अधीक्षक के पास भेजी जानी चाहिए या उसके बाद उच्च पुलिस अधिकारी जो कार्यवाही करे, उससे संतुष्ट न होने पर ही शिकायत को सार्वजनिक रूप से उठाया जाना चाहिये।

5. सत्तारूढ़ दल को यह ध्यान रखना चाहिये कि ऐसी शिकायत का मौका न मिले कि उसने अपनी सरकारी स्थिति का उपयोग चुनाव अभियान के लिए किया है।

6. मत प्राप्त करने के लिए जाति या समुदाय के आधार पर कोई अपील नहीं की जानी चाहिए। मस्जिदों, चर्चों, मंदिरों या पूजा के दूसरे स्थानों का उपयोग चुनाव प्रचार के लिए नहीं किया जाना चाहिए।

7. सभी दलों और उम्मीदवारों को चुनाव के लिए तैनात अधिकारियों का सहयोग करना चाहिए ताकि मतदान शांतिपूर्ण और व्यवस्थित ढंग से हो सके । अगर कोई मतदान केन्द्र की ओर जाने वाले मतदाता के मार्ग में बाधा पहुॅचाता है तो पुलिस उसके विरूद्ध तुरन्त कार्यवाही कर सकती है उसे मतदान केन्द्र के निकट दल के

कार्यकर्ताओं को कानूनी कार्यवाही करने से नहीं रोकना चाहिये।

8. समस्त राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों को इस बात पर सहमत होना चाहिए कि वे मतदाता को जो परिचय पत्र देंगे, वे सादे (सफेद) कागज पर होंगे और उन पर कोई चुनाव चिह्न, उम्मीदवार का नाम और दल का नाम अंकित नहीं होगा।

9. समस्त राजनीतिक दलों को अपने अधिकृत कार्यकर्ताओं को समुचित बैज या परिचय पत्र देने चाहिए । सभी दलों और उम्मीदवारों को निर्वाचन कानून के अन्तर्गत भ्रष्ट तरीके और अपराधों जैसे मतदाताओं को रिश्वत देना, उन्हें डराना धमकाना, जाली मतदान, मतदान केन्द्र के 100 मीटर के भीतर चुनाव प्रचार, 48 घंटे पहले चुनाव प्रचार बंद कर दिये जाने के बाद सार्वजनिक सभाऐं करना और मतदाताओं को आने–जाने के लिए सवारी प्रदान करना आदि से बचना चाहिए।

10. मतदान के दिन और उससे 12 घंटे पहले की अवधि में शराब न तो बेची जानी चाहिए और न बांटी जानी चाहिए।

11. किसी दल या उम्मीदवार को किसी प्रस्तावित सभा की सूचना पर्याप्त समय रहते स्थानीय पुलिस अधिकारियों को दे देनी चाहिए ताकि वे यातायात के नियंत्रण और शांति तथा व्यवस्था बनाये रखने के लिए समुचित व्यवस्था कर सके ।

12. दल को इस बात का पता होना चाहिए कि जहाँ वह सभा करने जा रहा है । वहां कोई निषेधात्मक आदेश तो लागू नहीं है । यदि कोई ऐसा आदेश हो तो उसका पूरी तरह से पालन किया जाना चाहिए । ऐसे आदेश से यदि कोई छूट प्राप्त करना चाहता है तो उसी के लिए आवेदन करना चाहिए । इस प्रकार की अनुमति या लाइसेंस प्राप्त कर लेना चाहिए।

13. यदि लाउड स्पीकरों के प्रयोग या प्रस्तावित बैठक से संबंधित किसी दूसरी सुविधा के लिए अनुमति या लाइसेंस प्राप्त करना हो तो उसके लिए संबंधित

अधिकारी के पास काफी पहले से आवेदन करना चाहिए। आयोजकों को ऐसे लोगों के खिलाफ स्वयं कार्यवाही नहीं करनी चाहिए।

14. सभा के आयोजकों को सभा में बाधा डालने वाला या दूसरी तरफ से अव्यवस्था पैदा करने वाले लोगों के खिलाफ कार्यवाही के लिए ड्यूटी पर तैनात पुलिस की सहायता लेनी चाहिए। आयोजकों को ऐसे लोगों के खिलाफ खुद कार्यवाही नहीं करनी चाहिए।

15. जुलूस निकालने वाले दल को जुलूस के चलने का समय, स्थान, मार्ग और जुलूस समाप्त होने का समय और स्थान पहले तय कर लेना चाहिए । सामान्यतः कार्यक्रम का उल्लंघन नहीं होना चाहिए।

16. व्यवस्थाओं के कार्यक्रम की सूचना स्थानीय पुलिस अधिकारियों को देनी चाहिए ताकि वे आवश्यक कार्यवाही कर सके।

17. जुलूस चलने से पहले मार्ग की स्थिति को देखते हुए व्यवस्थापकों को जुलूस की व्यवस्था के लिए ऐसे कदम उठाने चाहिए ताकि यातायात में कोई बाधा नहीं पड़े, यदि जुलूस बहुत बडा हो तो उसे ऐसे टुकड़ों में विभाजित करना चाहिए ताकि चौराहों आदि पर रूके हुए वाहनों को रास्ता दिया जा सके।

18. जुलूस को यथासंभव सड़क के दांयी ओर रखा जाना चाहिए और ड्यूटी पर तैनात पुलिस के निर्देशन और परामर्श का पालन किया जाना चाहिए।

19. यदि दो या दो से अधिक राजनीतिक दल एक ही मार्ग या उसके कुछ भाग से लगभग एक ही समय जुलूस निकालना चाहे तो व्यवस्थापकों को इस बारे में पहले सम्पर्क करके समय रहते ऐसे उपाय तय कर लेने चाहिए कि यातायात में कोई बाधा न पड़े और न कोई अवांछनीय स्थिति पैदा हो, संतोषजनक प्रवेश के लिए स्थानीय पुलिस की हर संभव सहायता उपलब्ध होगी।

20. दलों को जुलूस में ऐसी चीजें ले जाने से यथासंभव बचना चाहिए जिनका की अवांछनीय तत्व दुरूपयोग कर सके विशेषतया उत्तेजना के क्षणों में।

21. किसी भी राजनीतिक दल को किसी अन्य दल के सदस्यों और नेताओं की अर्थियां नहीं निकालनी चाहिए और न ही उन्हें सार्वजनिक रूप से जलाना चाहिए। उनका अन्य प्रकार से प्रदर्शन भी नहीं करना चाहिए।

22. सभी राजनीतिक दलों को व्यक्ति के शांतिपूर्ण और निर्विघ्न रूप से घरेलू जीवन का आदर करना चाहिये। भले ही वह उसके राजनीतिक विचारों और गतिविधियों से सहमत न हो। किसी के विचारों या गतिविधियों के विरोध में उसके घर के सामने या धरना देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

23. किसी भी राजनीतिक दल को अपने कार्यकर्ताओं को किसी के निजी भवन, मकान, दीवार आदि का उपयोग उनकी अनुमति के बिना ध्वज फहराने, बैनर लगाने, सूचनाऐं चिपकाने और नारे लिखने आदि की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

इस प्रकार निर्वाचन आयोग ने यह आश्वासन दिया कि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्षतापूर्वक सम्पन्न करायेगा। निर्वाचन आयोग की भूमिका ने ही देश में लोकतंत्र सशक्त किया।

(V) चुनाव प्रचार :— प्रत्येक चुनाव में प्रचार की बड़ी ही महत्वूपर्ण भूमिका होती है । इसके माध्यम से राजनीतिक दल अपने कार्यक्रम और विचारधारा से मतदाताओं को अवगत कराते हैं। किसी भी राजनीतिक दल की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि अपने प्रचार तंत्र के माध्यम से अपनी बात को किस सीमा तक और कितने प्रभावशाली ढंग से मतदाताओं तक पहॅुचाने में सफल हो पाता है। सन् 1977 के लोकसभा के चुनाव अत्यधिक प्रतिस्पर्धा के वातावरण में लड़ा गया था और जिसमें सभी राजनीतिक दलों ने अपना प्रचार—प्रसार किया चुनाव प्रचार में सार्वजनिक सभाओं, नुक्कड़ सभाओं, चुनाव जुलूसों और दलीय रैलियों का सहारा लिया ।

अपनी बात को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिए समाचार पत्रों और चलचित्रों (सिनेमा) में विज्ञापन भी दिये गये । साथ ही बड़े–बड़े पोस्टरों और बैनरों का भी उपयोग किया गया।

चुनाव प्रचार में जयप्रकाश नारायण, आचार्य जेवी कृपालानी और श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने भी प्रमुखता से भाग लिया। जयप्रकाश नारायण अस्वस्थ हो जाने के कारण एक सीमित अवधि के लिये चुनाव प्रचार में भाग ले सके । देश के ख्याती प्राप्त संविधानवेत्ताओं, न्यायविदों और बुद्धिजीवियों ने जनता पार्टी के पक्ष में प्रचार किया।

जनता पार्टी के प्रमुख नेताओं मोरारजी देसाई, चौधरी चरण सिहं, अटल बिहारी वाजपेयी और चन्द्रशेखर ने अपने दल के चुनाव प्रचार की बागडोर संभाली। लोकतंत्री कांग्रेस के नेता जगजीवनराम ने देशव्यापी तूफानी दौरा किया। विपक्ष की चुनाव सभाओं में जयप्रकाश नारायण भाषणों के 'टेप' भी सुनाये गये।

सत्तारूढ़ कांग्रेस दल का चुनाव अभियान मुख्य रूप से इंदिरा गाँधी के व्यक्तित्व के 'करिश्मे' पर आधारित था। अपने दल के प्रचार करने के लिए राष्ट्रव्यापी तूफानी दौरे करते हुए एक दिन में चुनावी सभाओं को संबोधित किया। उनकी चुनाव सभाओं में पहले की तरह ही भारी भीड़ सुनने के लिए आती रही। कांग्रेस के पास इंदिरा गाँधी को छोडकर कोई ऐसा नेता नहीं था जो मतदाताओं पर अपना प्रभाव जमा सकता। अतः दल को विजयी बनाने की सारी जिम्मेदारी इंदिरा गाँधी के कंधों पर ही थी । कांग्रेस दल ने इंदिरा गाँधी के बड़े–बड़े पोस्टर और बैनर बनवाये।

चुनाव प्रचार में फिल्मी अभिनेताओं और अभिनेत्रियों ने भी खुलकर भाग लिया। जनता पार्टी के लिए फिल्मी कलाकारों सर्वश्री देवानंद, शत्रुध्न सिन्हा, विजयानंद, किशोर कुमार, अमोल पालेकर और डैनी ने कार्य किया । इन्होंने अपनी

चुनावी सभाओं में सरकार की आपातकाल में सेंसरशिप संबंधी नीति और इस काल में फिल्म उद्योगों के लोगों को तंग करने का आरोप लगाते हुए जनता पार्टी के पक्ष में मतदान करने की अपील की। बम्बई और महाराष्ट्र के कतिपय शहरों में इन कलाकारों ने जनता पार्टी के पक्ष में प्रचार किया।

दूसरी ओर कांग्रेस की तरफ से अनेक फिल्मी कलाकारों ने चुनाव प्रचार में भाग लिया। इनमें से उल्लेखनीय थे दिलीप कुमार, सुनील दत्त, श्रीमती नरगिस दत्त और अमिताभ बच्चन चुनाव प्रचार में लोक गायकों का भी खुलकर सहारा लिया गया।

चुनाव प्रचार के समय सभी संभव साधनों का प्रयोग किया गया। प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी और कांग्रेस दल के वरिष्ठ नेताओं को तो प्रचार कार्य करने के लिए हैलीकॉप्टरों की सुविधाऐं प्राप्त थीं। जबकि विपक्षी नेताओं ने नियमित वायुयान सेवा, रेलसेवा और कार द्वारा ही प्रचार किया गया और अपनी कमजोर वित्तीय स्थिति का बार–बार उल्लेख करते हुए जनता से मुक्तहस्त से दान देने की अपील की। जनता पार्टी की चुनाव सभा की समाप्ति के बाद धन एकत्रित करने के लिए "झोली भरो" अभियान बहुत लोकप्रिय रहा। इसमें जनता रूपयों से लेकर छोटे–छोटे सिक्के तक दान में देती थी । जनता पार्टी द्वारा जेल में बंद जॉर्ज फर्नाडीज की मूर्ति को हथकड़ियों और बेड़ियों में प्रदर्शित करके मतदाताओं की सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयत्न भी किया गया।

जनता पार्टी के प्रचार में सामाजिक, सांस्कृतिक और छात्र संगठन भी सक्रिय था। छात्र संगठन, विद्यार्थी परिषद युवक जनता मोर्चा और स्वयं सेवक संघ के कार्यकर्ता खुलकर जनता पार्टी का समर्थन कर रहे थे।

इस चुनाव में राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्रों की भूमिका का विश्लेषण करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इण्डियन एक्सप्रेस समूह पूरी तरह से जनता पार्टी

और उनके सहयोगी दलों का खुला समर्थन कर रहा था। स्टेट्समैन ने भी विपक्षी नेताओं के भाषणों को प्रमुखता के साथ प्रसारित करना प्रारंभ कर दिया। इसके विपरीत हिन्दुस्तान टाईम्स प्रकाशन समूह ने कांग्रेस का समर्थन करते हुए उनके पक्ष से संबंधित समाचारों को उजागर किया और नेशनल हेराल्ड ने भी कांग्रेस का साथ दिया। पोट्रियाट और जनयुग ने भी कांग्रेस का विरोध किया। सेंसरशिप में छूट दिये जाने के कारण समाचार पत्र सभी पक्षों के समाचारों को प्रमुखता से प्रकाशित करने लगे।

इंदिरा गाँधी ने 17 फरवरी से 18 मार्च 1977 तक दिन–रात चुनाव प्रचार किया । वे जनता पार्टी को एक "बेमेल अवसरवादी राजनीतिक गठबंधन" कहकर संबोधित करती थी। उन्होंने अपने चुनाव भाषणों में आपातकाल की घोषणा को भी उचित ठहराया था। उन्होंने बार–बार इस संकल्प को दोहराया कि देश में स्थायित्व करने और लोकतंत्र की रक्षा करने में कांग्रेस ही सक्षम है। जनता पार्टी के केन्द्र में वैकल्पिक सरकार के गठन करने के दावे को मजाक बनाती हुई यह तर्क दिया कि विपक्ष का केन्द्र में सरकार बनाना तो दूर रहा, यह तो लोकसभा में सशक्त विपक्ष का रूप भी धारण नहीं कर सकता।[22]

इंदिरा गाँधी ने अपनी चुनाव सभाओं में बार–बार यह कहा कि "उनका दल परिवार नियोजन को स्वैच्छिक आधार पर भी लागू करने के पक्ष में था और इसमें किसी भी तरह से जोर जबरदस्ती करने के पक्ष में नहीं था केन्द्र ने राज्यों के मुख्यमंत्रियों को भेजे गये निर्देश में यह स्पष्ट कर दिया था कि इस कार्यक्रम को स्वैच्छिक आधार पर लागू किया जाना चाहिए न कि जोर जबरदस्ती से[23]

कांग्रेस ने विपक्षी दलों द्वारा आपातकाल के मुद्दों के चुनाव में उठाये जाने पर आपत्ति प्रकट की। 16 फरवरी, 1977 को विधि मंत्री हरिराम गोखले ने कहा कि आपातकाल के प्रश्न को चुनाव में नहीं उठाया जाना चाहिए।

इस तरह से कांग्रेस चुनाव प्रचार में मुख्यतः आपातकाल को उचित ठहराने, आपातकाल की उपलब्धियों का बखान करने, केन्द्र में स्थायित्व रखने, आर्थिक विकास की गति को बढाने के लिए स्थिर सरकार के पक्ष में मतदान करने जनता पार्टी की विजय के बाद केन्द्र में संविद सरकार की स्थापना के बाद संभावित अराजकता और स्थायित्व की स्थिति के प्रभावों का बखान किया गया।

जनवरी 1977 में जारी तीन पृष्ठीय अपील के साथ ही प्रारम्भ हो गया था। इस अपील में उन्होंने भारतीय मतदाताओं से ''लोकतंत्र और तानाशाही'' के बीच में से चयन करने का अनुरोध किया। मतदाताओं के नाम से जारी इस अपील में यह स्पष्ट कहा गया है कि ''अगर आप स्वतंत्र रहना चाहे हैं अपना सिर ऊँचा रखना चाहते हैं तो स्वयं के और राष्ट्रीय हित में जनता पार्टी को विजयी बनाये[24] और उन्होंने कहा अगर कांग्रेस जीत जाती है तो देश में तानाशाही स्थापित हो जायेगी।

जनता पार्टी के चुनाव प्रचार में जगजीवनराम के नेतृत्व में लोकतंत्री कांग्रेस की अत्यन्त प्रभावशाली की भूमिका रही है । उन्होंने अपनी चुनावी सभाओं में आपातकाल की ज्यादतियों और नागरिक अधिकारों का दमन करने के लिए इंदिरा गाँधी और कांग्रेस पार्टी की भर्त्सना करते हुए मतदाताओं से जनता पार्टी के पक्ष में मतदान करने को कहा।

श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने कहा कि "हमने हमारी व्यक्तिगत पार्टियों को छोड़ दिया है। हमने हमारी नावें और पुल जला दिये हैं । अब हम एक पार्टी में हैं। प्रधानमंत्री पर विश्वास मत कीजिये, अब यह महा गठबंधन नहीं है।

चुनावी नारे :— भारतीय मतदाताओं की मनःस्थिति को प्रभावित करने में नारों की अहम भूमिका रही है। इस चुनाव में कुछ नारे बहुत लोकप्रिय हुए। सत्तारूढ़ कांग्रेस का प्रभुत्व नारा था। "देश की नेता इंदिरा गाँधी" जनता पार्टी का प्रमुख नारा था"

अंधेरों में एक प्रकाश, जयप्रकाश, जयप्रकाश, जयप्रकाश" आपातकाल और परिवार नियोजन से संबंधित व्यक्तियों को इंगित करने वाला यह नारा भी जनता पार्टी के समर्थकों द्वारा काफी लगाया गया। "नसबंदी के तीन दलाल, इंदिरा, संजय, बंशीलाल" रायबरेली संसदीय निर्वाचन क्षेत्र में राजनारायण के समर्थकों का यह नारा भी काफी गूंजा "पहले हारी कोर्ट में अब हारेगी वोट में"

चुनाव प्रसार में हिंसा – सामान्यतया चुनाव प्रचार शांतिपूर्वक ही चलता रहा लेकिन कतिपय स्थानों पर छुटपुट हिंसक घटनाऐं भी घटित हुई। परन्तु दोनों ही पक्षों में इन घटनाओं से इनकार किया । इनमें कलकत्ता–काण्ड सबसे बडा था । कलकत्ता क्षेत्र में जनता पार्टी के प्रत्याशी प्रो0 दिलीप चक्रवती को सिर की चोट खाकर अस्पताल जाना पडा । जगजीवनराम और जनता पार्टी के नेताओं ने चुनाव प्रचार के समय अपने समर्थकों को हिंसा से दूर रहने की सलाह दी। दिल्ली के वोट क्लब में इंदिरा गांधी की सभा में विघ्न उपस्थित करने पर अपना गहरा शोक व्यक्त करते हुए अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था "अगर आप कांग्रेस के भाषणों को नहीं सुनना चाहते तो उनकी सभाओं में न जाये, लेकिन अगर जाते हैं तो सभा में विघ्न हर्गिज नहीं डाल सकते वाजपेयी ने कहा कि यदि सत्तारूढ़ दल की सभाओं में विघ्न डालने की खबरें तीन दिन बाद भी आती रही तो मैं अनशन करूंगा।[25]

(VI) आपातकाल के बाद मतदान :– सन् 1977 का यह चुनाव असामान्य था इसके प्रति सम्पूर्ण देश में भारी उत्साह और उत्तेजना का वातावरण व्याप्त था। ज्यों–ज्यों प्रचार में तेजी आती गई, स्थिति स्पष्ट होती गई । प्रारंभ में आपातकाल की प्रतिछाया से लोग विपक्ष का साथ देने से कतराते थे। लेकिन धीरे–धीरे यह स्थिति समाप्त होती गई। आपातकाल और नसबंदी की घटनाओं ने इस संभाग में कांग्रेस विरोधी वातावरण बना दिया। 19 महीने के अधिनायकवादी शासन ने उन्हें विक्षुब्ध बनाकर दृढ निश्चयी बना दिया। उत्तर भारत में कांग्रेस विरोधी वातावरण अत्यन्त उग्र था। जनता पार्टी द्वारा खडा किया गया प्रत्याशी विजयी प्रत्याशी माना

जा रहा था। मजाक में तो यहां तक कहा जा रहा था कि जनता टिकट पर खडा किया जानेवाला “लैम्प पोस्ट” भी निर्वाचित हो जायेगा। जगजीवनराम ने भी कहा था कि इस बार हम चुनाव नहीं लड़ रहे थे। अपितु जनता स्वयं चुनाव लड़ रही है।[26] इस तथ्य की तरफ इंगित करते हुए लालकृष्ण आडवाणी ने कहा था “यह हवा उत्तरी संभाग में बह रही है” न कि सम्पूर्ण देश में[27] आचार्य जे.बी.कृपलानी का भी यही मत था कि “कांग्रेस के विरूद्ध अब केवल एक ही हवा है, यह 1967 की तुलना में कहीं अधिक प्रबल है, इसकी कोई तुलना नहीं।[28]

उत्तरी भारत के सभी राज्यों में कांग्रेस विरोधी भावना अपनी चरम स्थिति में पहुंच गई। यह आक्रोश इतना प्रबल था कि यहां के अनेक गांवों में कांग्रेसी नेता और कार्यकर्ता चुनाव सभाऐं करना तो दूर अपितु अपने दल का झण्डा लेकर प्रवेश भी नहीं कर सकते थे। इस वातावरण की उग्रता को देखकर आपातकाल की ज्यादतियों के लिए क्षमा मांगने लगे।

कांग्रेस विरोधी वातावरण की उग्रता को देखकर राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने जनता का विश्वास अर्जित करने के लिए विभिन्न प्रकार की रियायतें देना प्रारंभ कर दिया। रिजर्व बैंक से ओवर ड्राफ्ट लेकर काम चलाने वाले मुख्यमंत्रियों राजकोष को खाली करने पर तुले हुए थे। राज्यों में भू–राजस्व, कृषि आयकर को कम करने, सिंचाई की दरों में कमी करने बिजली की दरों में कमी करने, मकान किराया को रियायतें प्रदान करने, मंहगाई भत्तों, किराये और स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं को प्रदान करने के लिए 2500 मिलियन राशि का उपयोग किया लेकिन रियायतों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।[29]

जनता पार्टी के नेताओं मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए आपातकाल में की गई प्रशासनिक ज्यादतियों की जांच कराने हेतु एक आयोग का गठन करने का भी संकल्प व्यक्त किया गया।

(अ) विजय के परस्पर दावे :—

जयप्रकाश ने कहा था कि "कांग्रेस की विजय प्राप्त होगी, लेकिन इसलिए नहीं कि वह लोकप्रिय है। बल्कि विपक्ष को अपने कार्यकर्ताओं को संगठित करने, धन जुटाने और मतदाताओं को चुनाव से जुड़े हुए मुख्य मुद्दों को बताने के लिए बहुत कम समय दिया गया है।[30] इंदिरा गाँधी को भी विश्वास था कि कांग्रेस को 280 स्थान प्राप्त हो जायेंगे।[31]

लालकृष्ण आडवाणी ने भी दो तिहाई बहुमत प्राप्त करने की भविष्यवाणी की थी।[32] निर्वाचन आयोग ने मतदान के लिए चार दिनों 16 मार्च से 20 मार्च 1977 तक समय निर्धारित किया जिसमें 17 मार्च को अवकाश का दिन घोषित किया गया। बिहार, उत्तरप्रदेश और पश्चिम बंगाल के कुछ मतदान केन्द्रों को छोडकर सारे देश में शांतिपूर्ण मतदान हुआ इस चुनाव में 1971 की जनगणना के अनुसार 542 स्थानों के लिए मतदान हुआ इनमें से सिक्किम और अरूणाचल प्रदेश के दो निर्वाचन क्षेत्रों से कांग्रेसी प्रत्याशी निर्विरोध रूप से निर्वाचित हुए। जम्मू कश्मीर और हिमाचल प्रदेश के दो निर्वाचन क्षेत्रों में हिमाच्छादित क्षेत्र होने के कारण बाद में मतदान होना था। 16 मार्च 1977 को मतदाताओं के 60 प्रतिशत भाग में 300 पूर्ण निर्वाचन क्षेत्रों और 52 निर्वाचन क्षेत्रों के 240 भागों में मतदान हुआ । 18 मार्च को 34 पूर्ण निर्वाचन क्षेत्र और 106 निर्वाचन क्षेत्रों के भागों में मतदान हुआ । 19 मार्च को 117 पूर्ण निर्वाचन क्षेत्रों और 36 निर्वाचन क्षेत्रों भागों में 20 मार्च को मतदान सम्पन्न हुआ है।[33] इन चुनावों में भारी संख्या में मतदान हुआ । उत्तरी भारत के राज्यों में मतदान के नये कीर्तिमान स्थापित हो गये । पंजाब में 70.14, हरियाणा में 72.26, दिल्ली में 71.31, उत्तरप्रदेश में 54.44, बिहार में 60.76 मध्यप्रदेश में 54.92 और राजस्थान में 56.91 प्रतिशत मतदान हुआ । दक्षिण के राज्यों में आंध्रप्रदेश में 62.77, कर्नाटक में 63.20, केरल में 79.20, पांडिचेरी में 73.63 और तमिलनाडू में 67.13 प्रतिशत मतदान हुआ।[34]

(VII) गैर–कांग्रेसवाद की जीतः– 20 मार्च 1977 को सांय 5 बजे से आकाशवाणी और दूरदर्शन ने अपने नियमित और विशेष चुनाव प्रसारणों से चुनाव परिणाम घोषित करने प्रारंभ किये । 22 मार्च तक प्रायः सभी परिणाम घोषित कर दिये थे। चुनाव परिणाम इतने अप्रत्याशित, अविश्सनीय और अकल्पनीय थे कि किसी को संभलने का अवसर नहीं दिया गया इसे देखकर लोग स्तब्ध हो गये। इन चुनाव में साधन, संगठन और शक्ति सम्पन्न कांग्रेस को न केवल महापराजय का सामना करना पडा अपितु देश का सर्वाधिक लोकप्रिय और शक्तिशाली प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी तक पराजित हो गई ।

वास्तविकता यह है कि कांग्रेस को रावी तट से लेकर हुगली तक लोकसभा की सीट प्राप्त करने के लिए लाले पड गये थे ।

विश्व के संसदीय इतिहास में यह पहली घटना थी । जब कोई प्रधानमंत्री लोकसभा के चुनाव में पराजित हुआ हो । इंदिरा गाँधी के पुत्र संजय गांधी भी अमेठी निर्वाचन क्षेत्र से जनता पार्टी के प्रत्याशी रविन्द्र प्रताप सिहं से भारी बहुमत से पराजित हो गये।

इंदिरा गाँधी के अनेक मंत्रिमण्डलीय सहयोगी भी चुनाव में पराजित हो गये । इनमें से प्रमुख थे, रक्षामंत्री बंशीलाल, जहाजरानी और परिवहन मंत्री गुरूदयाल सिहं ढिल्लो, विधि मंत्री हरिराम गोखले, सूचना और प्रसारण मंत्री विद्याचरण शुक्ल, इस्पात मंत्री चन्द्रजीत यादव, पैट्रोलियम मंत्री केशवदेव मालवीय अन्य पराजित केन्द्रीय मंत्री थे, सर्व श्री अनन्त प्रसाद शर्मा, प्रमोद कुमार मुखर्जी, हरिकिशन लाल भगत, शाह नवाज खां, सिद्धेश्वर प्रसाद, धर्मवीर सिन्हा, बी.एन. गडसिल, कृष्णचंद्र पंत, जगन्नाथ पहाडिया, डी.पी.यादव, बाल गोविन्द वर्मा, अरविन्द नेताम और सुशील रोहतगी लोकसभा अध्यक्ष बलिराम भगत भी पराजित हो गये।[35]

अनेक प्रमुख कांग्रेसजनों को भी करारी पराजय का सामना करना पड़ा।

राज्यपाल पद से त्यागपत्र देकर कांग्रेस से चुनाव लड़ा। राज्यपाल पद से त्यागपत्र देकर कांग्रेस से टिकट पर चुनाव लड़ने वाले जोगिन्दर सिहं और आर.पी.भण्डारे भी पराजित हुए। इनके अलावा सेठ अचल सिहं, बी.पी.मोर्य, शशि भूषण, श्रीमती सुभद्रा जोशी, राजबहादुर, दिनेश सिहं, गेंदा सिहं, श्रीमती शीला कौल, अशोक सेन, श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा, डॉ. रामसुभग सिहं, भागवत का आजाद, डॉ0 फूलरेणुगुहा, प्रिय रंजनदास मुंशी, डां. शंकर दयाल शर्मा, डॉ. कालूलाल श्रीमाली, सरदार स्वर्ण सिंह राव वीरेन्द्र सिहं और गुकराने आजम जैसे कांग्रेसी नेता भी पराजित हुए। बिहार के तीनों भूतपूर्व कांग्रेसी मुख्यमंत्री, सर्वश्री केदार पाण्डेय, अब्दुल गफूर और दारोग प्रसाद राय को भी पराजय का सामना करना पडा। दल के लिए यह बहुत बड़ा आघात था।[36]

उत्तरी भारत में पूर्ण पराजयः—

उत्तरी भारत में कांग्रेस की लगभग पूर्ण पराजय हुई । उत्तरी भारत में कांग्रेस की पराजय का आभास इसी से लगाया जा सकता है । कि उसे उत्तर प्रदेश के 85, बिहार के 54, पंजाब के 13, हरियाणा के 11 और दिल्ली के 6 लोकसभा स्थानों में से एक भी स्थान प्राप्त नहीं हुआ।

इन सभी राज्यों में सभी स्थानों पर जनता पार्टी, लोकतंत्री कांग्रेस या उनके द्वारा समर्पित निर्दलीय प्रत्याशी विजय रहे। ये सभी राज्य कांग्रेस के गढ रहे थे और यहीं से प्रधानमंत्री उनके अधिकांश मंत्रिमंडलीय सहयोगी और कांग्रेसजनों ने चुनाव लडा और वे पराजित हुए मध्यप्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल और उडीसा में भी इस दल को शोचनीय पराजय का सामना करना पडा और इन राज्यों में इसे क्रमशः 1,1,3 और 4 स्थान ही प्राप्त हुए।

निश्चित रूप से इन चुनाव परिणामों से भारतीय मतदाताओं की राजनीतिक परिपक्वता और दक्षता सामने आई, उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि भारत में लोकतंत्र ही

शासन का एकमात्र विकल्प है और यहां वंशानुगत राजवंश के लिए कोई स्थान नहीं है।

चुनावी परिणामों को स्वीकार करते हुए इंदिरा गाँधी ने दल की पराजय के लिए स्वयं को उत्तरदायी बताया। 11 वर्षों तक प्रधानमंत्री पद का दायित्व निर्वहन करने वाली इंदिरा गाँधी ने बिना किसी हिचक के इस लोकसभा चुनाव में दल की पराजय के लिए स्वयं को उत्तरदायी बताते हुए कांग्रेसाध्यक्ष को लिखे गये अपने पत्र में स्पष्ट किया कि "जहां तक मेरा प्रश्न है मैं स्पष्ट कर देना चाहती हूॅ मैंने सरकार का नेतृत्व किया। अतः मैं बिना किसी हिचक के पराजय का पूर्ण उत्तरदायित्व स्वीकार करती हूँ।"[37]

(VIII) कांग्रेस की पराजय के कारण :–

उत्तरी, पूर्वी और मध्य भारत के राज्य पिछले संसदीय चुनावों में कांग्रेस को भारी समर्थन प्रदान करते रहे और काग्रेस इन्हें अपना प्रभाव क्षेत्र मानती रही। लेकिन इन चुनावों में कांग्रेस को शोचनीय पराजय का सामना करना पड़ा। कांग्रेस की इस पराजय के अनेक कारणों का योगदान रहा। राजनीतिक विश्लेषकों और अध्ययेताओं के मत में आपातकाल का खुला दुरूपयोग और उसके दौरान की गई ज्यादतियाँ दल की पराजय का प्रमुख कारण थीं। इसके कारण समाज के सभी वर्गों के लोग दल से रूष्ट हो गये। आपातकाल के निरंकुश वातावरण ने महानगरों में रहने वाले प्रबुद्ध नागरिकों को दल से नाराज कर दिया तो परिवार नियोजन कार्यक्रम को अत्यधिक तेजी से लागू करने में होने वाली ज्यादतियों ने कांग्रेस के सबसे ठोस समर्थक वर्ग 'किसान' को दल से अलग कर दिया। सौन्दर्यीकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत झुग्गी–झोपड़ियों में निवास करने वाले लाखों मजदूरों और गरीब वर्गों के लोगों को बेघरबार कर दिया गया। फलस्वरूप ये लोग भी दल से नाराज हो गये। आपातकाल में राजनीतिक नेताओं और कार्यकर्ताओं की अन्धाधुन्ध

गिरफ्तारियाँ, प्रेस सेंसरशिप और नागरिक स्वतन्त्रताओं के हनन ने कांग्रेस विरोधी वातावरण को जन्म दिया। आपातकाल में मूल अधिकारों और स्वतन्त्रताओं को समाप्त कर दिया गया। आन्तरिक सुरक्षा कानून (मींसा) का खुलकर प्रयोग किया गया। मीसा को मेन्टीनेन्स ऑफ इन्दिरा एक्ट कहा जाने लगा। 19 महीनों में 34600 लोगों को मीसा में बन्दी बनाया गया। आपातकालीन अधिकारों और शक्तियों का खुला दुरुपयोग किया गया। शासन का विरोध करने वालों को जेलों में ठूंस दिया गया।[38] इस तरह से आपातकाल के वातावरण ने भी कांग्रेस की पराजय में महत्वपूर्ण रूप से योगदान दिया।

द्वितीय, कांग्रेस की इस पराजय में आपातकाल में इंदिरा गाँधी के इर्द–गिर्द रहने वाले व्यक्तियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। श्री हरिविष्णु कामथ ने कांग्रेस की पराजय के लिए उत्तरदायी, राजनीतिक क्षितिज्ञ पर चाण्डाल चौकड़ी के उदय को बताया। उन्होंने इस चौकड़ी में संजय गाँधी, बंसीलाल, विद्याचरण शुक्ल और ओम मेहता को शामिल किया।[39] तृतीय, प्रेस सेंसरशिप भी कांग्रेस की पराजय के लिए उत्तरदायी रही। इसके कारण समाचार पत्र प्रशासनिक और पुलिस ज्यादतियों को उजागर नहीं कर सके, जो अन्ततः कांग्रेस की पराजय के लिए उत्तरदायी बनीं। चतुर्थ, कांग्रेस की पराजय में सबसे निर्णायक भूमिका परिवार नियोजन कार्यक्रम की अत्यधिक उत्साह और सक्रियता से लागू करने में हुई भूलों, ज्यादतियों और अमानवीय व्यवहार की रही। इसने उत्तरी भारत में कांग्रेस के परम्परागत समर्थक तत्वों को नाराज कर दिया।

इस सम्भाग का 'किसान वर्ग' कांग्रेस से बुरी तरह से रूष्ट हो गया, जो कि पूर्ववर्ती संसदीय चुनावों में कांग्रेस के लिए मतदान करता रहा था। इसके अतिरिक्त परिवार नियोजन कार्यक्रम में की गई ज्यादतियों का शिकार मुख्य रूप से मजदूर, हरिजन, पिछड़ा वर्ग और सरकारी कर्मचारी थे। प्रसिद्ध पत्रकार इन्दर मल्होत्रा ने इसके गम्भीर परिणामों को विश्लेषित करते हुए कहा था कि ''परिवार

नियोजन को लागू करने में की गई ज्यादतियों ने वही कार्य किया जो कि 1857 के आन्दोलन में चर्बीयुक्त कारतूसों ने किया।''[40] इस कार्यक्रम को अतिशय उत्साह से लागू करने के पीछे राज्यों के मुख्यमन्त्रियों द्वारा संजय गाँधी को प्रसन्न करना था, क्योंकि यह उनके पांच सूत्रीय कार्यक्रम का प्रमुख अंग था। संजय गांधी को खुश करने के चक्कर में विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने निर्धारित लक्ष्य से कहीं अधिक ऑपरेशन कराये। मध्यप्रदेश के लिए 2 लाख 67 हजार लक्ष्य निर्धारित किया गया था, वहाँ चन्द महीनों में 10 लाख नसबन्दी ऑपरेशन कर दिये गये। उत्तरप्रदेश का लक्ष्य 4 लाख का था, वहाँ 15 लाख ऑपरेशन कर दिये गये। हिमाचल प्रदेश के लिए निर्धारित लक्ष्य 30 हजार से बढ़कार वहाँ के मुख्यमंत्री ने एक लाख कर दिया। राजस्थान के मुख्यमंत्री ने 1.75 लाख के लक्ष्य को 3.50 लाख कर दिया। कर्नाटक में भी लक्ष्य से अधिक नसबन्दी ऑपरेशन किये गये लेकिन वहाँ इस प्रकार की जबर्दस्ती नहीं की गई, जैसी उत्तर भारत के राज्यों में की गई।[41] इन लक्ष्यों को पूरा करना आसान कार्य नहीं था। उत्तरी भारत के ग्रामीण वर्ग को इस कार्यक्रम को अपनाने के लिए प्रेरित करने के लिए जिस चेतना और शिक्षा की आवश्यकता थी, उसका सहारा नहीं लिया गया। अगर स्वैच्छिक आधार पर इसे अपनाये जाने पर जोर दिया जाता या इस कार्यक्रम को लागू करने में सहिष्णुता और सदाशयता का परिचय दिया जाता तो लोग इसे सहर्ष रूप से अपना लेते लेकिन ऐसा नहीं किया गया। लक्ष्यों की प्राप्ति के चक्कर में प्रशासनिक अधिकारियों ने सभी संभव साधनों का सहारा लिया, अनेक जगहों पर जनता ने इसका विरोध भी किया। उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर और मुजफ्फर नगर में प्रतिरोध की ऐसी ही घटनाऐं घटित हुईं। इस कार्यक्रम को लागू करने में किये गये अमानवीय लोगों को जबरन नसबन्दी और अनेक लोगों की एक से अधिक बार की गई नसबंदी की घटनाऐं भी प्रकाश में आईं। गांवों में परिवार नियोजन कार्यक्रम से इस सीमा तक भय व्याप्त हो गया कि लोग सरकारी वाहनों को देखकर ही गांव छोड़कर भाग जाते थे। जो सरकारी कर्मचारी

नसबन्दी के लिए लोगों को तैयार करने में असफल रहे, उनका वेतन रोक दिया गया। सरकारी कर्मचारियों को भी जबरन नसबन्दी कराने के लिए बाध्य किया गया। भारत जैसे परम्परावादी देश में इस प्रकार की स्थिति वांछनीय नहीं थी अतः जनमत काग्रेस के विरूद्ध हो गया। जनता में यह भय और आशंका व्याप्त हो गई कि अगर कांग्रेस पुनः विजयी हुई तो जबरन नसबन्दी के अत्याचारों से कोई सुरक्षित नहीं रह सकेगा। अतः कांग्रेस को पराजित करना अत्यावश्यक है। इस तरह से परिवार नियोजन कार्यक्रम को लागू करने में की गई ज्यादतियों और अत्याचारों ने जनता को कांग्रेस विरोधी बना दिया।

पंचम्, कांग्रेस की पराजय में संजय गाँधी की भूमिका की काफी हद तक उत्तदायी रही। आपातकाल में संजय गाँधी का भारतीय राजनीति के क्षितिज पर धूमकेतु के रूप में अभ्युदय हुआ और वे शीघ्र ही भारतीय राजनीति पर छा गये। शीघ्र ही वे भारतीय शासन व्यवस्था में 'संविधानेत्तर सत्ता' बन गये। परिवार नियोजन भी संजय गाँधी के पांच सूत्रीय कार्यक्रम का ही एक सूत्र था। वे कांग्रेस के सत्ता स्तम्भ बन गये। उनके सामने कांग्रेसाध्यक्ष, केन्द्रीय मंत्रियों, राज्यों के मुख्यमंत्रियों और प्रशासनिक अधिकारियों की स्थिति गौण और महत्वहीन बन गई। शीघ्र ही भारतीय राजनीति की पहल और बागड़ोर उनके हाथ में आ गई। ''इंदिरा गाँधी, संजय गाँधी को राजनीति जगत में भाग लेने से पहले चलाना सिखा रही थी लेकिन उन्होंने तो उड़ना प्रारम्भ कर दिया।''[42] राज्यों की राजनीति में भी संजय गाँधी की भूमिका सर्वोच्च बन गई। उनका शिकार उन मुख्यमंत्रियों को बनना पडा, जो उनको प्रसन्न नहीं रख सके। उत्तर प्रदेश में हेमवती नन्दन बहुगुणा और उड़ीसा में श्रीमती नन्दिनी सत्पथी ऐसे ही मुख्यमंत्री थे। इन्हें अपने–अपने राज्यों में कांग्रेस विधानमण्डलीय दलों से पूर्ण बहुमत होने के बावजूद भी मुख्यमंत्री पद से हटाया गया। उनके स्थान पर संजय गाँधी के विश्वस्त व्यक्तियों उत्तर प्रदेश में नारायण दत्त तिवारी और उड़ीसा में विनायक आचार्य को मुख्यमन्त्री पद पर सत्तारूढ़ किया

गया। इस तरह से राज्यों में नेतृत्व परिवर्तन करने में संजय गाँधी की अहम भूमिका रही।

न केवल दल में ही, अपितु सरकार के संचालन में भी संजय गाँधी की भूमिका अत्यन्त मुखरित हो गई थी। उद्योग मन्त्री टी.ए. पाई के शब्दों में, संजय गाँधी कांग्रेस दल के नेता बन गये थे। वे बिना किसी उत्तरदायित्व के किसी भी सरकारी फाइल को देख सकते थे। किसी भी मामले में मनचाहा निर्णय करवा सकते थे। वे मन्त्रियों की नियुक्ति और पदोन्नति का निश्चय करते थे।[43] केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् के सदस्य भी उनकी महत्वाकांक्षा की पूर्ति में लगे रहते थे।

दल और सरकार में संजय गाँधी की निर्णायक भूमिका और इंदिरा गाँधी द्वारा उनको आगे बढ़ाने की प्रवृति से दल के अनेक वरिष्ठ नेता, मुख्यमन्त्री और समर्पित कार्यकर्त्ता क्षुब्ध थे लेकिन वे सही बात कहने की स्थिति में नहीं थे अतः वे किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति में थे। उनमें संजय गाँधी की नीतियों और कार्यप्रणाली का विरोध करने की स्थिति में नहीं थे। इस स्थिति का संजय गांधी और उनके समर्थकों ने पूरा लाभ उठाया और वे दल पर पूरी तरह से छा गये। संजय समर्थकों की गतिविधियों ने जनता दल की छवि और प्रतिष्ठा को धूमिल कर दिया और इससे दल को गहरी क्षति हुई। प्रसिद्ध पत्रकार गिरीलाल जैन के मत में यदि संजय गाँधी ने बंसीलाल, ज्ञानी जैल सिंह और नारायणदत्त तिवारी के साथ मिलकर आतंक नहीं फैलाया होता तो इंदिरा गाँधी बहुमत प्राप्त कर सकती थी।[44] कुछ केन्द्रीय मंत्रियों और कुछ राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने उनके चाटुकार बनकर उन्हें मनमानी करने की दिशा से हर संभव प्रोत्साहन दिया। संजय गाँधी की भूमिका वंशानुगत शासन का खतरा अनुभव किया गया।[45]

षष्ठम्, विरोधी दलों के प्रति व्याप्त जन सहानुभूति भी कांग्रेस की पराजय का कारण बनी। जिस समय इंदिरा गाँधी ने चुनावों की घोषणा की थी उस समय विपक्षी दलों के प्रमुख नेता और कार्यकर्ता जेलों मे बन्द थे। देश के जनमानस

में यह भावना व्याप्त थी कि साधनहीन और मनोबल पस्त विपक्षी दलों को चुनावों की तैयारी करने के लिए बहुत ही कम समय दिया गया है। विपक्षी दलों ने चुनाव प्रचार के समय अपने नेताओं और कार्यकर्ताओं के साथ जेलों में हुए व्यवहार का अत्यन्त 'अतिरंजित और अतिश्योक्तिपूर्ण' चित्रण जनता के सामने रखा और इससे भी जनता में उनके प्रति व्यापक सहानुभूति का वातावरण बना, जिससे कांग्रेस को भारी पराजय का सामना करना पड़ा।

कांग्रेस की पराजय में जयप्रकाश नारायण की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही। आपातकाल में जयप्रकाश नारायण की गिरफ्तारी से भी जनता क्षुब्ध थी। इस काल में ही उनके 'गुर्दों' के खराब होने के कारण वे अत्यधिक रूप से बीमार पड़ गये। जयप्रकाश नारायण की अस्वस्थता ने पूरे देश में चिन्ता का वातावरण बना दिया इससे भी कांग्रेस विरोधी वातावरण बन गया। इसके अलावा उनके प्रत्यनों और प्रेरणा के कारण ही चार गैर–साम्यवादी विपक्षी दलों ने संगठित होकर जनता पार्टी का निर्माण किया। जनता पार्टी के विभिन्न तत्वों को संगठित रखने, इसके नेताओं में सन्तुलन बनाये रखने, जनता पार्टी और लोकतन्त्री कांग्रेस के बीच चुनाव समझौते को सम्पन्न करने, देश के प्रबुद्ध लोगों को जनता पार्टी का समर्थन करने के लिए आगे लाने और इस दल के प्रति जन विश्वसनीयता को स्थापित करने में उनकी अहम और निर्णायक भूमिका रही। जयप्रकाश नारायण ने सन 1954 के बाद पहली बार जनता पार्टी के लिए चुनाव सभाओं को सम्बोधित किया। उन्होंने अपनी अस्वस्थ्यता के कारण जनता पार्टी के लिए चुनाव प्रचार नहीं कर पाने की विवशता को भी दोहराया। उन्होंने देश के मतदाताओं से जनता पार्टी के पक्ष में मतदान करने की अपील की। जयप्रकाश नारायण का यह नारा कि इसमें मतदाताओं को 'लोकतन्त्र और अधिनायकवाद' में से किसी एक का चयन करना है, काफी लोकप्रिय हुआ। जनता पार्टी ने भी ''अन्धेरे में एक प्रकाश, जयप्रकाश, जयप्रकाश'' का नारा लगाकर जन भावनाओं को उद्वेलित और आन्दोलित करने का प्रयत्न किया। पटना

स्थित जयप्रकाश नारायण का निवास स्थान जनता पार्टी के नेताओं के लिए ''तीर्थस्थल'' बन गया।

सप्तम, कांग्रेस की पराजय का सबसे बड़ा कारण केन्द्र में गैर साम्यवादी विपक्षी दलों द्वारा ''जनता पार्टी'' के रूप में मतदाताओं के सम्मुख सशक्त विकल्प प्रस्तुत करना था। सन् 1952 से लेकर 1971 तक कांग्रेस मतदाताओं के 50 प्रतिशत से भी कम स्थान प्राप्त करने के बावजूद भी विपक्षी दलों के विभाजित होने और उनमें होने वाले मतों के विभाजन का लाभ उठाकर सत्ता में आती रही लेकिन इस बार अपने अस्तित्व की रक्षा करने और जयप्रकाश नारायण का समर्थन प्राप्त करने के लिए विपक्षी दलों के सामने संगठित होकर कांग्रेस का मुकाबला करने के अतिरिक्त और कोई विकल्प ही नहीं था।

अतः चार प्रमुख गैर साम्यवादी विपक्षी दलों ने एक दल, एक चुनाव चिन्ह, एक झण्डे, एक घोषणा पत्र और एक नेता के नेतृत्व में चुनाव लड़कर जनता को यह विश्वास दिलाने में सफलता प्राप्त की कि वे केन्द्र में कांग्रेस का एक सशक्त विकल्प बन सकते हैं। जनता पार्टी द्वारा मार्क्सवादी साम्यवादी दल, अकाली दल, द्रमुक, पीजेन्ट एण्ड वर्कर्स पार्टी तथा रिपब्लिकन पार्टी (खोबरगड़े गुट) के साथ चुनाव समझौता करके भी कांग्रेस विरोधी मतों को विभाजित होने से रोकने का प्रयास किया गया। इस तरह से इस बार कांग्रेस और विपक्षी दलों के बीच आमने सामने का संघर्ष था और इसमें कांग्रेस को पराजित होना पड़ा।

अष्ठम्, जगजीवनराम द्वारा चुनावों की घोषणा के बाद केन्द्रीय मंत्रीपरिषद् और कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से त्याग पत्र देकर ''लोकतंत्री कांग्रेस'' की स्थापना करने का निर्णय भी कांग्रेस को भारी क्षति पहुंचाने वाला महत्वपूर्ण कारण सिद्ध हुआ। निःसंदेह जगजीवनराम के त्यागपत्र के पूर्व भी देश में कांग्रेस विरोधी वातावरण बहुत ही उग्र था लेकिन इस घटना ने इसे और भी प्रबलतम बना दिया। राजनीति की पहल कांग्रेस के हाथ से निकलकर विपक्षी दलों के हाथ में आ गई।

कांग्रेस का रूख आक्रामक नहीं रहकर रक्षात्मक बन गया। चुनाव के समय अनेक प्रमुख कांग्रेसजनों द्वारा कांग्रेस को छोड़कर लोकतंत्री कांग्रेस में शामिल होने का यह क्रम अनवरत रूप से बना रहा। इस घटनाचक्र से कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं और कार्यकर्ताओं का मनोबल गिरना स्वाभाविक ही था। लोकतंत्री कांग्रेस में शामिल होने वाले कांग्रेसजनों द्वारा आपातकाल में होने वाली ज्यादतियों और भ्रष्टाचार की कटु आलोचनाऐं की जाती थीं। इस घटना चक्र ने जनता पार्टी को अप्रत्याशित रूप से मनोबल प्रदान किया। इससे कांग्रेस की रणनीति अस्त व्यस्त हो गई और दल में अविश्वास और संशय का वातावरण बन गया। कांग्रेस को अपनी सारी नीति नये ढंग से निर्धारित करनी पड़ी और संजय समर्थकों की सूची को रद्द करना पड़ा। उन्हीं पुराने और वरिष्ठ लोगों को ही दल का पुनः प्रत्याशी बनाना पड़ा, जिनकी जनता में पहले से ही प्रतिष्ठा गिरी हुई थी। इसका भी जनता पार्टी को लाभ मिला। श्री जगजीवनराम और हेमवतीनन्दन बहुगुणा के प्रयत्नों से ही दिल्ली की जामा मस्जिद के इमाम मौलाना सैयद अब्दुल्ला बुखारी भी कांग्रेस के विरूद्ध सक्रिय रूप से जनता पार्टी और लोकतंत्री कांग्रेस गठबंधन के समर्थन में प्रचार करने के लिए निकल पड़े। उन्हीं के द्वारा उत्तरी भारत में कांग्रेस की कटुतम आलोचना की गई और उसका मुस्लिम मतदाताओं पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। जगजीवनराम और सैयद अब्दुल्ला के इस गठबंधन ने कांग्रेस के परम्परागत समर्थकों हरिजनों और मुस्लिमों को कांग्रेस से विमुख कर दिया। लोकतंत्री कांग्रेस के नेताओं की एक और उल्लेखनीय सफलता यह थी कि इसने भारत के दो सर्वाधिक प्रतिष्ठित परिवारों गाँधी और नेहरू परिवार से सम्बन्ध रखने वाले सदस्यों को कांग्रेस के विरूद्ध चुनाव अभियान में भाग लेने के लिए तैयार कर लिया।

महात्मा गाँधी की पुत्री श्रीमती सुमित्रा कुलकर्णी और पंडित जवाहर लाल नेहरू की विदुषी बहिन श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने चुनाव में कांग्रेस और इंदिरा गाँधी का खुलकर विरोध किया। इसके फलस्वरूप विपक्षी दलों को संजीवनी

सी प्राप्त हो गइ और उन्हें नया सबल प्राप्त हुआ। इस तरह से लोकतंत्री कांग्रेस का अभ्युदय जनता पार्टी की विजय में सहायक सिद्ध हुआ और नवम्, कांग्रेस दल की आन्तरिक गुटवादिता ने भी इस दल की पराजय में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। सभी राज्यों में कांग्रेसजनों के प्रतिद्वन्दी गुटों ने एक दूसरे को नीचा दिखाने और पराजित करने में कोई कसर नहीं रखी। उन्होंने अपने विरोधियों को पराजित करने के लिए न केवल उनको किसी तरह का कोई सहयोग ही नहीं दिया अपितु उनके विरोधियों को विजयी बनाने के लिए साधन भी जुटाये। इससे भी कांग्रेस को पराजय का मुँह देखना पड़ा।

(IX) दक्षिणी भारत में कांग्रेस की शानदार विजय :–

दक्षिणी भारत के राज्यों में कांग्रेस की बड़ी ही शानदार विजय प्राप्त हुई। आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल के 129 स्थानों में से उसे 92 लाख मत प्राप्त हुए। इस सम्पूर्ण सम्भाग में जनता पार्टी को केवल 6 स्थान ही प्राप्त हुए यदि आन्ध्रप्रदेश और कर्नाटक में कांग्रेस को यह विजय अपने बलबूते पर प्राप्त हुई तो तमिलनाडु और केरल में इसकी विजय में इसके चुनाव गठबंधनों को प्रभावशाली योगदान रहा। जहाँ तमिलनाडु में अन्नाद्रमुक के साथ कांग्रेस के चुनाव गठबंधन ने इस दल को भारी सफलता प्रदान की, वहाँ केरल में इसकी विजय में साम्यवादी दल की भूमिका प्रमुख रूप से उत्तरदायरी रही। चुनाव परिणामों में विपक्ष की कमरतोड़ कर रख दी। इस संभाग में विपक्षी दल नहीं के बराबर थे जैसा कि जे.ए. नाईक ने भी लिखा है कि 'जनता हवा' जिसने उत्तरी भारत में कांग्रेस को साफ कर दिया था, दक्षिण में प्रवेश भी नहीं कर सकी। पश्चिम में भी इसका प्रवाह नहीं हुआ और यह शहरों तक ही सीमित रही। कांग्रेस आन्ध्रप्रदेश और कर्नाटक में अत्यन्त शक्तिशाली थी और यह महाराष्ट्र और गुजरात में भी प्रभावशाली थी। तमिलनाडु और केरल में कांग्रेस के चुनाव सहयोगी दल शक्तिशाली रहे।[46] कांग्रेस ने अपनी प्रभावशाली विजय के कारण ही यह लोकसभा में विपक्षी दल के रूप में सम्मानजनक स्थिति

प्राप्त करने में सफल रही।

अब प्रश्न यह उठता है कि दक्षिण भारत में जनता पार्टी को बुरी तरह से पराजय का सामना करना और कांग्रेस को आशातीत से भी कहीं अधिक सफलता मिलने के पीछे किन कारणों का योगदान रहा है? परिस्थितियों का सही विश्लेषण करने पर निम्न स्थितियों को इसके लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। प्रथम, संगठनात्मक दृष्टि से जनता पार्टी की स्थिति दक्षिण मे बहुत कमजोर थी। आन्ध्रप्रदेश में नीलम संजीव रेड्डी में इतनी क्षमता नहीं थी कि वे कांग्रेस का मुकाबला कर पाते। इस प्रदेश में जनता पार्टी का संगठन नहीं के बराबर था। तेलांगना प्रजा समिति के कांग्रेस में विलय हो जाने के बाद इस प्रदेश में विपक्ष का अस्तित्व ही नहीं रहा। यह कांग्रेस का ऐसा सुदृढ़तम गढ़ था, जिसको भेदना किसी के बस की बात नहीं थी। यही स्थिति तमिलनाडु की थी।

तमिलनाडु में जनता पार्टी के संगठन कांग्रेस घटक का ही अस्तित्व था और भारतीय जनसंघ, सोशलिस्ट पार्टी और लोकदल का अस्तित्व भी नहीं था। कामराज नाडार के देहावसान के बाद संगठन कांग्रेस के अनेक प्रभावशाली नेता और कार्यकर्ता कांग्रेस में शामिल हो गये थे। इससे संगठन कांग्रेस की शक्ति क्षीण हो गई थी। पी. रामचन्द्रन जैसा नेता कांग्रेस को चुनौती देने की स्थिति में नहीं थे। कर्नाटक में यद्यपि जनता पार्टी की स्थिति जनता पार्टी की स्थिति अन्य राज्यों से बेहतर थी, लेकिन कर्नाटक में कांग्रेस की सुदृढ़ स्थिति को देखते हुए यह बहुत कमजोर नजर आती थी। मुख्यमन्त्री देवराज अर्स के प्रभावशाली व्यक्तित्व के सम्मुख जनता पार्टी नेताओं एस. निजीलिंगप्पा, वीरेन्द्र पाटिल और रामकृष्ण हेगड़े की राजनीतिक स्थिति और प्रभाव कमजोर ही था। देवराज अर्स और कांग्रेस की शक्ति का अनुमान इसी से लगाया जा सकता था किस सन 1971 में राज्य में वीरेन्द्र पाटिल के नेतृत्व में संगठन कांग्रेस की सरकार के रहते हुए भी लोकसभा के सभी 27 स्थान इन्दिरा गाँधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस ने जीत लिए थे।

देवराज अर्स के नेतृत्व में कांग्रेस बहुत शक्तिशाली थी। पाण्डिचेरी में जनता पार्टी का अस्तित्व ही नहीं था। केरल में भी जनता पार्टी की उपस्थिति नाममात्र ही थी। इसका केवल सोशलिस्ट घटक ही सक्रिय था परन्तु सम्पूर्ण राज्य में जनता पार्टी का अस्तित्व नहीं था। इस प्रकार दक्षिण के राज्यों में जनता पार्टी का संगठनात्मक दृष्टि से कमजोर होना भी इसकी पराजय का मुख्य कारण बना।

द्वितीय, कांग्रेस की विजय में इसके सहयोगी दलों का भी भारी योगदान रहा। तमिलनाडु में अन्ना द्रमुक के नेता एम.जी. रामचन्द्रन का करिश्मा कांग्रेस और अन्नाद्रमुक गठबंधन की विजय में प्रमुख रूप से उत्तरदायी रहा।

एम.जी. रामचन्द्रन के सामने द्रमुक नेता करूणानिधि कहीं नहीं टिक सके। अगर जनता पार्टी ने द्रमुक के स्थान पर अन्ना द्रमुक के साथ चुनाव गठबंधन किया होता तो इतिहास ही दूसरा होता। श्री करूणानिधि और द्रमुक के अन्य नेताओं पर लगाये जाने वाले भ्रष्टाचार के आरोपों ने भी इस गठबंधन की पराजय में योगदान किया। अतः जनता पार्टी के लिए द्रमुक का सहयोग लाभप्रद सिद्ध होने के स्थान पर हानिकारक अधिक सिद्ध हुआ। केरल में कांग्रेस की विजय में अच्युत मेनन के नेतृत्व वाली संयुक्त सरकार की जनता से प्रतिष्ठा विशेष रूप से सहायक सिद्ध हुई। अच्युत मेनन के परिपक्व नेतृत्व में राज्य में कांग्रेस और साम्यवादी दल के गठबंधन को स्थायित्व प्रदान किया। फलस्वरूप केरल के मतदाताओं के राज्य में स्थिरता के तथ्य को ध्यान में रखते हुए कांग्रेस और भारतीय साम्यवादी दल के गठबंधन के पक्ष में अपना अभूतपूर्व समर्थन दिया। यह गठबंधन स्वतन्त्रता के बाद पहली बार राज्य में 6 वर्षों तक स्थिर सरकार का संचालन करने में सफल हुआ। परिणामस्वरूप राज्य की जनता ने मार्क्सवादी साम्यवादी दल और जनता पार्टी के गठबंधन को अस्वीकार कर दिया। इस तरह से दक्षिण भारत में सभी प्रमुख और शक्तिशाली विपक्षी दल जनता पार्टी के विरूद्ध कांग्रेस का समर्थन कर रहे थे।

तृतीय, दक्षिण भारत कांग्रेस का सदैव से ही परम्परागत समर्थक रहा है।

सन 1971 के संसदीय चुनाव में भी इस संभाग से कांग्रेस को भारी विजय प्राप्त हुई अतः इस बार विजय सर्वथा अपेक्षित नहीं थी।

चतुर्थ, दक्षिण राज्यों के मुख्यमंत्री आपातकाल और संजयवादी की चकाचौंध से उतने प्रभावित नहीं हुए थे जितने की उत्तरी राज्यों के मुख्यमंत्री। उन्होंने न तो असंभव से लगने वाले परिवार नियोजन के लक्ष्य ही निर्धारित किये और न ही उसको लागू करने में ज्यादतियाँ ही कीं। उन्होंने शहरों के सौन्दर्यीकरण के नाम पर गरीब और कमजोर वर्ग के लोगों को बेघरबार भी नहीं किया। इस तरह से आपातकाल की भयावहता से ये राज्य बहुत अधिक प्रभावित नहीं हुए।

पंचम्, दक्षिण राज्यों के मुख्यमंत्रियों की प्रशासनिक क्षमता और उनके द्वारा कमजोर वर्ग के उत्थान और कल्याण के लिए लागू की गई योजनाओं ने भी जनता को कांग्रेस के पक्ष में मतदान करने के लिए प्रेरित किया। कर्नाटक में देवराज अर्स, आन्ध्रप्रदेश में जे. वेंगलराव और केरल में अच्युत मेनन के नेतृत्व वाली सरकारों ने हरिजनों, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उत्थान की दिशा में भागीरथ प्रयास किये। भूमि सुधारों को लागू किया गया अतः कांग्रेस ने इन परम्परागत समर्थक वर्गों के दल के पक्ष में मतदान किया।

षष्टम्, दक्षिण का मतदान प्रधानमन्त्री इंदिरा गाँधी के 'करिश्मे' से अभिभूत था। आंध्रप्रदेश का मतदाता इंदिरा गाँधी को 'इन्दिराम्मा' कहकर संबोधित करता था। कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु के मतदाताओं पर भी इंदिरा गाँधी का गहरा प्रभाव था। उनका चुनाव सभाओं में भारी भीड़ उनकी विजय का स्पष्ट आभास देती थी। इनके विपरीत इंदिरा गाँधी की तुलना में विपक्ष का कोई भी नेता दक्षिणी भारत में मतदाताओं की भावनाओं को उद्वेलित नहीं कर सका। नीलम संजीव रेड्डी, एस. निजिलिंगप्पा और पी. रामचन्द्रन जैसे विपक्षी नेताओं का जनता पर कोई प्रभाव नहीं था। जयप्रकाश नारायण अस्वस्थ होने के कारण दक्षिण भारत में प्रचार नहीं कर सके। मोरारजी देसाई और जगजीवनराम की अपीलों का मतदाताओं पर विशेष

प्रभाव नहीं पड़ा। जामा मस्जिद के इमाम सैयद मौलाना अब्दुल्ला बुखारी की अपीलों से भी दक्षिण का मतदाता अप्रभावित रहा। इस तरह से इंदिरा गाँधी के धुंआधांर प्रचार की काट करने के लिए जनता पार्टी के पास कोई सशक्त विकल्प नहीं था। जनता पार्टी के नेताओं ने भी अपना ध्यान उत्तरी भारत की तरफ ही केन्द्रित किया।

सप्तम्, कांग्रेस और सहयोगी दलों ने दक्षिण भारत के मतदाताओं की भावनाओं को उभारने के भी प्रयत्न किये। उनमें इस बात का भी प्रचार किया गया कि जनता पार्टी उत्तरी भारत की पार्टी है और अगर यह सत्ता में आई गई तो नेहरू के त्रिभाषा फार्मूले को रद्द कर दिया जायेगा और उन पर हिन्दी लाद दी जायेगी। जनता नेताओं में अटलबिहारी वाजपेयी, राजनारायण और मधुलिमये समेत जनसंघियों और सोशलिस्टों का हिन्दी प्रेम सर्वविदित था।

अतः हिन्दी विवाद को उभारकर के भी मतदाताओं का आकृष्ट करने का प्रयत्न किया गया। तमिलनाडु में हिन्दी का प्रश्न सदैव से ही संवेदनशील रहा है। इस तरह से दक्षिण भारत के राज्यों में कांग्रेस की विजय ने भी सभी भविष्यवाणियों को झुठला दिया।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ उत्तरी भारत में जनता पार्टी को अप्रत्याशित सफलता प्राप्त हुई वहाँ दूसरी तरफ दक्षिणी भारत में कांग्रेस को इतनी विशाल और महत्वपूर्ण विजय की किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। इसके साथ ही जहाँ उत्तर भारत में कांग्रेस को प्राप्त मतों और लोकसभा में प्राप्त स्थानों की संख्या में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगत हुआ वहाँ दूसरी तरफ यहीं स्थिति जनता पार्टी के साथ घटित हुई। यद्यपि उसे मात्र 6 स्थानों पर ही विजय प्राप्त हुई लेकिन उसे पर्याप्त मात्रा में मत प्राप्त हुए। अतः ये चुनाव परिणाम उत्तर दक्षिण की विभाजक रेखा खींचते थे।

2. जनता पार्टी का गठन एवं उसका प्रभाव :—

18 महीने आपातकाल की कटु आलोचना संजोए 18 जनवरी 1977 को

इन्दिरा गाँधी की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा पांचवीं लोकसभा भंग करने एवं मार्च 1977 में छठे आम चुनाव होने की घोषणा ने विभिन्न प्रतिपक्षों दलों के समक्ष गहन चुनौती उत्पन्न कर दी और विलय की विचारणा को अनिवार्य बना दिया। चार विपक्षी दलों ने मिलकर (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल तथा समाजवादी दल) जनता पार्टी का गठन किया। इसके लिए 23 जनवरी 1977 को एक 27 सदस्यीय राष्ट्रीय समिति की घोषणा की।

भूतपूर्व उपप्रधानमंत्री और संगठन कांग्रेस ने नेता मोरारजी देसाई को दल का अध्यक्ष तथा उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री एवं भारतीय लोकदल के अध्यक्ष चौधरी चरणसिंह को उपाध्यक्ष बनाया गया तथा जनसंघ अध्यक्ष लालकृष्ण आड़वाणी, समाजवादी पार्टी के महासचिव सुरेन्द्र मोहन ओर कांग्रेस संसदीय दल के भूतपूर्व महासचिव जी रामधन दल के महासचिव बने। शान्तिभूषण (संगठन कांग्रेस) को दल का कोषाध्यक्ष मनोनीत किया। अशोक मेहता, चन्द्रभानु गुप्ता, नीलम संजीव रेड्डी, रामचन्द्रन, श्याम नन्दन मिश्र, सिकन्दर बख्त, प्रफुल्ल चन्द्र सैन, अटल विहारी वाजपेयी, भैंरोसिंह शेखावत, कुशमाउ ठाकरे, नानाजी देखमुख (सभी जनसंघ), बीजू पटनायक, भानु प्रताप सिंह, चांदराय, एचएम पटेल, कर्पूरी ठाकुर (सभी भारतीय लोकदल), श्रीमती मृणाल गोरे, नाना साहब गोरे, समर गुप्ता, एश्री धवन (सभी समाजवादी पार्टी) और चन्द्रशेखर (निर्दलीय) समिति के सदस्य रखे गये।[47]

चूँकि दल को कोई नया चुनाव चिन्ह मिलना कठिन था इसलिए उसने फैसला किया कि भारतीय लोकदल के चुनाव चिह्न (हलधर) को तमिलनाडु को छोड़कर शेष देश में अपनाया जाये व तमिलनाडु में संगठन कांग्रेस का चुनाव चिन्ह (चर्खा चलाती महिला) इस्तेमाल किया जाये। बाद में इस निर्णय को चुनाव आयुक्त की स्वीकृति प्राप्त हो गई। दिनांक 23 जनवरी 1977 को अपनी पहली बैठक में राष्ट्रीय समिति ने तीन प्रस्ताव पारित किये। उनमें से एक में समिति ने यह माँग की। आर्थिक अपराधों में नजर बन्द व्यक्तियों को छोड़कर बाकी नजरबन्दों को अधिकाधिक

तीन–चार दिन में रिहा किया जावे।

दूसरे प्रस्ताव में सरकार से अनुरोध किया गया कि वह आकाशवाणी और दूरदर्शन को अविलम्ब निर्देश दें कि इन पर सरकारी दल, जनता पार्टी, अन्य विपक्षी दलों की गतिविधियाँ और दृष्टिकोण की खबरें निष्पक्ष रूप से जाये। तीसरे प्रस्ताव में सरकार से अनुरोध किया गया कि वह प्रतिबंधित संगठनों पर रोक वापिस ले और अगर हमारी गलती है तो इनमें से किसी के भी खिलाफ न्यायिक जाँच बैठा दे।[48] सर्वोदय नेता जयप्रकाश नारायण ने जनता पार्टी के समर्थन में 23 जनवरी 1977 को वक्तव्य देते हुए कहा कि वह सत्ता का विकेन्द्रीकरण करेगी ताकि दूर गांवों में रहने वाला व्यक्ति भी अपने को प्रभावित करने वाली बातों व योजनाओं का निर्णय करने भी भागीदार बन सकें।

उन्होंने कहा कि पार्टी न्यायपालिका और समाचार–पत्रों जैसी स्वतंत्र संस्थाओं को इतना मजबूत बनायेगी कि वह कार्यपालिका को अपनी ताकत को दुरूपयोग करने में रोक सके और देश को तानाशाही शासन का खतरा कभी पैदा न हो। तब गाँधीवादी सिद्धान्तों पर अपना सामाजिक आर्थिक कार्यक्रम बनाने को प्रतिबद्ध है।

लोकसभा के मार्च 1977 के चुनाव परिणामों ने जिनके फलस्वरूप जनता सरकार के रूप में पहली बार गैर–कांग्रेसी सरकार केन्द्र में बनी।[49]

3. जनता राजनीति :–

चुनाव करने की प्रधानमंत्री की घोषणा पूर्व ही केन्द्रीय राज्यमंत्री ओम मेहता ने उस वर्ष चुनाव कराये जाने के विचार को 'हास्यापद' बताते हुए कहा था कि संसद ने अपनी अवधि एक वर्ष बढ़ा दी है अतः मार्च में चुनाव कराये जाने का कोई विकल्प नहीं उठता है।[50]

तत्कालीन रक्षा मंत्री बंशीलाल और संजय गाँधी भी इस चुनाव के विरूद्ध थे।[51]

10 फरवरी, 1975 ई. को जनता पार्टी के अपाध्यक्ष चरण सिंह ने अपने दल या चुनाव घोषणा पर जारी किया।[52] जे.ए. नायक ने लिखा है कि न केवल जेलों के अनुभवों ने बल्कि चुनावों की घोषणा ने भी नजरबंद और समाजवादी विपक्षी नेताओं को उनके व्यक्तिगत और वैचारिक मतभेदों को समाप्त करने के लिए विवश कर दिया।[53]

4. जनता पार्टी के आन्तरिक मतभेद व जनता सरकार का पतन :–

जिन परिस्थितियों में जनता पार्टी का गठन हुआ तथा उनमें वैचारिक मतभेद होना कोई अस्वाभाविक नहीं था। किसी भी ऐसी पार्टी के लिए स्वस्थ परम्परा स्थापित करने का एकमात्र रास्ता मतभेद है, जो एक आकस्मिक व क्रान्तिकारी परिवर्तन से पैदा हुई, जो वैचारिक संघर्ष से ही एक सामूहिक व आर्थिक आधार तैयार हो सकता था, जो जनता पार्टी को एक शक्तिशाली विकल्प के रूप में विकसित करता। मगर इसके इस प्रकार के विकास को नैतिक जोड़–तोड़ तक समिति का गठन कर लिया गया। प्रारम्भ में जनता पार्टी शासित राज्यों में सत्ता का बंटवारा, उनके आपसी संबंधों में अवश्यभावी कटुता, देसाई–चरण सिंह विवाद, चरण सिंह और राजनारायण का मंत्रिमण्डल से निष्कासन, मध्यस्थता का चलना, बन्द होना, फिर चलना, किसान रैली की धमकियाँ और प्रदर्शन नये–नये समझौते–फॉर्मूले, दोहरी सदस्यता, आर.एस.एस., क्रांति देसाई का मामला आदि विवादास्पद व आन्तरिक मतभेद में ग्रस्त जनता पार्टी ने राजनैतिक नाटक का हश्र हुआ जैसा कि आशंका थी। निःसंदेह ही राजनीतिक के इस घटनाक्रम में सत्ता राजनीति का चरित्र और प्रचलन अपने पतन के अन्तिम बिन्दुओं पर पहुँच गयी। 12 जून, 1979 को जनता पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी एवं राजनारायण की सदस्यता समाप्त करने, 23 जून को उसके द्वारा दल त्याग करने तथा उत्तर प्रदेश में रामनरेश यादव, हरियाणा में देवीलाल व बिहार में कर्पूरी ठाकुर को मुख्यमंत्री पद से हटने को विवश होने के उपरान्त जब 9 जुलाई 1979 को संसद का मानसून सत्र आरम्भ हुआ तो कांग्रेस

संसदीय दल के निर्णयानुसार विपक्ष के नेता बाई.बी. चव्हाण (कर्नाटक के कुछ कांग्रेस (ई) सदस्यों तथा त्याग पत्र करने से सी.एम. स्टीफन को विपक्ष के नेता पद से हटना पड़ा क्योंकि अब कांग्रेस विपक्षी दल बन गया था) ने 10 जुलाई को मोरार जी सरकार के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया। 16 जुलाई 1979 को मतदान होना निश्चित किया गया किन्तु इसी बीच जनता पार्टी के कुल 49 सदस्यों द्वारा त्याग पत्र दे दिए जाने के कारण लोकसभा में 11 जुलाई को भी जनता सरकार अल्प मत में आ गई। 12 जुलाई को स्वास्थ्य मंत्री श्री रविराय, 13 जुलाई को पेट्रोलियम और रसायनमंत्री हेमवती नन्दन बहुगुणा, 14 जुलाई को इस्पात मंत्री श्री बीजू पटनायक व 15 जुलाई को उद्योगमंत्री जॉर्ज फर्नाडिश व पर्यटन मंत्री पुरूषोत्तम कौशिक द्वारा मंत्रिमण्डल व संसदीय दल से त्याग पत्र दे दिये जाने पर मोरारजी देसाई ने 15 जुलाई 1979 की शाम को अपनी सरकार का त्याग–पत्र देते हुए पुनः सरकार बनाने का दावा भी पेश किया।

जनता पार्टी के अध्यक्ष चन्द्रशेखर ने संकट के समय पार्टी छोड़कर जाने वाले की निंदा की, उन्होंने कहा कि इन लोगों ने ऐसे समय पार्टी छोड़ी है जब सरकार अविश्वास प्रस्ताव का सामना कर रही थी। जयप्रकाश नारायण जिन्होंने 28 महीने की जनता पार्टी की सरकार को पिता समान स्नेह दिया, ने भी मोरारजी देसाई के त्यागपत्र पर गहरा दुःख प्रकट किया। जनता पार्टी से निकल कर आये सांसदों से बनी जनता पार्टी (एस) के नेता राजनारायण ने नई सरकार बनाने के लिए दावा पेश किया। लोकसभा में उसका दल उसका सबसे बड़ा दल है। सन् 1977 के चुनाव परिणामों के पश्चात, केन्द्र में प्रथम बार गैर कांग्रेसी सरकार, जनता सरकार उन दिनों नौ विधानसभाओं को भंग करने का निर्णय लिया। जिन राज्यों में मार्च के चुनावों में जनता ने कांग्रेस को बुरी तरह पराजित कर दिया था किन्तु कार्यवाहक राष्ट्रपति जत्ती ने मंत्रिपरिषद की सलाह को तुरन्त मानने में झिझक दिखाई और अटक बतायी। उसके कारण ऐसा लगा कि देश में सर्वथा एक नये प्रकार का

राजनीतिक संकट उपस्थित हो गया है। यह एक ऐसा मुद्दा था जिसके विपक्ष में देश का जनमत, सर्वोच्च न्यायालय का अनियत और संवैधानिक संहितायें असंदिग्ध और निर्विवाद थी और मंत्रिपरिषद ने सर्वानुमति से निष्पक्ष किया था जो राष्ट्रपति के लिए सामान्यता मान्य था और 42वें संविधान संशोधन के अनुसार अनिवार्य रूप से बन्धनकारी था। 28 महीने की जनता पार्टी की सरकार यद्यपि फूट के कारण लोकसभा में अल्प मत में आ गयी और कोई भी अन्य दल अकेला वैकल्पिक सरकार का निर्माण करने की स्थिति में नहीं था। पहला राजनैतिक संकट 15 जुलाई 1979 को उत्पन्न हुआ जब भूतपूर्व प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई अपने मंत्रिमण्डल का त्यागपत्र दते हुए भी जनता पार्टी के संसदीय नेता पद पर बने रहे और उन्होंने राष्ट्रपति से कहा कि अभी भी जनता संसदीय नेता दल के लिए लोकसभा में समान विचारधारा दलों का पर्यटन जुटा पाना ज्यादा आसान है तथा इस बात का दावा किया कि लोकसभा में सबसे बड़ी पार्टी का नेता होने के कारण इन्हें दुबारा सरकार निर्माण में निमंत्रण दिया जाना चाहिए किन्तु राष्ट्रपति ने उसके दावे को स्वीकार नहीं किया। (दृष्टव्य है कि सर आइवर जैंनिग्स ने अपनी रचना 'केबिनेट गर्वनमेंट' में यह विचार व्यक्त किया है कि सरकार आन्तरिक फूट के कारण त्याग–पत्र देती है। दूसरे यह आवश्यक नहीं कि विपक्ष को सरकार निर्माण के लिए आमंत्रित किया जाये।)

उन्होंने पहले विपक्ष को नेता यशवन्त राव चाव्हण को अपने 75 सदस्यों के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए राष्ट्रीय कर्त्तव्य निर्वाह का दावा किया था किन्तु चव्हाण ने सरकार में अपने असमर्थता व्यक्त की परन्तु साथ में उन्होंने जनता (एस) के नेता चरण सिंह को समर्थन देने की बात भी कही। राष्ट्रपति ने भी देसाई और चरण सिंह दोनों को नई सरकार बनाने की संभावनाओं का पता लगने के लिए एक साथ निमंत्रण देते हुए दोनों को समर्थकों की सूचियाँ पेश करने का आदेश दिया।[54] निमंत्रण प्राप्त दोनों दल जनता पार्टी व जनता पार्टी (एस)

अपनी संख्या शक्ति बढ़ाने तथा सरकार बनाने में अपने दावों की संख्या से पुष्टि करने में लग गये। राजनीतिक गठबंधन और सौदेबाजी का मानो कोहराम ही मच गया। कल तक की कट्टर राजनीतिक शत्रुताऐं नई मैत्री संबंधों में ढलने लगी। कल तक जिन्हें अपराधी व राजनीतिक अहूता बताया जा रहा था। अब उन्हीं के साथ हाथ मिलाने की तत्परता सामने आने लगी। अन्ततः 26 जुलाई को राष्ट्रपति ने मोरारजी देसाई के नेतृत्व में 28 माह पूर्व गठित जनता पार्टी की सरकार के स्थान पर नई सरकार बनाने के लिए चरण सिंह को समर्थकों की संख्या के आधार पर आमंत्रित किया। इस प्रकार भारतीय गणतंत्र के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि राष्ट्रपति को अभूतपूर्व संकट के कारण प्रधानमंत्री की नियुक्ति में अपना विवेक काम में लेना पड़ा है।

स्पष्ट है कि जिन परिस्थितियों एवं आधारों पर चरण सिंह पदासीन हुए, उनकी सरकार की अस्थिरता के संदेह उत्पन्न करने में काफी थे। निश्चय ही यह आशंका स्वाभाविक थी कि जिन विभिन्न दलों व व्यक्तिगत दलों ने उनके समर्थन दिया वे सब इनका मूल्य वसूल करेगें। जहाँ तक चरण सिंह का प्रश्न है, निश्चय ही वे प्रधानमंत्री पद पर बैठने की अपनी जीवन की महत्वांकाक्षा को पूरी करने में अवश्य सफल हो गये। पर उनके कारण राजनीतिक व्यवस्था एवं स्वयं राजनीति के प्रति भी जन अविश्वास बढ़ने लगा और जैसी की आशंका थी। दूसरा, राजनैतिक संकट 20 अगस्त 1979 को उत्पन्न हुआ जब चरण सिंह लोकसभा का विश्वास प्राप्त करने के स्थान पर त्याग पत्र दे दिया और राष्ट्रपति को लोकसभा भंग करने तथा मध्यावधि चुनाव कराने की घोषणा की मंत्रणा की। सरकार के त्याग पत्र देने के लगभग एक घण्टे बाद विपक्ष के नेता जगजीवनराम (जो कि मोरारजी देसाई द्वारा जनता पार्टी संसदीय दल के नेता पद से त्याग पद दे दिये जाने के बाद सर्वसम्मत से नेता चुन लिए गए थे) राष्ट्रपति से मिले और वैकल्पिक सरकार बनाने का अपना दावा पेश किया। उन्होंने लोकसभा को भंग करने के प्रस्ताव का विरोध किया क्योंकि चरण

सिंह को ऐसी सिफारिश करने का अधिकार नहीं था।[55] राष्ट्रपति रेड्डी ने 205 सदस्यों वाली सबसे बड़ी जनता पार्टी के नेता जगजीवनराम को सरकार बनाने का अवसर देने के बजाय एक ऐसे सशर्त मंत्रिमंडल के परामर्श के आधार पर लोकसभा को 22 अगस्त 1979 को भंग कर दिया तथा दिसम्बर में मध्यावधि चुनाव की घोषणा कर दी, जो आलोचकों के अनुसार त्याग–पत्र देने के कारण मंत्रिमण्डल कहलाने योग्य नहीं था। राष्ट्रपति ने चरणसिंह को चुनाव सम्पन्न होने तक कामचलाऊ सरकार का प्रधानमंत्री बने रहने के लिए भी आदेश दिये।[56]

5. कांग्रेस व्यवस्था का पतन – एक विश्लेषण :–

कांग्रेस (ई) का जन्म जयप्रकाश नारायण ने सन् 1974 में युवा वर्ग के आन्दोलन को नेतृत्व देकर तानाशाही और भ्रष्टाचार के विरूद्ध अभियान शुरू किया था। जब उन्होंने भ्रष्टाचार को राजनीतिक जीवन में ऊपर से लेकर नीचे तक व्याप्त बताया तो ऊपर के वर्गों ने इसे एक चिर–परिचित आरोप समझकर तिरस्कारपूर्वक टाल दिया। समीक्षकों के अनुसार सन् 1977 के चुनावों में 30 वर्ष के कांग्रेस राज का व इसमें उत्पन्न हुई। 'कांग्रेस व्यवस्था' को एक झटके से हटाकर करोड़ों निरक्षर भारतीयों ने बताया कि न तानाशाही को बर्दाश्त करेंगे न भ्रष्टाचार को। उनके अनुसार यह घटना भारतीय जनता की अपनी स्वतंत्र पद्धति का बहुत बड़ा प्रमाण है। 19 महीने के दमन के विरूद्ध इसी जनता ने दलों को एक होने और कांग्रेस का विकल्प देने को बाध्य किया। वे एक हुये क्योंकि उन्होंने वक्त का तकाजा पहचाना लेकिन अभी भी उन्हें जनता की आकांक्षाऐं पूरी तरह समझना बाकी था।[57]

मार्च 1977 के संसदीय चुनावों व जून 1977 के 10 विधानसभा चुनावों में करारी हार के बाद की परिस्थितियों के संदर्भ मे कांग्रेस में आन्तरिक संकट उभरने लगा। पार्टी में सामूहिक नेतृत्व की व्यवस्था, फिर अभिभाचन व देवराज अर्स के कर्नाटक मुद्दे और अन्ततोगत्वा अध्यक्ष पद के मामले पर अध्यक्ष ब्रह्मानंद रेड्डी (जो देवकान्त बरूआ के पदच्युत एवं अन्तरिम अध्यक्ष स्वर्ण सिंह के हटने पर इन्दिरा

गाँधी के भी समर्थन से महासमिति द्वारा चुनाव में सिद्धार्थ शंकर राय व डॉ. कर्ण सिंह को हराकर विजयी हुये थे)

इन्दिरा गाँधी के बीच हुए मतभेदों के फलस्वरूप कांग्रेस में दूसरी बार विभाजन हो गया। कांग्रेस पार्टी को मजबूत बनाने के नाम पर एक व दो जनवरी 1978 के चुनाव सम्पन्न हुये। सम्मेलन ने इंदिरा गांधी को अध्यक्ष एवं इनके नेतृत्व वाली कांग्रेस को कांग्रेस (ई) के नाम से असली भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस घोषित किया।[58]

6. कांग्रेस (एस) का जन्म :—

चिकमंगलूर (कर्नाटक) विजय के बाद इन्दिरा गांधी एवं कर्नाटक के मुख्यमंत्री देवराज अर्स के बीच मतभेद उभरने लगे जिनकी परिणिति 25 जून 1979 को हुई जब देवराज अर्स ने कांग्रेस(ई) से नाता तोड़कर कर्नाटक कांग्रेस के नाम से एक अलग दल की स्थापना कर ली।[59] इससे पूर्व कांग्रेस(ई) ने उन्हें 6 वर्ष के लिए निष्कासित कर दिया था। राज्य के अधिकतर कांग्रेस(ई) विधायक देवराज अर्स के साथ रहे। इस प्रकार कांग्रेस का एक और विभाजन हो गया। बाद में रेड्डी, चाव्हण, स्वर्ण सिंह वाली कांग्रेस तथा कर्नाटक कांग्रेस का विलय हो गया जिसके अध्यक्ष देवराज अर्स बनाये गये। इसको बाद में कांग्रेस (एस) नाम दिया गया, जिसके अध्यक्ष शरद पंवार बनाये गये।[60]

7. लोकतंत्रीय कांग्रेस (कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी) :—

2 फरवरी 1977 को जगजीवन राम, हेमवती नन्दन बहुगुणा, नन्दिनी सतपथी तथा अनेक कांग्रेसी नेताओं ने दल में आन्तरिक लोकतंत्र के हनन का आरोप लगाते हुए कांग्रेस से त्यागपत्र दे दिया और अपनी अलग लोकतंत्री कांग्रेस (कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी) के निर्माण की घोषणा की। यह नया दल बाबू जगजीवन राम की अध्यक्षता में स्थापित हुआ। 5 मार्च 1977 का इसका जनता पार्टी में

औपचारिक तौर पर विलय हो गया, पर इसने तत्कालीन राजनीति में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण भूमिका सम्पादित की और जनता पार्टी के चुनाव चिन्ह ''चक्र हलधर'' से चुनाव लड़ा। बहुगुणा और श्रीमती सतपथी को लोकतंत्री कांग्रेस का महासचिव बनाया गया। लोकतंत्री कांग्रेस के गठन का मुख्य उद्देश्य भारतीय राजनीति की सर्वधिकारवादी और सर्वसत्तावादी प्रवृतियों पर अंकुश लगाना घोषित किया गया। 21 फरवरी को लोकतंत्र कांग्रेस के महामंत्री हेमवती नन्दन बहुगुणा ने अपना घोषणा पत्र जारी किया जिसमें लगभग वे ही बातें थी जो जनता पार्टी के चुनाव घोषणा पत्र में थी।[61]

8. लोकदल का निर्माण :–

जुलाई 1979 में जनता पार्टी के बहुमत से सदस्यों ने दल छोड़कर राजनारायण की अध्यक्षता में एक नया दल जनता (एस) अर्थात् सेक्यूलर अर्थात् धर्मनिरपेक्ष का गठन किया था। इसके नेता चौधरी चरण सिंह ने 29 जुलाई 1979 को प्रधानमंत्री पद की शपथ ली और कांग्रेस (संगठन) सत्ता का एक मुख्य भागीदार बना। 26 सितम्बर 1979 को जनता (एस) सोशलिस्ट पार्टी तथा उड़ीसा की जनता पार्टी को मिलाकर नई दिल्ली में एक राजनीतिक सम्मेलन में एक नई पार्टी 'लोकदल' के गठन की घोषणा की गयी। प्रधानमंत्री चरण सिंह लोकदल के प्रथम अध्यक्ष और जनता(एस) के अध्यक्ष राजनारायण सर्वसम्मति से उसके कार्यकारी अध यक्ष चुने गये। केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री हेमवती नन्दन बहुगुणा की कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी इन नई पार्टी में शामिल नहीं हुई। कांग्रेस (संगठन) का भी अपना अलग अस्तित्व बना रहा। इस बात के प्रयत्न चलते रहे कि कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी लोकदल में शामिल हो जाये, लेकिन हुआ यह कि प्रधानमंत्री चरण सिंह की माँग पर 19 अक्टूबर 1979 की बहुगुणा ने केन्द्रीय मंत्रिमण्डल से इस्तीफा दे दिया। बहुगुणा के चरण सिंह सरकार से निकल जाने से चुनाव के पूर्व की राजनीतिक स्थिति अनिश्चित और उलझनपूर्ण हो गई। नवगठित लोकदल को आघात पहुँचा।

नवगठित लोकदल ने गांधीवादी तरीकों से ग्रामीण बैंकों के आर्थिक उद्धार के लिए बुनियादी परिवर्तन करने का आश्वासन दिया। उल्लेखनीय है कि लोकदल के रूप में पुराना भालोद (भारतीय लोकदल) भी पुनर्जीवित हुआ। सन् 1971 के आम चुनावों में विपक्षी मोर्चे की भारी पराजय के बाद भारतीय लोकदल का निर्माण चरण सिंह के भारतीय क्रांतिदल, स्वतंत्र पार्टी, संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी का राजनारायण गुट तथा उड़ीसा में भी बीजू पटनायक के राजनारायण गुट को मिलाकर किया गया था। लोकदल में भी सभी राजनीतिक तत्व शामिल हुए जो इतना अन्तर जरूर है कि संसोपा का जो राजनारायण विरोधी गुट उस समय भारतीय लोकतंत्र में सम्मिलित नहीं हुआ था वह भी इस बार लोकदल के झण्डे के नीचे एकत्र हो गया।

2 नवम्बर 1979 को चुनाव आयोग ने अपने इस फैसल में लोकदल जनता के रूप में मान्यता प्रदान की तथा चुनाव चिन्ह (खेत जोतते हुए किसान) को बरकरार रखा। चुनाव आयोग के इस निर्णय के संदर्भ में लोकदल की लोकसभा का आगामी मध्यावधि चुनाव जनता (एस) के नाम और उसके चुनाव चिन्ह पर लड़ना पड़ेगा। मुख्य चुनाव आयुक्त ने जनता पार्टी और कांग्रेस(ई) की इस दलील को स्वीकार नहीं किया कि चूंकि हल जोतता किसान उनके चुनाव चिन्ह से मेल खाता है।

इसलिए उक्त चुनाव चिन्ह जनता (एस) को नई दिशा दिया जाना चाहिए। मुख्य चुनाव आयुक्त शकधर ने अपने निर्णय में यह भी कहा कि जनता पार्टी और कांग्रेस(ई) की आपत्तियों को खारिज कर दिया गया है क्योंकि वे यह नहीं सिद्ध कर सकी कि जनता पार्टी (एस) समाप्त हो गई है और लोकदल नाम की नई पार्टी बन गई है।

जनता(एस) ने कहा कि वह कानून के अन्तर्गत वांछित सभी आवश्यक बातों की पूर्ति करेगी इसलिए आयोग को इस बात से कोई मतलब नहीं है कि चुनाव चिन्ह आदेश के क्षेत्र से बाहर पार्टिया क्या करती हैं। चुनाव आयोग का क्षेत्र सिर्फ

चुनाव चिन्ह आदेश तक समिति है। आदेश में यह भी नहीं माना गया है कि उक्त चुनाव चिन्ह जनता पार्टी के चुनाव चिन्ह (हलधर) अथवा मान्यता प्राप्त दूसरे राजनीतिक दल के एक गुट को मिले ''बैलों की गाड़ी'' के चुनाव चिन्ह से मिलता जुलता है इसलिए भ्रम पैदा कर सकता है।[62]

6 नवम्बर 1979 को प्रकाशित समाचारों के अनुसार इस दल के चुनाव घोषणा पत्र में पिछड़े वर्ग के लोगों को सरकारी नौकरियों जिसमें अखिल भारतीय सेवायें भी शामिल थीं। 25 प्रतिशत आरक्षण देने की बात कही थी। घोषणा–पत्र जिसे लोकदल के नेता अन्तिम रूप दे रहे थे। भूमि सुधारों के लिए संविधान के 7वें अनुच्छेद में संशोधन करने का वादा किया गया जिसमें भूमि कानूनों को पूरी तरह लागू करने के मार्ग की बाधाओं को दूर किया जा सके। 34 पृष्ठों के घोषण पत्र में कहा गया है कि लोकदल में अन्त्योदय कार्यक्रम को प्रोत्साहन देना तथा लड़कियों को बढ़ावा देने के लिए विशेष ध्यान दिया जायेगा। कृषक, मजदूरों के लिए निर्धारित न्यूनतम मजदूरी के कानून को तत्परता से लागू किया जायेगा। घोषणा पत्र के प्रारूप में लघु तथा सीमान्त किसानों को सस्ते दर पर बैंकों से ऋण उपलब्ध कराने का वादा किया गया था। इसके अतिरिक्त स्वरोजगार में लगे लोगों को कम ब्याज पर वाणिज्यिक ऋण दिलाने का भी वादा किया गया।

घोषणा पत्र में गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विषमता को समाप्त करने का संकल्प दोहराया गया था। घोषणा पत्र में कहा गया था कि सार्वजनिक क्षेत्र में लगे कारखानों की व्यवस्था को चुस्त, दुरूस्त किया जायेगा तथा बेरोजगारी समाप्त करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक पूँजी नियोजन करने की बात कही गयी थी और कृषि तथा औद्योगिक उत्पादन के क्षेत्रों में व्याप्त असमानता को समाप्त करने का वादा किया था। कृषि को उद्योग मानकर सिंचाई पर अधिक धनराशि व्यय करने की बात कही गयी थी। घोषणा पत्र के प्रारूप में हरिजन तथा आदिवासी, महिला तथा अल्पसंख्यक वर्ग के लोगों के उत्थान

के लिए उन्हें विशेष अवसर देने का वादा किया गया था। उन्हें अपने विकास के लिए अलग शैक्षणिक संस्थाऐं खोलने तथा प्रशासन में स्वायत्ता का उपयोग करने के अधिकार प्रदान करने का भी वादा किया गया था। कानून एवं व्यवस्था में सुधार के लिए प्रशासनिक ढांचे में परिवर्तन लाने की बात भी कही गई थी। प्रारूप में चुनाव प्रणाली में सुधार का न्यायपालिका की निष्पक्षता तथा स्वतंत्रता बनाये रखने के लिए न्यायपालिका में सुधार लाने एवं प्रेस की स्वतंत्रता बनाये रखने का वादा किया गया था।[63]

9. भाजपा के निर्माण की परिस्थितियाँ :–

25 जून 1975 को पूरे देश पर आपातकाल भारतीय संविधान की धारा 352 के अन्तर्गत 'आंतरिक आपातकाल' के रूप में थोपा गया। देश के सभी बड़े नेता या तो नजरबंद कर दिये गये अथवा जेलों में डाल दिये गये। समाचार–पत्रों पर 'सेंसर' लगा दिया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ समेत अनेक संगठनों पर प्रतिबंध लगा दिया गया। हजारों कार्यकर्ताओं को मीसा के अन्तर्गत गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया। देश में लोकतंत्र का खतरा मंडराने लगा। जनसंघर्ष को भी तेज किया जाने लगा भूमिगत गतिविधियाँ तेज हो गईं। 8 जनवरी 1977 को लोकसभा भंग कर दी तथा नये जनादेश प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की। जयप्रकाश नारायण के आव्हान पर एक नया राष्ट्रीय दल 'जनता पार्टी' का गठन किया गया विपक्षी दल एक मंच से चुनाव लड़े तथा चुनाव में कम समय देने के कारण 'जनता पार्टी' का गठन पूरी तरह से राजनीतिक दल के रूप में नहीं हो पाया। आम चुनावों में कांग्रेस की करारी हार हुई तथा जनता पार्टी एवं विपक्षी पार्टियाँ भारी बहुमत के साथ सत्ता में आईं। पूर्व घोषणा के अनुसार 1 मई 1977 को भारतीय जनसंघ ने करीब 5000 प्रतिनिधियों के एक अधिवेशन में अपना विलय जनता पार्टी में कर दिया। जनता पार्टी का प्रयोग अधिक दिनों तक नहीं चल पाया। दो ढ़ाई वर्षों से भी आन्तरिक अंतर्विरोध स्तर पर आने लगा। कांग्रेस ने भी जनता पार्टी को तोड़ने में राजनीतिक

दांव–पेंच खेलने से परहेज नहीं किया। भारतीय जनसंघ से जनता पार्टी में आये सदस्यों को अलग–थलग करने की दोहरी सदस्यता का मामला उठाया गया। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से संबंध रखने पर आपत्तियाँ उठाई जाने लगी। यह कहा गया कि जनता पार्टी के सदस्य राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सदस्य नहीं बन सकते। 4 अप्रेल 1980 को जनता पार्टी की राष्ट्रीय कार्यसमिति ने अपने सदस्यों के राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सदस्य होने पर प्रतिबंध लगा दिया। पूर्व के भारतीय जनसंघ के संबद्ध सदस्यों ने इसका विरोध किया और जनता पार्टी से अलग होकर 6 अप्रेल 1980 को एक नया संगठन भारतीय जनता पार्टी की स्थापना हुई।

10. भारतीय जनता पाटी के विचार एवं दर्शन :–

भारतीय जनता पार्टी एक सुदृढ़, सशक्त, समृद्ध समर्थ एवं स्वावलम्बी भारत के निर्माण के लिए निरन्तर सक्रिय है। भारतीय जनता पार्टी की नीति अनेक बातों के संबंध में पुराने जनसंघ दल से मिलती हुई है और इस आधार पर सामान्यतया यह समझा जाता है कि भारतीय जनता पार्टी केन्द्र–राज्य संबंधों में केन्द्रीय सरकार को आर्थिक शक्तिशाली बनाने के पक्ष में है। इस विचार की इस तथ्य से पुष्टि होती है कि 6 मई 1980 को जारी किये गये आधारभूत नीति का एक अन्य पक्ष यह भी है कि यह दल राज्य सरकारों पर केन्द्र पर अनुचित नियंत्रण का विरोध करता है। अटल बिहारी वाजपेयी के शब्दों में ''वह एक मजबूत केन्द्र के पक्ष में है जो देश के अनुचित नियंत्रण का विरोध करता रहा है। अटल बिहारी ने कहा कि उसे राज्यों के संविधान प्रदत्त अधिकारों के हनन का कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। राज्यों को और अधिक वित्तीय अधिकार दिया जाना एक उचित बात है ताकि वे जनता के प्रति अपने बढ़ते हुए दायित्व को पूरा कर सकें।[64]

अटल बिहारी वाजपेयी को इस नवीन दल का अध्यक्ष और लालकृष्ण आडवाणी, सिकन्दर बख्त तथा मुरली मनोहर जोशी को दल का महासचिव नियुक्त किया गया। भूतपूर्व जनसंघ दल से सम्बन्धित जनता पार्टी सदस्य तो इसमें शामिल

हुए ही इसके साथ श्री सिकन्दर बख्त, राम जेठमलानी, शान्तिभूषण और के.एस. हेगड़े जैसे व्यक्ति जिनका जनसंघ या राष्ट्रीय स्वयंसेवक से कोई संबंध नहीं रहा भी इस पार्टी में शामिल हुए। पार्टी ने जयप्रकाश नारायण की सम्पूर्ण क्रान्ति तथा गाँधीवादी अर्थदृष्टि को अपना आदर्श बनाया और 6 मई 1980 को जारी किये गये अपने आधारभूत नीति कर्त्तव्य में पार्टी के 5 निष्ठाओं से प्रतिबद्ध किया। ये निष्ठाऐं– राष्ट्रवाद और राष्ट्रीय समन्वय, लोकतंत्र, प्रभावकारी धर्मनिरपेक्षता, गाँधीवादी समाजवाद और सिद्धान्तों पर आधारित साफ सुथरी राजनीति नीति वाक्य में दोहरी सदस्यता के संबंध में कहा गया है कि जो सामाजिक व सांस्कृतिक संगठन राजनीति गतिविधि में संलग्न नहीं है, उनके सदस्यों का भारतीय जनता पार्टी स्वागत करती है। जब तक वे पार्टी की विचारधारा और कार्यक्रम में आस्था रखेगें, उन संगठनों की सदस्यता को पार्टी की सदस्यता के प्रतिकूल नहीं समझा जायेगा। वक्तव्य में देश की मूलभूत समस्याओं के संबंध राष्ट्रीय सहमति को अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया। पार्टी ने बड़े राज्यों के स्थान पर नियोजित विकास और कुशल प्रशासन की दृष्टि से छोटे राज्यों की स्थापना की आवश्यकता पर बल दिया लेकिन साथ ही घोषणा की गयी कि इसके बाद राजनीतिक गतिविधियों और चुनाव का मुद्दा नहीं बनायेगी।[65]

11. भारतीय जनता पार्टी का सामाजिक आधार और राजनीतिक उपलब्धि–

भारतीय जनता पार्टी में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ में लोगों का आधिक्य है। पार्टी को छोटे व्यापारियों, शहरी मध्यम वर्ग, युवकों तथा बुद्धिजीवियों का समर्थन प्राप्त है। लोकसभा के सन् 1984 के चुनावों के अवसर पर भाजपा ने अपने चुनाव घोषणा–पत्र में वायदा किया कि वह कोई नया टैक्स नहीं लगायेगी, आयकर की सीमा बढ़ाकर 30,000 रू. कर देगी। चुंगी और बिक्रीकर को समाप्त कर देगी, देश की अखण्डता और हर नागरिक की सुरक्षा का करेगी। आकाशवाणी और दूरदर्शन को पूर्ण स्वायत्ता देने का भी आश्वासन दिया गया। दल ने नैतिक प्रभुत्व

को बहाल करने, धर्म निरपेक्षता की सकारात्मक विचारधारा को आगे बढ़ाने, व्यापक चुनाव सुधार करने, कृषि और छोटे उद्योगों को उच्च प्राथमिकता देने का भी वायदा किया।[66] भारतीय जनता पार्टी ने 221 स्थानों पर प्रत्याशी खड़े किये और मात्र 2 प्रत्याशी की आठवीं लोकसभा के लिए चुने गये। उसे 7.4 प्रतिशत मत प्राप्त हुये।[67]

12. भारतीय जनता पार्टी का कार्यक्रम :–

सन् 1952 से 1977 तक के चुनावों में 1977 से 1980 तक केन्द्रीय सरकार में भागीदारों के अनुभवों के आधार पर जनसंघ नेतृत्व में निर्मित भारतीय जनता पार्टी को राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की संकीर्णता और समिति सांस्कृति आधार से ऊपर प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया। जनता काल में जनसंघ के बार–बार यह दोहराने के बावजूद कि उसके सदस्य साम्प्रदायिकता से किसी प्रकार जुड़े हुए नहीं हैं और विशेष रूप से आपातकालीन स्थिति के अनुभव के बाद वह लोकतंत्र और ध र्मनिरपेक्षता के प्रति पूरी तरह कटिबद्ध है। जनता पार्टी के कुछ समय अन्य घटकों, विशेष रूप से समाजवादियों ने, उनमें परिवर्तन को स्वीकार नहीं किया। वास्तव में जनसंघ के सदस्यों, विशेष रूप से उसके राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के साथ संबंधों के प्रति जनता पार्टी के अन्य सदस्यों द्वारा सार्वजनिक आलोचना जनता पार्टी के विघटन और असफलता का एक प्रमुख कारण थी। विघटन के बाद भारतीय जनता पार्टी ने धर्मनिरपेक्षता, संस्कृति के स्थान पर आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नों को प्राथमिकता तथा सभी वर्गों और क्षेत्रों के लिए अपनी चिंता को अधिक प्रचारित किया। अपने इस रूप को प्रस्तुत करने के लिए दल ने अपने कार्यक्रम को गाँधीवादी समाजवादी का नाम देकर स्पष्ट करने का प्रयत्न किया।[68]

13. दलों की आन्तरिक गुटबंदी और दल विभाजन :–

भारत की दल प्रणाली की एक प्रमुख विशेषता विभिन्न दलों की आन्तरिक गुटबंदी है। लगभग सभी राजनीतिक दलों में जाति क्षेत्र या अन्य हितों के आधार पर छोटे–छोटे गुट पाये जाते हैं। इनमें एक गुट वह होता है जो सत्ता

में है या प्रभावी है और शेष असंतुष्ट गुट होते हैं। इन गुटों में पारस्परिक मतभेद इस सीमा तक पाया जाता है कि प्रायः चुनाव में अपने ही दल उम्मीदवार को स्वयं उसी दल के दूसरे गुट हराने का भरसक प्रयास करते हैं। प्रत्येक गुट के अलग–अलग नेता होते हैं जिनके नाम से बस गुट बनता है। दल की आन्तरिक गुटबंदी का दुष्प्रभाव स्वयं दल के निकाय, उसकी प्रभावशाली छवि और चुनाव में उसके निष्पादन पर पड़ता है। इस प्रकार की गुटबंदी के कारण, दलों में अनुशासनहीनता तेजी से बढ़ रही है जो राजनीतिक भ्रष्टाचार को बढ़ावा देती है और दल विभाजन तथा दल परिवर्ततन की ओर ले जाती है।

सन् 1977 के बाद दल परिवर्तन ने एक नया रूप धारण किया। अभी तक जो भी दल परिवर्तन हुए थे। वे किसी एक या कुछ विधायकों द्वारा भी किए गए थे लेकिन सन् 1977 और 1980 में सम्पूर्ण सरकार द्वारा दल परिवर्तन की दो घटनाऐं हुई जो अत्यधिक आश्चर्यजनक थी। सन् 1977 में जिस समय केन्द्र में 'जनता पार्टी' ने सरकार का निर्माण किया, सिक्किम सरकार ने अपनी निष्ठा 'जनता पार्टी' के पक्ष में बदलकर स्वयं को जनता सरकार होने की घोषणा कर दी। सन् 1980 में जब फिर केद्र में कांग्रेस (ई) की सरकार आयी तो कांग्रेस दल के प्रति अपनी निष्ठा हस्तान्तरित करने की घोषणा की। इस प्रकार जनता सरकार पुनः कांग्रेस सरकार में बदल गई। यह भी आश्चर्यजनक तथ्य है कि इन दोनों ही अवसरों पर का लेंडूप मुख्यमंत्री पद पर आसीन थे।[69]

14. दल–बदल के कारण :–

अनेक राज्यों में कांग्रेस और विपक्ष के सदस्यों की संख्या इतनी अधिक असंतुलित हो गयी। सत्तारूढ़ कांग्रेस दल में फूट लम्बे समय से चली आ रही थी। फरवरी 1969 के चौथे आम चुनावों के बाद भारतीय राजनीति पर कांग्रेस दल का एकाधिकार समाप्त हो गया तो दल के असंतुष्ट सदस्यों को यह अवसर हाथ लगा कि वे दूसरे दलों से मिलकर मंत्रिपद अथवा अन्य वांछित लाभ प्राप्त करें।

कांग्रेस तथा विपक्ष के सदस्यों की संख्या असंतुलित होने से एक अथवा दो विधायकों को इधर–उधर मिलने मात्र से सरकार का पतन और निर्माण संभव हो गया। ऐसी स्थिति में प्रत्येक विधायक स्वयं मंत्रिमण्डल का सूत्रधार समझने लगा। उसके सामने स्वार्थपूर्ति के रास्ते खुल गये। अपने दल–बदल के लिए विधायक ऊँची से ऊँची 'कीमत' मांगने लगे। इस प्रकार राजनीतिक निष्ठा और सिद्धान्त व्यापार की वस्तु बन गया। जब कभी किसी वरिष्ठ अथवा अन्य सदस्य को चुनाव लड़ने के लिए अपने दल से टिकट न मिला तो उसने दल–बदल का आश्रय लिया। मार्च 1977 के चुनवों में मतदाता ने दल बदलुओं के प्रति अपना आक्रोश प्रकट किया और जनता पार्टी ने भी इस संबंध में कुछ मर्यादाऐं रखी किन्तु व्यक्ति मतभेदों और महत्वकांक्षाओं ने दल बदल का सिलसिला फिर तेज कर दिया। जनता पार्टी भी दल–बदल पर रोक लगाने संबंधी अधिनियम नहीं बना सकी। जनता पार्टी मे भी अनुशासनहीनता एवं दल–बदल का ऐसा अभियान चला कि आखिर जनता पार्टी को सत्ताच्युत होना पड़ा।

दल–बदल के लिए काफी हद तक आपातकाल जिम्मेदार है। आपातकाल के कारण भी जनता पार्टी सत्ता में आयी और बाद में उसका पतन हुआ। आपातकाल में जनता ने इतनी भीषण यातनाऐं सहीं की उनका पार्टी और नेताओं से भरोसा उठ गया।

15. राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन का गठन :–

लगभग 3 वर्ष बाद विभिन्न स्तरों पर विचार विमर्श होने के बाद अन्ततः 8 अगस्त 1983 को भारतीय जनता पार्टी एवं लोकदल ने मिलकर राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन का गठन विपक्षी दलों के संयुक्त मोर्चे बनने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। दोनों दलों का मिलन एक सीमित उद्‌देश्य एवं कार्यक्रम के आधार पर हुआ था। यह दलों का मिलनभर है। विलय नही है। अतः दोनों दलों का पृथ्क अस्तित्व व पहचान यथावत बनी रहेगी। विरोधी दलों के विलय से एकता स्थापित होना संभव नहीं है

अतः दूसरा विकल्प यही रह जाता है कि वे अपने पृथ्क अस्तित्व को बनाए रखते हुए ''संयुक्त मोर्चा' बना कर मैदान में उतरें। अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी को संयुक्त मोर्च के प्रस्ताव पर सहमत होने को राजी कर लिया जो पहले इस प्रस्ताव को मानने की मन स्थिति में नहीं थी। इसके बाद उन्होंने साम्यवादियों और मुस्लिम लीग को छोड़कर अन्य सभी राजनीतिक दलों को इस बारे में लिखा। उन्होंने अपने पक्ष में लिखा ''भारत आज एक बहुआयामी संकट से गुजर रहा है। कानून और व्यवस्था लड़खड़ा रही है। देश में गड़बड़ी है, संस्थान और मूल्य पराभूत होते जा रहे हैं। देश की एकता के लिए खतरा उपस्थित हो रहा है। उन्होंने साझे कार्यक्रम के आधार पर एक मोर्चे गठित करने समेत चुनावी व्यवस्था का सुझाव दिया ताकि लोगों को संकट से आगाह किया जा सके और इस दृष्टि से सत्तारूढ़ दल के दायित्व को उसके दावों के खोखलेपन से उन्हें अवगत कराया जा सके। जगजीवनराम ने इस पत्र की प्राप्ति स्वीकार तक नहीं की जो उन्हें चरण सिंह के कहने पर भेजा गया था। एन.टी. रामाराव ने भी इस पत्र पर मात्र इतना कहने के अलावा और कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं दर्शायी कि वे इस पत्र को अपनी पार्टी तेलगूदेशम के समक्ष पेश करेगें। चन्द्रशेखर ने अस्पष्ट उत्तर भेजते हुए कहा, ''आप मुझसे इस बात पर सहमत होगें कि केवल प्रस्ताव मात्र जे.पी. पर्याप्त नहीं है। सहयोग की भावना उसकी अपेक्षा कहीं अधिक जरूरी है। मुझे आशा है कि हम वातावरण बना सकेगें। श्रीमती मेनका गाँधी ने अपने उत्तर में कहा ''राष्ट्रीय मोर्चे का विचार तो अच्छा है किन्तु चुनावों के अलावा और किस आधार पर यह गठित होगा? और फिर चुनाव हो जाने और जीत जाने के बाद यह मोर्चा एक जुट कैसे रहेगा? विजयवाड़ा का सम्मेलन इस प्रकार मेरा पहला अनुभव था और मैं गलत हो सकती हूँ किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि वहाँ जो भी सुस्थापित दल थे उनमें से कोई भी सामान्य मुद्दों को छोड़कर और किसी बात पर मोर्चे में शामिल होगा। आश्चर्य की बात यह है कि लोकदल की एकमात्र पार्टी सामने आयी जिसने मोर्चे को

स्वीकार कर उस पर अमल किया और इसके लिए भारतीय जनता पार्टी को बधाई दी थी।[70]

भारतीय जनता पार्टी व चरण सिंह के लोकदल के मिलन की बात जनता पार्टी की टूट के संदर्भ में भले ही आश्चर्य लगे, पर राजनीति में अवसर व हालत की बाध्यता ऐसी बनती है जैसी कुछ भी अप्रत्याशित नहीं रहता। दोहरी सदस्यता का नारा लगाकर चरण सिंह ने जनता पार्टी की पहल की थी और अब वे भाजपा के साथ संयुक्त मोर्चे में सबसे पहले आये। चरण सिंह के आने से संयुक्त मोर्चे के विचार को आकार व आधार मिला तथा अन्य दलों की इस दिशा में विचार करने का मार्ग प्रशस्त किया क्योंकि अब पुरानी झिझक व संकोच के ढीले होने की आशा की जा सकती थी। बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि भाजपा व लोकदल की यह मोर्चाबन्दी किस गति व सहमति के साथ आगे बढ़ती है।[71]

गठबंधन में शामिल दोनों पार्टीयाँ की एक समन्वय समिति गठित की गयी जिसके अध्यक्ष चरण सिंह तथा दोनों के संयुक्त संसदीय दल के अध्यक्ष अटल बिहारी वाजपेयी बनाये गये। जिसकी घोषणा 17 अक्टूबर 1983 को की गयी। इस प्रकार दोनों दलों ने संसद और विधानसभाओं में संयुक्त दल एवं एक नेता के नीचे काम करने का निश्चय किया तथा संसद के भीतर और बाहर के कार्यों के संचालन के लिए समन्वय समिति का निर्माण किया। यह गठबंधन यदि प्रमाणिकता से चलता है तो दोनों दलों को लाभ होगा। लोकदल का उत्तर भारत के गाँवों व विशेषतः किसानों में प्रभाव था। वही भाजपा मुख्यतः नगरों और व्यापारी व मध्यम वर्ग की संयुक्त शक्ति बनेगी जो उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश आदि राज्यों में कांग्रेस(ई) के लिए चुनौती बन सकती है। चरण सिंह व लालकृष्ण आडवाणी क्रमशः लोकसभा व राज्यसभा में गठबंधन के होगें।

16. संयुक्त मोर्चा :–

विपक्ष एकता की दृष्टि से भाजपा लोकदल गठबंधन (एन.डी.ए.) के प्रति

जनता पार्टी की पहली प्रतिक्रिया, विक्षोभकारी उसको लेकर जनता पार्टी के अतिरिक्त मतभेद उभरकर आने लगे। जब राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य गौरीशंकर राय ने पार्टी के अध्यक्ष चन्द्रशेखर ने 'लोकतांत्रिक गठबंधन' को कांग्रेस(ई) से अधिक खतरनाक बताये जाने वाले वक्तव्य की आलोचना करते हुए कहा कि उनका वक्तव्य विपक्षी दलों को एक जुट करने में पार्टी के अहमदाबाद प्रस्ताव की भावना के विरूद्ध है। वस्तुतः जनता पार्टी लोकतांत्रकि गठबंधन बन जाने से एक विचित्र दुविधा में आ गयी प्रतीत हुयी। विपक्षी दलों के बीच एकता स्थापित करने के प्रारम्भिक प्रयासों से चन्द्रशेखर सक्रिय थे और चण्डीगढ़ सम्मेलन का आयोजन उन्हीं के प्रयासों का परिणाम था। बस सफल नहीं हुआ। यह दूसरी बात है लेकिन भाजपा लोकदल के गठबंधन ने जनता पार्टी को इस दिशा में पहल का अवसर छीन लिया। चन्द्रशेखर के क्षोभ का कारण शायद यही था, तभी तो उन्होंने इस गठबंधन को विपक्षी एकता में सहायक होने के स्थान पर बाधक बताया इससे जो स्थिति बनी, उसमें जनता पार्टी क्या करे और किसके साथ ऐसा गठबंधन करे, यह प्रश्न टेढ़ा बन गया। अन्ततः चन्द्रशेखर के नेतृत्व में देश की चार बड़ी गैर कम्यूनिष्ठ, विपक्षी पार्टियों द्वारा 4 सितम्बर 1983 को 'संयुक्त मोर्चा' के नाम से एक ओर गठबंधन बना लिया गया।[72]

इस मोर्चे में जनता पार्टी, कांग्रेस(एस), लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी और राष्ट्रीय कांग्रेस शामिल हुयी। मोर्चे का गठन का निर्णय चारों पार्टियों के अध्यक्ष चन्द्रशेखर, शरद पंवार, हेमवतीनन्दन बहुगुणा और रत्तूभाई अड़ानी की बैठक में किया गया। राष्ट्रीय लोकतांत्रिक मोर्चे की भांति इस मोर्चे ने भी संसद व विधानसभाओं के भीतर व बाहर संयुक्त रूप से कार्य करने का निश्चय किया तथा अन्य लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष व प्रगतिशील दलों की एकता का प्रयास करने का संकल्प व्यक्त किया। मोर्चे के सूत्रों ने बताया कि मोर्चा कम्युनिष्ठ पार्टियों से किसी भी संभावित तालमेल के लिए भी दरवाजे खुले रखेगा और साथ ही क्षेत्रीय पार्टियों से भी सम्पर्क बनाये रखेगा। मोर्चे की भागीदार पार्टियों ने आर्थिक कार्यक्रम संयुक्त

मोर्चे के सचिव भूतपूर्व केन्द्रीय मंत्री व रूस में रहे भारत के राजदूत इन्द्रकुमार गुजराल बनाये गये। इस संयुक्त मोर्चो में एक ओर दल – चन्द्रजीत यादव वाली 'जनवादी पार्टी' तथा भूतपूर्वक केन्द्रीय मंत्री मीर कासीम सितम्बर 1983 में कांग्रेस से त्याग पत्र देकर भी शामिल हो गया। इसी प्रकार 16 अक्टूबर 1983 को तमिलनाडू की गाँधी कामराज राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी जनता पार्टी में विलीन हो गयी। यह भी संयुक्त मोर्चो का स्वतः ही अंग बन गयी। नवम्बर 1983 में रिपब्लिक पार्टी (खोपरगड़े गुट) के शामिल हो जाने से मोर्चे में शामिल दलों की संख्या 6 हो गयी। बहुगुणा को ''मोर्चो'' के संसदीय दल (समोसद) का अध्यक्ष बनाया गया तथा मधु दण्डवते लोकसभा में व ए.जी. कुलकर्णी राज्यसभा में 'समोसद' के नेता रहेगें।

इस संयुक्त मोर्चो के गठन से विपक्षी राजनीति की वास्तविकता पुनः पुष्ट हो जाती है कि दल व नेता अपनी पृथ्क पहचान त्यागने और एक राष्ट्रीय मोर्चे में शामिल होने की तैयार नहीं हैं। जनता पार्टी के अध्यक्ष चन्द्रशेखर प्रारम्भ में सन् 1977 की 'जनता भावना' के नाम पर जनता पार्टी में दलों के विलय के प्रबल पक्षधर थे और अन्त तक वे प्रयासरत थे। पर हार मानकर उन्हें मोर्चे के विचार को स्वीकार करना पड़ा। भाजपा और लोकदल के गठबंधन ने जनता पार्टी व अन्य दलों को इस दिशा में प्रेरित किया।

प्रगतिशील दलों की एकता स्थापित करने के प्रयास का संयुक्त मोर्चो का संकेत कम्युनिष्ठ व अन्य वामपक्षीय दलों की ओर तथा क्षेत्रीय पार्टीयों में तेलगूदेशम व नेशनल कांफ्रेस आदि की ओर है। विपक्षी दलों के एक से अधिक मोर्चो का गठन विपक्षी राजनीति की यथार्थता और विवशता है और इस प्रक्रिया से विपक्षी राजनीति को कितना बल मिलता है। यह आगे की बात है, पर गठबंधन व 'मोर्चा' बनने से विपक्षी दलों के बिखराव व टूट के स्थान पर संयुक्त होने की प्रक्रिया व अवसर अवश्य बने हैं।

17. बैठक एवं विपक्ष एकता :—

भारतीय जनता पार्टी एवं लोकदल के राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन की समन्वय समिति ने आयोजित विपक्षी दलों की बैठक (अक्टूबर 5 से 7, 1983) में भाग लेने के देर से प्राप्त निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया। 'गठबंधन' को पहले निमंत्रण नहीं दिया गया और आन्ध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री रामाराव के जोर देने पर बाद में दिया गया। निमंत्रण अस्वीकार करने के कारणों का विवरण बैठक में संयोजक डॉ. फारूक अब्दुल्ला को चरण सिंह व अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा लिखे पत्रों में दिया गया लेकिन जिस ढंग से निमंत्रण दिया, वह भी उसकी अस्वीकृति का एक कारण बताया गया।[73]

इस प्रकार विजयवाड़ा बैठक में जो सभा बनी थी, वह आगे नहीं रही, दिल्ली बैठक में टूट सामने आ गयी थी और श्रीनगर में आगे बढ़ी। दिल्ली बैठक के बाद विपक्षी दलों के दो मोर्चे बने और इस प्रकार विजयवाड़ा में सभी विपक्षी दलों का एक संयुक्त मोर्चा बनने की प्रक्रिया टूट गयी तथा विपक्षीदलों के बीच आपसी मतभेद, ठहराव एवं विरोधाभाव तीव्रता के साथ उभरे और परिभाषित हुये।[74]

जनता पार्टी के अध्यक्ष चन्द्रशेखर ने भाजपा व लोकदल के गठबंधन को कांग्रेस(ई) से अधिक खतरनाक कह दिया। (यद्यपि काफी समय बाद उन्होंने इस कथन का खण्डन कर दिया) संयुक्त मोर्चे में शामिल बहुगुणा ने भाजपा को श्रीनगर की बैठक में आमंत्रित न करने का अभियान जारी रखा। कम्यूनिष्ठ ने भी 'गठबंधन' से कोई सरोकार न करने की घोषणा कर दी और श्रीनगर बैठक के संयोजक कश्मीर के मुख्यमंत्री डॉ. फारूख अब्दुल्ला भी इसी विचार कर रहे और कांग्रेस(ई) छोड़कर बाहर आये। मीर कासिम ने भी इस नीति का खुला समर्थन किया लेकिन दिल्ली की बैठक को बचाने में जिस प्रकार रामाराव अन्तिम क्षण आगे आये। इस बार भी उन्हीं के कारण अन्ततः डॉ. अब्दुल्ला ने भाजपा और लोकदल को निमंत्रण भेजा। इस परिप्रेक्ष्य में दिया गया निमंत्रण अस्वीकृत होगा। ऐसी आशंका बन गयी थी।

निमंत्रण की विधि व पृष्ठभूमि के अतिरिक्त श्रीनगर बैठक में मुख्य विचारणीय केन्द्र राज्य सम्बन्ध रखा इस विपक्ष को लेकर विपक्षी दलों में मतभेद रखा है और है जैसे क्षेत्रीय दल राज्यों के के लिए अधिकाधिक स्वायत्ता की मांग करते रहे हैं। भाजपा व लोकदल केन्द्र व राज्य दोनों के बीच सत्ताधिकार के संतुलन एवं मजबूत केन्द्र के पक्षधर रहे हैं। अनुच्छेद 370 के अन्तर्गत कश्मीर की विशेष संवैधानिक हैसियत का भी भाजपा विरोध करती आयी है तथा 'कश्मीर' पुर्नवास विधेयक के लोकदल व भाजपा दोनों ही विरोधी हैं। श्रीनगर की बैठक में अकाली दल व मुस्लिम लीग भी शामिल थी। पंजाब के अकाली आंदोलन और आनन्दपुर साहिब प्रस्ताव की मांग तथा पंजाब में हिंसा व आतंक के वातावरण को लेकर लोकतांत्रिक गठबंधन की नीति अकाली दल के विरूद्ध हैं जिसकी घोषणा चरण सिंह व वाजपेयी सभाओं में भी कर चुके हैं।[75] भाजपा को साम्प्रदायिक बताकर बैठक में बाहर रखे जाने की बात की जाती है पर अकाली दल व मुस्लिम लीग जैसे प्रमाणित साम्प्रदायिक दलों को उत्साह व आग्रह के साथ बुलाया जाता है। इस प्रकार विजयवाड़ा की बैठक में विपक्षी दलों की जनता और श्रीनगर की बैठकों व उनके बाद पिछड़ गयी प्रतीत होती है।

इसके अतिरिक्त चरण सिंह व वाजपेयी ने डॉ. फारूख को अपने पत्रों में लिखा कि ''अगर विचारों पर सहमति के आधार पर दलों की बैठक में बुलाने का निर्णय लिया जाता है तो विपक्षी दलों की बैठक के विचार को समाप्त करना भी अच्छा होगा। तर्कसंगत कहा जा सकता है क्योंकि इस समय विपक्षी राजनीति के समक्ष मुख्य विचारणीय विषय 'विवादाग्रस्त' मुद्दों का विचार करना नहीं होकर आगामी चुनावों को दृष्टिगत रखने हुए चुनाव रणनीति तय करना तथा संगठित विरोध व वैकल्पिक शक्ति का संयोजन करना है और इसी का सामयिक महत्व है।

18. विपक्ष एकता, चुनाव रणनीति और सत्तारूढ़ दल को चुनौती :–

इसी प्रकार विपक्षी दलों व नेताओं के विजयवाड़ा सम्मलेन से जो सागर

मंथर शुरू हुआ उससे विपक्षी दलों के दो मोर्चे उपजे हैं। राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन और संयुक्त मोर्चा साम्यवादी पार्टियों व अन्य वामपक्षीय दलों का वाम मोर्चा पहले से स्थापित है जो पश्चिम बंगाल व केरल में सफलतापूर्वक कार्यरत हैं। इस प्रकार अब विपक्षी दलों के तीन संयुक्त मोर्चे और कांग्रेस(ई) सहित भारतीय दलीय राजनीति के चार विभिन्न समूह बन गये हैं।

विपक्षी दलों की इस नयी हलचल एवं गठबंधन व मोर्चाबन्दी की प्रक्रिया होने का मुख्य कारण कांग्रेस(ई) की आन्तरिक हलचलों व सक्रियता के सन्दर्भ में लोकसभा के आगामी चुनाव थे।[76]

19. आपातकाल के बाद कांग्रेस में विभाजन व उनसे निकले राजनीतिक दल :–

1– सन् 1977 के जगजीवन राम द्वारा कांग्रेस से अलग होकर कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी का निर्माण जिसका बाद में जनता पार्टी में विलय।

2– सन् 1978 में आठ विधानसभाओं के चुनावों में कांग्रेस की पराजय के कारण कांग्रेस में असंतोष तथा विभाजन कांग्रेस रेड्डी (ब्रह्मानन्द रेड्डी) तथा कांग्रेस का निर्माण किया।

3– सन् 1995 में अर्जुन सिंह व नारायण दत्त तिवारी को कांग्रेस से निष्कासित किया गया तो उन्होंने कांग्रेस तिवारी नाम से नये दल का गठन किया।

4– सन् 1999 में शरद पंवार, तारिक अनवर तथा पी.ए. संगमा ने कांग्रेस से निष्काशित किये जाने के पश्चात राष्ट्रवादी कांग्रेस का गठन किया।

सन्दर्भ –

1– भाम्यरी, सी.पी. 'जनता पार्टी एण्ड प्रोफाइल (नेशनल दिल्ली)' 1980, पृष्ठ संख्या–16

2. दि इण्डियन एक्सप्रेस, नई दिल्ली, फरवरी 11, 1997, पृष्ठ संख्या–6 एवं 7

3. दिनमान, फरवरी 20–26, 1977 (टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली) पृष्ठ संख्या–11

4. दि इण्डियन एक्सप्रेस, नई दिल्ली, फरवरी 11, 1977, पृष्ठ संख्या–1

5. तत्रैव, पृष्ठ संख्या–6

6. दिनमान, तत्रैव, पृष्ठ संख्या– 11 एवं 12

7. दि इण्डियन एक्सप्रेस, उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या–7

8. शकधर, एस.एल., 'सिक्सथ् जनरल इलेक्शन टू लोकसभा (एडीटेड)' 1977 (लोकसभा सचिवालय प्रकाशन, नई दिल्ली), पृष्ठ संख्या–44

9. तत्रैव, पृष्ठ संख्या–46–8

10. दिनमान, फरवरी, 13–19, 1977 (टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली), पृष्ठ संख्या–18–9

11. तत्रैव, पृष्ठ संख्या–8–9

12. शकधर, एस.एल., तत्रैव, पृष्ठ संख्या–49–55

13. तत्रैव, पृष्ठ, 71–73 एवं दिनमान, फरवरी 20–26, 1977 (टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली) पृष्ठ संख्या–12–3

14. दिनमान, फरवरी 13–19, 1977 (टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली), पृष्ठ संख्या–20

15. शकधर, एस.एल; तत्रैव पृष्ठ संख्या–12–13

16. नायर, कुलदीप, 'दि जजमेन्टः इन साइड स्टोरी ऑफ दि इमरजेन्सी इन इण्डिया' (विकास पब्लिशिंग हाउस, 1977) पृष्ठ संख्या–171

17. अय्यर, एस.पी., राजू, एस.पी., 'वैन दी विण्ड ब्लौज; इण्डियाज् बैलट बॉक्स रिवोल्यूशन' (हिमाचल पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1978) पृष्ठ संख्या–237–8

18. ब्राइट, जे.एस; 'इलाहाबाद हाईकोर्ट टू शाह कमीशन', (दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स; नई दिल्ली, 1977) पृष्ठ संख्या–59

19. शकधर, एस.एल; तत्रैव।

20. दिनमान; जनवरी 20, फरवरी 5, 1977 (टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली) पृष्ठ संख्या–16

21. तत्रैव, पृष्ठ संख्या–24–5

22. अय्यर, एस.पी., राजू, एस.पी., 'वैन दी विण्ड ब्लोज, इण्डियाज बैलट बॉक्स रिवोल्यूशन' (हिमाचल पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1977) पृष्ठ संख्या–260

23. दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, मार्च 7, 1977

24. अय्यर, एस.पी., राजू, एस.पी., तत्रैव, पृष्ठ संख्या–287

25. दिनमान, मार्च 13–19, 1977 (टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली) पृष्ठ संख्या–16

26. स्टेट्समैन, नई दिल्ली, मार्च 17, 1977

27. अय्यर एस.पी., राजू एस.पी.; 'वैन दी विण्ड ब्लौज; इण्डियाज् बैलट बॉक्स रिवोल्यूशन' (हिमालय पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1978) पृष्ठ संख्या–356

28. ब्राइट, जे.एस.; 'इलाहाबाद हाईकोर्ट टू शाह कमीशन' (दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1979) पृष्ठ संख्या–62

29. नायर, कुलदीप; तत्रैव, पृष्ठ संख्या–174

30. तत्रैव, पृष्ठ संख्या–163

31. तत्रैव।

32. अय्यर, एस.पी., राजू, एस.पी.; तत्रैव, पृष्ठ संख्या–391

33. शकधर, एस.एल.; 'सिक्सथ जनरल इलेक्शन टू लोकसभा (एडीटेड)' (लोकसभा सचिवालय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977) पृष्ठ संख्या–18

34. अय्यर, एस पी; राजू, एस.पी; उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या–401

35. नायर, कुलदीप, 'दि जजमेन्ट; इन साइड स्टोरी ऑफ दि इमरजेन्सी इन इण्डिया' (विकास पब्लिशिंग हाउस, 1977) पृष्ठ संख्या–179

36. शकधर, एस.एल., 'सिक्सथ जनरल इलेक्शन टू लोकसभा (एडीटेड)' (लोकसभा सचिवालय का प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977) पृष्ठ संख्या–113–4

37. ब्राइट, जे.एस. 'इलाहाबाद हाईकोर्ट टू शाह कमीशन;' (दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1979) पृष्ठ संख्या–71

38. कंवरलाल; इलेक्शसं एक्स्ट्राऑर्डिनेरी (जीत पब्लिकेशन्स्, नई दिल्ली, 1977) पृष्ठ संख्या–284

39. दि इण्डियन एक्सप्रेस, नई दिल्ली, अप्रैल 5, 1977, पृष्ठ संख्या–7

40. दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, मार्च 4, 1977

41. वर्मा, गोविन्दराम, 'जनता पार्टी का उदय और भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' (अजय बन्धु किला, भरतपुर, 1977) पृष्ठ संख्या–9

42. दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, मई 6, 1977, पृष्ठ संख्या–1

43. दि इण्डियन एक्सप्रेस, नई दिल्ली, मई 6, 1977, पृष्ठ संख्या–1

44. दि इण्डियन इण्डिया, नई दिल्ली, अप्रैल 28, 1977 पृष्ठ संख्या–6

45. तत्रैव

46. नाईक, जे.ए; तत्रैव, पृष्ठ संख्या–52

47– मल्होत्रा इन्दर क्वेस्ट फॉर कांग्रेस यूनिटी : सदन रिवाइवल ऑफ होप्स टाइम्स ऑफ इण्डिया मार्च 1979

48– तत्रैव पृष्ठ संख्या–127

49– तत्रैव पृष्ठ संख्या–128

50– गुप्ता, अनिरूद्ध 'रिवोल्यूशन थ्रू बैलट : इण्डिया', जनवरी मार्च अंकुर पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली 1977

51– नायर, कुलदीप ''द जजमेन्ट : इन साइड स्टोर ऑफ इमरजेंसी इन इण्डिया'' पब्लिशिंग हाउस, 1977 पृष्ठ संख्या–155

52– द इण्डियन एक्सप्रेस, नई दिल्ली, फरवरी–2 सन् 1977 पृष्ठ संख्या 6–7

53– नाइक, जे.ए. 'द ग्रेट जनता रिवोल्यूशन, एस चंद एण्ड कम्पनी', नई दिल्ली, 1977 पृष्ठ संख्या–4–5

54– जैन, एस.एस.'भारतीय संविधान और राजनीति', हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1984 पृष्ठ संख्या–134

55– तत्रैव पृष्ठ संख्या–155

56– तत्रैव पृष्ठ संख्या–156

57– तत्रैव पृष्ठ संख्या–105

58– तत्रैव पृष्ठ संख्या–107

59– सम्पादकीय ''द कर्नाटक कांग्रेस : हिन्दुस्तान टाइम्स'' जून 26, 1979

60– जैन, गिरी लाल ''बोम्बे कन्वेशन एड आफ्टर : प्रोबेलम्स इन रियूनाइटिंग कांग्रेस पार्टीज : टाइम्स ऑफ इण्डिया, जनवरी 1979

61– रॉय, एम.पी. 'भारतीय सरकार एवं राजनीति' कॉलेज बुक डिपो, 1980 पृष्ठ संख्या–702

62– दि हिन्दुस्तान, 03 नवम्बर 1979, पृष्ठ संख्या–1

63– दि हिन्दुस्तान, 06 नवम्बर 1979, पृष्ठ संख्या–1 एवं 6

64– राजस्थान पत्रिका, 04 नवम्बर 1983

65– फडिया, बी.एल. ''भारतीय शासन एवं राजनीति'' साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2012, पृष्ठ संख्या–419

66– नवभारत टाइम्स 07 दिसम्बर 1984

67– राजस्थान पत्रिका 04 फरवरी 1985

68– कौशिक, सुशीला ''भारतीय शासन एवं राजनीति'' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1988 पृष्ठ संख्या–414

69– सईद एस.एम. भारतीय राजनीतिक व्यवस्था 2009, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ पृष्ठ संख्या–303

70–जैन एस.एन. 'भारतीय संविधान और राजनीति' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1984, पृष्ठ संख्या–234

71–Their Alliance (The LD BJP Alliance) will not only be the first said cluster to emerge but may trigger the formation of other cluster as well ths alliance is different from all the alliance in at least three ways (first well structured step more ideologically conerent than any other and has been able to sortout the problem and leadership) J.B. Sethi - Ibid

72— इण्डियन एक्सप्रेस, 7 सितम्बर 1980

73— जैन, एस.एन. 'भारतीय संविधान और राजनीति' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1984, पृष्ठ संख्या—238

74— At corss purposes (editorial) The Indian Express Oct 4, 1983

75— दि इण्डियन एक्सप्रेस, 07 अक्टूबर 1983

76. The Game Plan (editorial) the industrated weekly of India 9, 1983

- M.V. Kamath "Legitimising Sycophancy" Express Magzine Nov. 13, 1983

- Prabhu Chawla "Return of the prodigals" India Today, Nov. 30 1983

अध्याय षष्ठ

कांग्रेसवाद और गैर कांग्रेसवाद की अवधारणा की विवेचना तथा आपातकाल के बाद राजनीतिक चेतना पर सर्वेक्षण ।

अध्याय–षष्ठ

कांग्रेसवाद और गैर–कांग्रेसवाद की अवधारणा की विवेचना तथा आपातकाल के बाद राजनीतिक चेतना पर सर्वेक्षण

सन् 1885 में जिस राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। वह दिसम्बर 1969 में विभाजन से पूर्व तक भारतीय राजनीतिक रंगमंच पर सबसे बड़ी शक्ति के रूप में कार्य करती रही पर कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं और आन्तरिक गुटों में मतभेद भी बढ़ते रहे और दिसम्बर 1969 में वह दो धड़ों में विभाजित हो गई। संगठन कांग्रेस तथा सत्ता कांग्रेस या इन्दिरा कांग्रेस। इन्दिरा कांग्रेस ने तेजी से लोकप्रियता हासिल की और 1971 के मध्यावधि चुनावों में तो उसने लोकसभा की 518 में से 350 सीटें जीतकर अपना प्रचण्ड बहुमत स्थापित कर लिया। पिछले चुनावों में स्थिति इस प्रकार रही। सन 1952 में 489 में से 157 सीटें, सन 1957 में 494 में से 371 सीटें, सन 1962 में 494 में से 361 सीटें, सन 1967 में 523 में से 283 सीटें और वोट प्रतिशत इस प्रकार रहा। सन 1952 में 45 प्रतिशत, सन 1957 में 43.48 प्रतिशत, सन 1962 में 43.61 प्रतिशत, सन 1967 में 40.73 प्रतिशत, सन 1971 में 40.64 प्रतिशत।

25 जून 1975 के आपात उद्घोषणा और फिर प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के 20 सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम के विन्यास के बाद तेजी से निरंकुशता के मार्ग पर बढ़ता गया। लोकसभा के चुनाव जो मार्च 1976 में होने थे एक वर्ष के लिए आगे सरका दिये। सन 1977 में इंदिरा गाँधी ने एकाएक ही लोकसभायी चुनाव कराने की घोषणा कर दी। इंदिरा गाँधी को यह विश्वास था कि विरोधी दल इतने कुचले जा चुके हैं और जनता भी इतनी भयाक्रान्त है कि कांग्रेस की एकाधिकारी स्थिति पर कोई आँच नहीं आयेगी।[1]

1. एकदलीय प्रभुत्व व्यवस्था का प्रभाव :–

बहुदलीय व्यवस्था के बावजूद भारत में चौथे आम चुनाव के बाद कुछ

समय को छोड़कर कांग्रेस एकदलीय प्रभुत्व व्याप्त रहा जिसकी समाप्ति मार्च 1977 के ऐतिहासिक आम चुनावों में हुई। इन चुनावों से पूर्व केन्द्र में तो कांग्रेस दल निरन्तर सत्तारूढ़ रहा। राज्यों में कभी–कभी गैर कांग्रेसी सरकारें बनी और संविद सरकारों का भी बोलबाला रहा। सन 1967 के चुनावों के पूर्व राज्य राजनीति का एक स्तम्भ रहा। दूसरा स्वरूप 1967 के चुनावों के उपरान्त उभरा और तब मार्च 1971 के मध्यावधि लोकसभायी चुनावों में तीसरा नया नक्शा प्रस्तुत किया। 1967 के चौथे आम चुनावों से पूर्व केन्द्र और राज्यों में कांग्रेस का प्रचण्ड बहुमत रहा[2] और नेहरू सर्वमान्य नेतृत्व देश पर छाया रहा। उस समय राज्य सरकारों की स्थिति, केन्द्र की तुलना में कमजोर और नगण्य सी रही। लालबहादुर शास्त्री और तत्पश्चात इन्दिरा गाँधी के प्रधानमंत्रित्व के प्रारम्भिक वर्षों में केन्द्र उतना सबल नहीं रहा सका। राज्य उभरे, मुख्यमंत्री अधिक महत्वपूर्ण हो गए। सन 1967 के आम चुनाव, कांग्रेस के भीतर चल रहे सत्ता संघर्ष के कारण, कांग्रेस के लिए दुःखदायी रहे। केन्द्र में सत्तारूढ़ कांग्रेस की शक्ति दुर्बल हो गई और बहुत से राज्यों में उसकी कुर्सी छिन गयी। राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारों ने अनेक मसलों पर केन्द्र के साथ सहयोग करने से इन्कार कर दिया। मार्च 1971 के मध्यावधि चुनावों ने फिर पासा पलट दिया। केन्द्र में कांग्रेस को प्रबल बहुमत मिला और इंदिरा गाँधी सर्वमान्य नेता के रूप में उभरी। तत्पश्चात् राज्यों में चुनाव हुए और गैर कांग्रेसी सरकारें धराशायी हो गयी। संयुक्त सरकारों को जनता ने ठुकरा दिया। शक्ति के मद में आकर कांग्रेस दल लोकतांत्रिक आचरण से दूर होता गया। 25 जून 1975 में आपातकाल की आड़ में भारत की जनता पर तानाशाही थोप दी गई और मार्च 1977 के चुनावों ने इस तानाशाही को समाप्त कर जनता पार्टी को सत्तारूढ़ कर दिया।[3]

2. संयुक्त मोर्चा :–

संयुक्त मोर्चा गठित किया गया ये दल हैं :– जनता दल, मार्क्सवादी दल, भारतीय साम्यवादी दल, द्रविड़ मुनेत्र कड़गम, तमिल मनीला कांग्रेस, तेलगूदेशम, असम गण परिषद, कांग्रेस (तिवारी), फॉरवर्ड ब्लॉक, आर.एस.पी., एम.पी.वी.सी., के.

सी.पी., स.पा. आदि।

न्यूनतम सांझा कार्यक्रम तैयार किया गया। सभी राजनीतिक दलों ने अपनी–अपनी अतिवादी नीतियों को कुछ समय के लिए छोड़ने का वायदा किया। एच.डी. देवगोड़ा को प्रधानमंत्री बनाया गया। ये सहमति तथा समझौते के प्रधानमंत्री बने। कांग्रेस के बाह्य समर्थन से यह सरकार चली पर 30 मार्च 1997 को कांग्रेस अध्यक्ष सीताराम केसरी ने संयुक्त मोर्चा सरकार से समर्थन वापिस ले लिया। ये नौ महीने पुरानी संयुक्त मोर्चा सरकार के लिए मौत का परवाना था।[4] कांग्रेस देवगौड़ा को हटाना चाहती थी। अन्ततः इन्द्र कुमार गुजराल के नाम पर सहमति हो गई यद्यपि इससे तमिल कांग्रेस तथा समाजवादी पार्टी के मन में जबरदस्ती नाराजगी उपजी। बहरहाल इन्द्रकुमार गुजराल ने कांटो भरा ताज पहना। प्रश्न उठा कि संयुक्त मोर्चे के बाद कलहप्रिय और अति महत्वाकांक्षी नेताओं की अवसरवादी जमात क्या 'भलेमानस' की छवि वाले इस नेता को कुछ दिखाने का अवसर देगी।[5]

ग्यारहवीं लोकसभा भंग हो गई। नये चुनाव के पश्चात 12वीं लोकसभा में भारतीय जनता पार्टी ने सहयोगी दलों के साथ सत्ता की बागड़ोर संभाली। यह सरकार भी 17 अप्रेल 1990 को सत्ता से हट गई। 13वीं लोकसभा में भी राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के रूप में कई दलों के मिले जुले गठबंधन ने भी सत्ता संभाली। इस गठबंधन में सर्वाधिक भारतीय जनता पार्टी के थे।

3. राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन <u>(N.D.A.)</u> :–

11वीं तथा 12वीं लोकसभा के चुनावों में किसी भी राजनीतिक दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं हुआ और सरकारों का जल्दी–जल्दी पतन होने लगा तो ऐसी स्थिति में 13वीं लोकसभा चुनाव के पूर्व भी 1999 में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन का गठन किया गया। गठबंधन ने अटल बिहारी वाजपेयी को अपना नेता घोषित किया। भाजपा सहित गठबंधन के भागीदार दलों ने अपने अलग घोषणा पत्र जारी करने के बजाय 'राजग' के घोषणा–पत्र के आधार पर 13वीं लोकसभा का चुनाव लड़ा। घोषणा पत्र में भूख, भय और भ्रष्टाचार से मुक्त

सुदृढ़ भारत बनाने का संकल्प लिया गया। घोषणा–पत्र में राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय पुनर्निमाण, गतिशील कूटनीति, संकीय समरसता, आर्थिक आधुनिकीकरण, सेक्यूलरवाद, सामाजिक न्याय और शुचिता इन आठ बिन्दुओं पर विशेष जोर दिया गया तथा कहा गया कि अगली सदी में बाँटने वाली बातों को त्यागकर आपसी विश्वास की भावनाओं और बातों पर बल दिया जायेगा। चुनाव के बाद वाजपेयी के नेतृत्व में राजग सरकार का गठन हुआ तथा इस सरकार ने राजनीतिक स्थायित्व के साथ आर्थिक विकास की दिशा में कुछ कदम आगे बढ़ाये लेकिन 6 फरवरी 2004 को 13वीं लोकसभा समय से पूर्व भंग करके 14वीं लोकसभा के चुनाव की घोषणा कर दी।[6]

14वीं लोकसभा (2004) में इसने 'फीलगुड' और 'इण्डिया शाइनिंग' के नारों के साथ चुनाव लड़ा लेकिन अन्ततः पराजय का सामना करना पड़ा और विपक्ष में बैठना पड़ा। इसी प्रकार 15वीं लोकसभा (2009) में भी इस गठबंधन को बहुमत प्राप्त नहीं हुआ और पहले से अधिक स्थिति खराब हो गई और इसके सहयोगी दल टूट–टूटकर अलग होने लगे।

4. संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (U.P.A.) :–

यू.पी.ए. का पूरा नाम 'यूनाइटेड प्रोग्रेसिव एलाइन्स' है। 14वीं लोकसभा में किसी भी राजनीतिक दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं हुआ तो ऐसी परिस्थिति में कांग्रेस पार्टी के नेतृत्व में 14 दलों का संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन बनाया गया जिसकी अध्यक्षा सोनिया गाँधी को चुना गया। गठबंधन की सरकार बनी जो फिर से 15वीं लोकसभा में चुनकर आयी थी। गठबधंन के इकाई दलों को दो भागों में 1. सरकार में शामिल दल 2. बाहर से समर्थन देने वाले दलों में बाँटा गया है जिसमें विभिन्न घटक दलों का चुनाव घोषणा–पत्रों को आधार बनाया गया। साझा न्यूनतम कार्यक्रम की घोषणा 'संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन' से सभी राजनीतिक दलों के नेताओं की बैठक में व्यापक विचार विमर्श के बाद 27 मई 2004 को की गयी थी। साझा कार्यक्रम के 6 बुनियादी सिद्धान्त इस प्रकार बताए गए :– सामाजिक सदभाव, रोजगार, किसानों की भलाई, महिला सशक्तिकरण, सबको समान अवसर और

प्रतिभा को प्रोत्साहन। वस्तुतः लोकतंत्र की आत्मा व प्राण, राजनीतिक दल में लोकतांत्रिक पद्धति का अभाव देखा गया । राजनीतिक दल व्यक्ति विशेष के ईद गिर्द घूमते रहते हैं। दल महत्वपूर्ण नहीं होता। व्यक्ति महत्वपूर्ण होता है। दल के संगठन के चुनाव लम्बे समय तक नहीं होते। वर्षों बाद कांग्रेस संगठन के चुनाव 1992 में हुए दल न केवल अलोकतांत्रिक पद्धति से कार्य करते हैं अपितु सर्वाधिकार की पद्धति भी पाई जाती है।[7]

राजनीतिक दलों में लगातार खण्डित तथा विखण्डित होने की प्रवृति रही है। कोई भी राजनीतिक दल इससे अछूता नहीं है। व्यक्ति विशेष की भावनाओं के आधार पर दल बन जाते हैं। कोई भी महत्वपूर्ण राजनेता ऐसा नहीं है जो दल बदलता न रहा हो। मतदाता का नेताओं पर से विश्वास उठने लगा है। अनुशासनबद्ध समझे जाने वाले साम्यवादी दल तथा भाजपा भी इसका अपवाद नहीं है। वस्तुतः दल–बल कानून को सरल बनाना आवश्यक है। यदि कोई दल बदलना चाहता है तो उसे सीधे जनता से अधिकार प्राप्त करना चाहिए।[8]

5. सन 1977 का मध्यावधि चुनाव और जनता सरकार की स्थापनाः–

प्रधानमंत्री– मोरारजी देसाई (जनता दल)

(कार्यकाल– 21 मार्च 1977 से 28 जुलाई 1979)

सन 1977 का लोकसभा का चुनाव अत्यधिक असाधारण परिस्थितियों में कराया गया और उसके परिणाम भी असाधारण महत्व के निकले। यह चुनाव देश में उद्घोषित आपात स्थिति के दौरान कराए गए। परिणामों की दृष्टि से इतना अधिक अनिश्चित चुनाव इससे पहले कोई भी नहीं हुआ था। सन 1977 में जिस राजनीतिक वातावरण में लोकसभा के चुनाव कराए गए, उस वातावरण का प्रारम्भ 1974 में जय प्रकाश नारायण द्वारा चलाये गये आन्दोलन से हुआ और इसीलिए 1974 को 'जयप्रकाश नारायण वर्ष' कहा गया है। जय प्रकाश नारायण द्वारा बिहार में जो आन्दोलन चलाया गया, वह मुख्य रूप से देश में व्याप्त भ्रष्टाचार और बढ़ती हुई मँहगाई के खिलाफ था।

जयप्रकाश नारायण ने 'सम्पूर्ण क्रांति' का नारा दिया और कर न देने, जिला अधिकारियों का घेराव करने तथा विद्यार्थियों से एक वर्ष के लिए स्कूल कॉलेजों को छोड़कर इस आन्दोलन में भाग लेने की अपील की। उन्होंने सेना से भी यह अपील की कि वह सरकार के ऐसे आदेशों का पालन नहीं करे जो अनुचित तथा अवैधानिक हो। 14 अक्टूबर, 1974 को जयप्रकाश नारायण ने यह घोषणा की कि जल्द ही प्रशासकीय स्तरों पर समानान्तर सरकारों की स्थापना की जाएगी। 14 नवम्बर को जयप्रकाश नारायण ने पटना में एक रैली का नेतृत्व किया जिस पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया और जय प्रकाश नारायण को भी चोटें आईं। भ्रष्टाचार के विरूद्ध आरम्भ किए गए इस आन्दोलन ने क्रांति का रूप धाारण कर लिया और बिहार में लूटमार और उपद्रव का वातावरण उत्पन्न हो गया। इंदिरा सरकार की ओर से जयप्रकाश नारायण आन्दोलन की घोर आलोचना की गई और यह प्रचार किया गया कि इस आन्दोलन के पीछे फासिस्टवादी शक्तियाँ हैं जो जनतंत्र का अन्त कर देना चाहती हैं।

जून 1975 में भारतीय राजनीति ने एक नया मोड़ लिया, जब इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इन्दिरा गाँधी के लोकसभा चुनाव को अवैध घोषित करते हुए

उन्हें 6 वर्षों के लिए किसी भी चुनाव से अनर्ह घोषित किया। इस निर्णय के पश्चात विपक्षी दलों ने इंदिरा गाँधी से त्यागपत्र देने की मांग की और यह धमकी दी कि 29 जून से राष्ट्रीय स्तर पर आन्दोलन चलाएँगें। इसी बीच इंदिरा गाँधी ने सर्वोच्च न्यायालय से उक्त निर्णय के विरूद्ध एक स्थगन आदेश प्राप्त कर लिया। ऐसा कहा जाता है कि स्वयं कांग्रेस दल में भी कुछ वरिष्ठ नेता इस पक्ष में थे कि इंदिरा गाँधी को त्यागपत्र देना चाहिए। इन राजनीतिक परिस्थितियों में 25 जून 1975 की रात्रि में देश में आंतरिक आपात स्थिति की घोषणा पर राष्ट्रपति ने हस्ताक्षर कर दियें और 26 जून को प्रातः देश में आंतरिक संकट की घोषणा कर दी गयी। इसके तुरंत बाद जयप्रकाश नारायण सहित विपक्ष के सभी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। आपात स्थिति की उद्घोषणा के साथ ही पूरे देश में बड़े स्तर पर उन लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया, जो इंदिरा कांग्रेस के विरोधी अथवा आलोचक थे। प्रेस पर पूर्ण सेंसर लगा दिया गया। नागरिक स्वतंत्रताओं को स्थगित कर दिया गया। इंदिरा गाँधी ने दमन की राजनीति द्वारा देश में व्याप्त राजनीतिक असंतोष सामयिक रूप से कुचल तो दिया लेकिन आंतरिक रूप से जन साधारण में कांग्रेस सरकार के विरूद्ध घृणा बढ़ती रही। फरवरी 1976 में लोकसभा ने अपना कार्यकाल मार्च 1977 तक बढ़ाने का प्रस्ताव पारित किया। तमिलनाडु, गुजरात और उड़ीसा की संवैधानिक सरकारों को स्थगित अथवा भंग कर राष्ट्रपति शासन लागू किया गया।

समस्त विपक्ष के नेताओं के जेल में बंद किये जाने और 'मीसा' तथा 'डी.आई.आर' का अधिकतम प्रयोग करके इंदिरा गाँधी ने अपना पूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर लिया और पूरा देश स्वतंत्रता के बजाय भय और अत्याचार का शिकार हो गया। 1976 में संविधान में 42वाँ संशोधन किया गया जिसके द्वारा न्यायपालिका को संसद के अधीन बना दिया गया और संसद तथा राज्य विधानसभाओं की अवधि 6 वर्ष कर दी गयी।

18 जनवरी 1977 को नाटकीय ढंग से लोकसभा चुनाव कराये जाने की

घोषणा की गयी यद्यपि विधि अनुसार अभी लोकसभा की कार्यावधि समाप्त होने में लगभग 15 महीने बाकी थे। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि किन कारणों से इंदिरा गाँधी ने चुनाव कराने का निर्णय लिया। चुनाव घोषणा के पश्चात विपक्ष के नेताओं को जेल से रिहा कर दिया गया। प्रेस पर लगाए गए प्रतिबन्धों को ढीला कर दिया गया और आतंकित जनता को यह आश्वासन दिया गया कि यह चुनाव निष्पक्ष और स्वतंत्र होंगे। विपक्षी राजनीतिक दलों के बीच सैद्धान्तिक मतभेद होने के बावजूद सामान्य यातनाओं के भोगी होने के कारण उनमें एकता की भावना विकसित हुई उन्होंने यह निश्चय किया कि वे संगठित होकर कांग्रेस के विरूद्ध चुनाव लड़ेंगे।

20 जनवरी, 1977 को मोरारजी देसाई ने एक नई पार्टी 'जनता पार्टी' के निर्माण की घोषणा की गई। इस पार्टी में कांग्रेस संगठन, भारतीय क्रांतिदल, जनसंघ और सोशलिस्ट पार्टी सम्मिलित हुईं। नवनिर्मित जनता पार्टी ने कांग्रेस के विरूद्ध देश के समक्ष एक विकल्प प्रस्तुत किया और अधिनायकवाद का अन्त करने और जनतंत्र को पुनर्जीवित करने का नारा दिया।

इंदिरा गाँधी द्वारा चुनाव कराए जाने की घोषणा जितनी आश्चर्यजनक थी, उससे कहीं ज्यादा आश्यर्चजनक घटना, कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता और इन्दिरा मंत्रिमण्डल के एक वरिष्ठ सदस्य जगजीवनराम द्वारा कांग्रेस छोड़ने का निर्णय था। 2 फरवरी 1977 को एक प्रेस कान्फ्रेस में जगजीवनराम ने कांग्रेस से त्यागपत्र देने का और एक नया राजनीतिक दल 'कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी–सी.एफ.डी. (लोकतांत्रिक कांग्रेस) बनाने की घोषणा की। जगजीवन राम के साथ ही उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री एच.एन. बहुगुणा, उड़ीसा की भूतपूर्व मुख्यमंत्री नंदनी सत्पथी और भूतपूर्व केन्द्रीय राज्यमंत्री के. आर. गणेश तथा कुछ अन्य महत्वपूर्ण नेताओं ने भी कांग्रेस छोड़ने की घोषणा की इस प्रकार चुनाव की घोषणा के दो सप्ताहों के अन्दर भारत में दो राजनीतिक दलों का निर्माण हुआ जिनका सामान्य उद्देश्य कांग्रेस सरकार

के तानाशाही शासन का अन्त करना था।

अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए विपक्षी नेता इस बार अत्यधिक सतर्क थे और वे संयुक्त रूप से चुनाव लड़कर कांग्रेस को पराजित करना चाहते थे। सी.एफ.डी. के निर्माण के साथ ही उसके चेयरमैन जगजीवनराम ने यह घोषणा की कि वह अगामी चुनाव में त्रिकोणात्मक संघर्ष से बचने का प्रयत्न करेंगे ताकि कांग्रेस को कोई लाभ न पहुंचने पाए। शीघ्र ही जनता पार्टी और सीएफडी के बीच एक चुनाव समझौता हो गया जिसमें इन दोनों राजनीतिक दलों ने एक ही चुनाव चिन्ह पर चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। इस प्रकार 1977 के चुनाव में कांग्रेस को अनेक राजनीतिक दलों के स्थान पर छठी लोकसभा के चुनाव हुए।

वास्तविकता यह है कि इस चुनाव के परिणामों ने विश्व के सभी देशों को चौंका दिया। लोकसभा के कुल 542 स्थानों में कांग्रेस को केवल 154 स्थान प्राप्त हो सके ओर जनता पार्टी व सीएफडी को 295 स्थान प्राप्त हुए। इस चुनाव के साथ ही कांग्रेस दल के 30 वर्षीय शासन और राजनीतिक एकाधिकार का अन्त हो गया। लोकसभा में विभिन्न राजनीतिक दलों को निम्नलिखित स्थान प्राप्त हुए।

सन 1977 का लोकसभा चुनाव (6वीं लोकसभा)[9]

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
कांग्रेस (आई)	154	28.41	34.52
भारतीय लोकदल	295	54.43	41.32
कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इण्डिया	7	1.29	2.82
कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी)	22	4.06	4.29
कांग्रेस (संगठन)	3	0.55	1.72
राज्य राजनीतिक दल	49	9.04	8.81

रजिस्टर्ड राजनीतिक दल	3	0.55	1.02
निर्दलीय	9	1.67	5.50
योग	**542**	**100.00**	**100.00**

सन 1977 के इस चुनाव में न केवल कांग्रेस पार्टी पराजित हुई वरन कुछ राज्यों में उसका सफाया हो गया। उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली में उसे कोई स्थान न मिल सका और राजस्थान में उसे एक स्थान प्राप्त हुआ।

दक्षिणी भारत में कांग्रेस की स्थिति कुछ अच्छी रही, शायद इसलिए कि आपातकाल में वहाँ ज्यादा अत्याचार नहीं किए गए थे। इस चुनाव में जनता पार्टी को 50 प्रतिशत से अधिक स्थान प्राप्त हुए, किन्तु उसे कुल मतों के 41.32 प्रतिशत मत ही मिले। कांग्रेस को 1971 के चुनाव में 43.68 प्रतिशत मत मिले थे, जबकि इस बार उसे 34.52 प्रतिशत ही मत प्राप्त हो सके जो कांग्रेस की लोकप्रियता के घटने के द्योतक हैं।

1977 का चुनाव कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्दों के आधार पर लड़ा गया। इसमें मुख्य रूप से 'स्थायित्व बनाम अराजकता' के मुद्दों ने निर्णायक भूमिका अदा की। जनता पार्टी की तरफ से अधिनायकवाद का अन्त करने और जनतंत्र को पुनर्जीवित करने का नारा दिया। इसके विरूद्ध कांग्रेस की ओर से यह दावा किया गया कि विरोधी राजनीतिक विचारधाराओं वाले विभिन्न राजनीतिक दलों का गठजोड़ (जनता पार्टी) देश में एक स्थायी सरकार की स्थापना करने में सक्षम नहीं है अतः जनता पार्टी की जीत राजनीतिक अराजकता को जन्म देगी।

ऐसा लगता है कि इस चुनाव में मतदाताओं की मूल रूचि इस बात में थी कि इन्दिरा शासन का अन्त होना चाहिए। उनकी रूचि इस बात में कम थी कि जनता पार्टी के सिद्धान्त या कार्यक्रम क्या हैं? इसलिए उसे 'नकारात्मक चुनाव' निर्णय का नाम दिया गया। देश के शिक्षित मतदाता संविधान में किए गए 42वें संशोधन, मूल अधिकारों के स्थगन, आपातकाल के किए गए अत्याचार, राजनीति में

विकसित होती हुई अधिकनायकवादी प्रवृत्तियों तथा राजनीति में संजय गाँधी के प्रवेश से ज्यादा दुखी थे, जबकि साधारण और अशिक्षित जनता इस मुद्दों से ज्यादा नसबंदी के लिए किए गए अत्याचार के कारण अत्यधिक रूष्ट थी और वह किसी भी तरह इन्दिरा शासन का अन्त करना चाहती थी।

चूँकि यह चुनाव कुछ निश्चित मुद्दों के आधार पर हो रहा था, अतः पिछले सभी चुनावों के विपरीत चुनाव में उम्मीदवारों के व्यक्तिगत गुणों को महत्व देने की बजाय जनसाधारण ने जनता पार्टी के नाम पर वोट दिया। परिणामस्वरूप यह चुनाव दल उन्मुख मतदान व्यवहार को परिलक्षित करता है। यह उल्लेखनीय है कि इस बार केवल 7 निर्दलीय उम्मीदवार निर्वाचित हो सके।

1977 के चुनाव ने भारतीय राजनीति के धर्म निरपेक्षीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। गत सभी चुनावों के विपरीत इस चुनाव में धर्मजाति के आधार पर मतदान की अपीलें अप्रभावी हुईं और हरिजन तथा मुस्लिम जो अब तक कांग्रेस पार्टी के सबसे बड़े समर्थ रहे थे, इस बार कांग्रेस से अलग हो गए।

दल प्रणाली की दृष्टि से 1977 का चुनाव राजनीतिक दलों के ध्रुवीकरण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम था। देश की चार बड़ी पार्टीयों के एक राजनीतिक दल में संगठित हो जाने से भारत में द्विदलीय व्यवस्था के विकसित होने की संभावना उत्पन्न हो गई। मई 1977 की बी.एल.डी., जनसंघ, कांग्रेस(स), सोशलिस्ट पार्टी तथा सी.एफ.डी. ने औपचारिक रूप से अपने विघटन और जनता पार्टी में विलय हो जाने की घोषणा की।

लोकसभा में कांग्रेस के बुरी तरह से पराजित होने के पश्चात जनता पार्टी के नेताओं तथा उसके समर्थकों ने यह दृष्टिकोण प्रतिपादित किया कि जनसाधारण का कांग्रेस सरकार और उसकी नीतियों और कार्यक्रमों पर से विश्वास उठ चुका है। अतः राज्यों में भी कांग्रेस दल के सत्तारूढ़ रहने का कोई औचित्य नहीं रहा। अप्रेल 1977 को तत्कालीन गृहमंत्री ने 9 राज्यों (तमिलनाडु में पहले से ही

राष्ट्रपति शासन था) के मुख्यमंत्रियों से यह अपील की कि वे स्वयं राज्यपाल से अनुरोध करके विधानसभा को विघटित करा दे ताकि उन राज्यों में नए चुनाव कराए जा सकें इस अपील को कांग्रेस शासित राज्यों ने अस्वीकार कर दिया और इसके विरूद्ध राज्यों की ओर से सर्वोच्च न्यायालय में यह मुकदमा किया गया कि गृहमंत्री का यह कदम असंवैधानिक है उन्हें अनुच्छेद 356 का प्रयोग करने से रोका जाए। सर्वोच्च न्यायालय से इस रिट को खारिज कर दिया। परिणामस्वरूप अनुच्छेद 356 के अधीन 9 राज्य विधान सभाओं का विघटन कर दिया गया। जून 1977 में भारत के दस राज्यों में विधानसभा के चुनाव कराए गए और इस चुनाव में भी 3 राज्यों के अतिरिक्त सभी में जनता पार्टी को भारी सफलता मिली।[10]

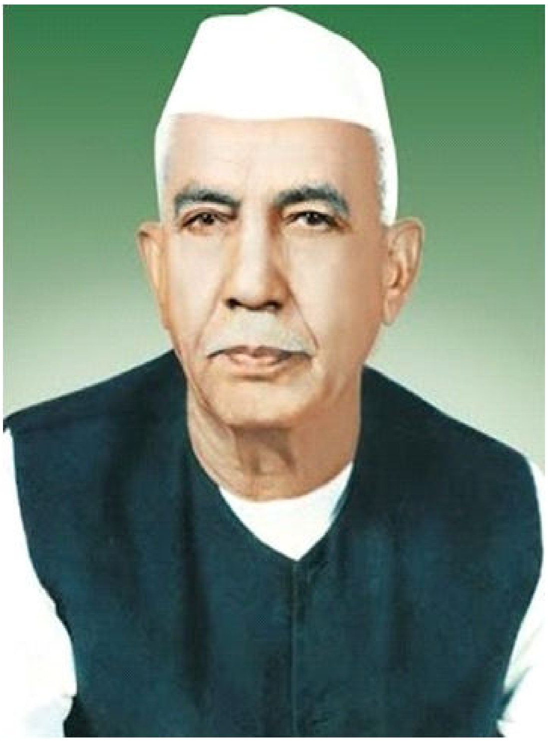

प्रधानमंत्री– चौधरी चरण सिंह (जनता दल)

(कार्यकाल– 28 जुलाई 1979 से 14 जनवरी 1980)

6. कांग्रेस आधिपत्य की पुनर्स्थापना 1980 और 1984 के चुनाव :–

1977 के चुनाव के बाद बनने वाली जनता पार्टी की सरकार आपसी फूट के कारण लगभग दो वर्ष और कुछ महीने ही जीवित रह सकी। इन दो वर्षों में दो प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई और चौधरी चरण सिंह हुए। चरण सिंह ने सरकार बनने के तीन सप्ताह बाद ही त्यागपत्र दे दिया और राष्ट्रपति को लोकसभा भंग करने का परामर्श दिया। चूँकि कोई अन्य दल सरकार बनाने की स्थिति में नहीं था इसलिए राष्ट्रपति ने 22 अगस्त 1979 को लोकसभा को भंग करने की घोषणा कर दी और जनवरी 1980 में 7वीं लोकसभा के चुनाव सम्पन्न हुए।

प्रधानमंत्री– इंदिरा गांधी (कॉग्रेस–आई)
(कार्यकाल– 14 जनवरी 1980 से 31 अक्टूबर, 1984)

अ. कॉँग्रेस (अर्स) का घोषणा–पत्र :–

कांग्रेस (अर्स) चरणसिंह मंत्रिमण्डल में साझेदार दल था। प्रारम्भ में

लोकदल कांग्रेस (अर्स) दोनों ही दलों द्वारा संयुक्त रूप से चुनाव घोषणापत्र जारी करने का निश्चय किया गया था। लेकिन समान घोषणा पत्र और समान चुनाव चिन्ह के साथ लोकसभा का चुनाव लड़ने का लोकदल से किया गया समझौता टूट जाने के कारण कांग्रेस ने अलग से घोषणा पत्र जारी किया। 7 दिसम्बर 1979 को कांग्रेस को महासचिव मोहम्मद युनुस सलीम ने दल का घोषणा पत्र जारी किया।

दल ने अपने चुनाव अभियान घोषणा पत्र में निजी पूंजी को संतुलित करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र को प्रोत्साहन देने, बेरोजगारी गारण्टी योजना को लागू करने तथा अलीगढ़ विश्वविद्यालय के अल्पसंख्यक चरित्र को बहाल करने तथा उर्दू को बढ़ावा देने का आश्वासन दिया।

दल ने अल्पसंख्यक आयोग की संवैधानिक स्तर प्रदान करने, अल्पसंख्यकों के धार्मिक स्थानों में सरकारी हस्तक्षेप कम से कम करने उनके व्यक्तिगत कानूनों के हस्तक्षेप नहीं करने और साम्प्रदायिक दंगों को रोकने के लिए प्रशासनिक कदम उठाने का आश्वासन दिया गया। घोषणा पत्र में कहा गया कि कांग्रेस (अर्स) का पहला काम मजदूरों, किसानों, उद्योगपतियों, बुद्धिजीवियों तथा सार्वजनिक क्षेत्र के लोगों और सरकारी कर्मचारियों का सहयोग लेकर आर्थिक स्थिति को सुव्यवस्थित करना होगा।

घोषणा–पत्र में उद्योग, व्यापार और अन्य सेवाओं में गाँवों, कस्बों और शहरों, सबके लिए रोजगार के अवसर देने का भी आश्वासन दिया गया। इसके लिए शिक्षा को रोजगारोन्मुखी बनाने का भी विचार प्रकट किया गया। घोषणापत्र में कृषि के वैज्ञानिकीरण और आधुनिकीकरण पर जोर देकर शहरी और भारत में आमदनी को सन्तुलित रखने का भी उल्लेख किया गया। कृषि पर आधारित उद्योगों के विकास करने का भी वचन दिया गया लेकिन इसमें यह भी कहा गया कि यह सब करते हुए इस पर ध्यान दिया जायेगा कि खेत मजदूरों के आधार पर बड़े किसान लाभ न उठा पायें। छोटे किसानों को भी बेहतर कीमतें देने का विचार भी रखा गया।

घोषणा पत्र में भूमि सुधारों पर जोर दिया गया साथ ही मुहरबंदी को कठोरता से लागू करने का वचन दिया गया।[11]

ब. जनता पार्टी का चुनाव घोषणा–पत्र :–

जनता पार्टी का चुनाव घोषणा पत्र बहुत विस्तृत था। इसमें लगभग उन्हीं बातों को दोहराया गया था जो 1977 की अविभाजित जनता पार्टी के घोषणा पत्र में सम्मिलित थी। इसमें मुख्य रूप से लोकतंत्र की पुनर्स्थापना करने, प्रेस की स्वतंत्रता को कायम रखने, विधि के शासन को प्रतिष्ठित करने, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के अल्पसंख्यक चरित्र को बहाल करने, आर्थिक शक्तियों के केन्द्रीयकरण को रोकने, नीति निर्देशक सिद्धान्तों की तुलना में मौलिक अधिकारों को महत्व देने, उपद्रव विरोधी पुलिस की व्यवस्था करने, राष्ट्रपति शासन लागू करने से संबंधित प्रावधानों के दुरूपयोग को रोकने से संबंधित आश्वासन दिये गये थे। दल के घोषणा–पत्र में प्रत्येक परिवार के कम से कम एक सदस्य को सरकारी सेवा प्रदान करने का भी आश्वासन दिया गया था।[12] इस तरह से जनता पार्टी के घोषणा पत्र में बहुत अधिक नवीनता की भावना विद्यमान नहीं थी।

स. कांग्रेस(ई.) का घोषणा पत्र :–

कांग्रेस (ई.) के घोषणा पत्र में इन्दिरा गाँधी की दल और देश के लिए अपरिहार्यता और महत्व का प्रदर्शन करते हुए कहा गया था कि ''कांग्रेस(ई.) ही अकेला दल है, इंदिरा गाँधी ही अकेली नेता है। इसका स्पष्ट रूप से आशय यही था कि इंदिरा गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस(ई.) ही देश को स्थायित्व और कुशल शासन प्रदान करने में सक्षम है। वह ही देश बचाने में सक्षम हैं। कांग्रेस(ई.) द्वारा अपने घोषणा पत्र में इस प्रकार के नारे का उल्लेख करना स्पष्ट रूप से इस बात का प्रतीक था कि यह दल इंदिरा गाँधी के नेतृत्व में स्थायित्व का नारा लगाकर बड़े ही आत्मविश्वास के साथ चुनाव संघर्ष में उतरा था। दल के घोषणा पत्र में विपक्षी दलों की कड़ी आलोचना करते हुए यह कहा गया था कि ये दल देश का शासन

संचालित करने के योग्य नहीं है। घोषणा–पत्र की उल्लेखनीय बातों में उर्दू की द्वितीय भाषा बनाने, प्रेस सेंशरशिप लागू नहीं करने, आपातकाल लागू नही करने, न्यायपालिका की स्वतंत्रता का सम्मान करने, परिवार नियोजन कार्यक्रम को लागू करने में जोर जबर्दस्ती नहीं करने, बिक्रीकर को समाप्त करने के सम्बन्ध में पुनर्विचार करने, कमजोर वर्गों को न्याय प्रदान करने तथा बीस सूत्रीय कार्यक्रम को लागू करने सम्बन्धी प्रावधान मुख्य थे।[13]

द. भारतीय साम्यवादी (मार्क्सवादी) दल का घोषणापत्र :–

25 सितम्बर, 1979 को मार्क्सवादी साम्यवादी दल के पोलिट ब्यूरो के सदस्य टी. रणदिवे ने दल का चुनाव घोषणा पत्र जारी किया। घोषणा पत्र के मुख्य जोर वामपंथी और लोकतांत्रिक शक्तियों को संगठित करने तथा तानाशाही एवं साम्प्रदायिक शक्तियों को पराजित करने पर दिया गया था। घोषणा पत्र में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि दल कांग्रेस(ई.) और जनता पार्टी को पराजित करने में कांग्रेस(अर्स) और लोकदल का सहयोग करेगा।[14]

य. भारतीय साम्यवादी दल का घोषणा पत्र :–

भारतीय साम्यवादी दल के चुनाव घोषणा पत्र में भी भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) के समान ही साम्प्रदायिक और तानाशाही शक्तियों को पराजित करने और वामपंथी तथा लोकतांत्रिक शक्तियों की एकता को सुदृढ़ करने का संकल्प व्यक्त किया गया था। घोषणा पत्र में भारतीय मतदाताओं से यह अपील की गई थी कि वे कांग्रेस(ई.) और जनता पार्टी को पराजित कर के देश में धर्म निरपेक्ष और वामपंथी दलों के प्रत्याशियों को विजयी बनायें।

र. अन्य दलों के चुनाव घोषणा पत्र :–

प्रमुख क्षेत्रीय दलों पंजाब में अकाली दल, जम्मू कश्मीर में नेशनल कांफ्रेस, तमिलनाडु में द्रमुक ने भी अपने अपने राज्यों में चुनाव घोषणा पत्र प्रसारित किये। इनमें राज्यों को स्वायत्ता प्रदान करने तथा और अधिक अधिकार प्रदान करने

की मांग की गई। कतिपय प्रमुख वामपंथी दलों सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया, फॉरवर्ड ब्लॉक और मार्क्सवादी समन्वयक समिति ने अपने चुनाव घोषणा पत्र में वामपंथी एकता पर बल दिया।

ल. निर्वाचन अभियान :–

सन 1977 के आम चुनावों की तुलना में इस चुनाव में उत्साह और उत्तेजना की भारी कमी थी। साधारण जनमानस में चुनाव के प्रति निष्क्रियता और उदासीनता की भावना थी। सन 1977 में उन्होंने जिस जोश के साथ सरकार की बदलने के लिए जनता पार्टी को समर्थन दिया था, वह जनता पार्टी के विघटन और सत्ता की लड़ाई के घटनाचक्र के कारण ठण्डा पड़ गया था। इस घटनाक्रम ने भारतीय मतदाताओं को बुरी तरह से निराश करते हुए उन्हें इस हद तक उदासीन और क्षुब्ध बना दिया कि ये कहने लग गये कि वे सभी नेता और दल एक समान हैं और सभी जनता को धोखा देते हैं। यह मानसिकता लोकतंत्र के लिए शुभ लक्षण नहीं थी फिर भी राजनीतिक दलों ने अपने चुनाव प्रचार के चुनाव घोषणा पत्र, आमसभाओं, नुक्कड़ सभाओं, पम्पलेट, पोस्टरों, आकाशवाणी और दूरदर्शन का सहारा लिया।

इस चुनाव में भी विभिन्न दलों द्वारा मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए विभिन्न नारों का सहारा लिया गया। कांग्रेस(ई.) के तीन प्रमुख नारे थेः–

1. इन्दिरा लाओ, देश बचाओ।
2. चुनिए उन्हें, जो सरकार चला सके।
3. न जांत न पांत पर, इन्दिरा जी की बात पर, मोहर लगेगी हाथ पर।

लोकदल (जनता एस) का प्रमुख नारा था –

गरीबी मिटाने का निशान।

हल जोतता हुआ किसान।

इसके अलावा 'लोगों का दल, लोकदल' भी इस दल का प्रमुख नारा

था। जनता पार्टी के नारों में प्रमुख थे :–

1. सदियों का कलंक मिटाना है।

   जगजीवनराम को लाना है।

2. तानाशाही पनप न पाये।

   हर दलबदलू, मुँह की खाए।

3. नया जाल, पुरानी चाल

   इन्दिरा, संजय, बंशीलाल।

4. माँ, बेटे से देश बड़ा।

5. इन्दिरा हटाओ, देश बचाओ।

6. इन्दिरा का है एक ही ख्वाव, संजय बेटा बने नवाब।

7. गरीबों, हरिजनों और शोषित वर्ग के मसीहा बाबू जगजीवनराम।

1980 के चुनाव में लोकसभा के 542 स्थानों पर चुनाव होना था लेकिन चुनाव 525 स्थानों पर ही हुआ। दो स्थानों पर निर्विरोध चुनाव हुआ। इस निर्वाचन में कांग्रेस सहित किसी भी राजनीतिक दल ने सारे स्थानों के लिए चुनाव नहीं लड़ा। कांग्रेस (आई) 491 और जनता पार्टी ने 431 सीटों के लिए उम्मीदवार खड़े किए।

1977 के चुनाव में बुरी तरह पराजित होने वाले दल, इन्दिरा कांग्रेस के बारे में यह सोचा भी नहीं जा सकता था कि केवल दो वर्षों के बाद ही वह पुनः सत्ता में आ जाएगी, लेकिन हुआ यही। 1980 के इस मध्यावधि में जिस 527 स्थानों के लिए चुनाव हुआ। उसमें कांग्रेस (आई) को 352 स्थान प्राप्त हुए, जो कुल स्थानों का 66.79 प्रतिशत था।

सन 1980 के लोकसभा चुनाव में विभिन्न राजनीतिक दलों का निष्पादन निम्नाकित तालिका में देखा जा सकता है।[15]

सन 1980 का लोकसभा चुनाव (7वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
कांग्रेस (आई)	352	66.79	42.68
कांग्रेस (अर्स)	13	2.47	5.29
जनता पार्टी	31	5.88	18.93
जनता पार्टी (सेक्युलर)	41	7.78	9.42
कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इण्डिया	11	2.09	2.59
कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी)	36	6.83	6.16
राज्य राजनीतिक दल	34	6.45	7.69
रजिस्टर्ड राजनीतिक दल	01	0.19	0.82
निर्दलीय	08	1.52	6.42
योग	**527**	**100.00**	**100.00**

1980 के चुनाव में कांग्रेस का दो तिहाई बहुमत से वापिस आना एक राजनीतिक चमत्कार था। कांग्रेस की अप्रत्याशित विजय के दौ मालिक कारण बताए जा सकते हैं – प्रथम, जनता सरकार का अत्यधिक निराशाजनक निष्पादन और द्वितीय, इंदिरा गाँधी का प्रभावशाली व्यक्तित्व।

सन् 1977 के चुनाव के अवसर पर भारत के मतदाता कांग्रेस शासन से ऊब चुके थे, वे एक विकल्प की तलाश में थे और कांग्रेस सरकार को हटाने के लिए व्याकुल थे। विभिन्न राजनीतिक दलों के गठजोड़ से निर्मित जनता पार्टी एक विकल्प के रूप में सामने आई। बड़ी आशाओं के साथ मतदाताओं ने भारी बहुमत से जनता पार्टी को विजयी बनाया। ऐसा लगता था कि अब केन्द्र में कांग्रेस पार्टी कुछ दिनों तक सत्ता में न आ सकेगी। लेकिन ढ़ाई वर्ष के शासनकाल में जनता पार्टी में

आंतरिक रूप में इतने मतभेद हो गये कि मोरारजी देसाई को प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र देना पड़ा। उनके उत्तराधिकारी के रूप में चौधरी चरण सिंह एक महीने से भी कम दिनों के लिए प्रधानमंत्री रह पाए। विभिन्न धटकों की बीच संघर्ष और उपर्युक्त राजनीतिक उतार–चढ़ाव से जनता पार्टी की छवि धूमिल हो गई और आम जनता में यह भावना तेजी से विकसित हो गई कि राष्ट्रीय स्तर पर कांग्रेस के अतिरिक्त कोई अन्य दल स्थिर सरकार बनाने की क्षमता नहीं रखता।

अपने शासनकाल में ढ़ाई वर्षों में जनता पार्टी ने विभिन्न तरीकों से इंदिरा गाँधी की छवि बिगाड़ने की कोशिश की। उन्हें गिरफ्तार किया गया, शाह कमीशन का गठन किया गया और तरह–तरह की यातनाऐं दी गई। इंदिरा गाँधी ने इन परिस्थितियों का दृढ़ता से मुकाबला किया। इससे जनता की सहानुभूति इंदिरा गाँधी के साथ हो गईं और उन्हें यह लगा कि जनता पार्टी और इंदिरा गाँधी के बीच चल रहा संघर्ष केवल स्वार्थ और सत्ता के लिए है, इसके मूल में सिद्धान्त या आदर्श नहीं हैं। दूसरी ओर स्वयं जनता पार्टी अपने आन्तरिक मतभेदों के कारण अपनी कार्यकुशलता का परिचय न दे सकी और सामान्य स्थिति कांग्रेस शासन काल से भी ज्यादा खराब होती गई अतः मतदाता जल्दी ही जनता सरकार और उसकी कार्यप्रणाली से असन्तुष्ट हो गए।[16]

सन 1980 के चुनाव में इंदिरा गाँधी ने बड़े ही विश्वास और संयम के साथ चुनाव लड़ा। इतना व्यापक चुनाव अभियान शायद इससे पहले नहीं किया था। इंदिरा गाँधी ने 384 संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों का दौरा किया और रात दिन मेहनत की। वास्तविकता यह है कि इस चुनाव में कांग्रेस की विजय, दल की जीत नहीं, इंदिरा गाँधी की व्यक्तिगत जीत थी। मतदाताओं ने सिद्धान्त या आदर्श के नाम पर नहीं, केवल इंदिरा गाँधी के नाम पर वोट दिया।

जनता पार्टी में विभाजन होने के फलस्वरूप पहले की तरह कांग्रेस विरोधी को पुनः गैर कांग्रेसी दलों में विभाजित हो गए और इसका लाभ वास्तविक

रूप से कांग्रेस को मिला। अन्य कारणों से अतिरिक्त 1980 के चुनाव में कांग्रेस (आई) का दो तिहाई बहुमत प्राप्त कर लेना, इंदिरा गाँधी के चमत्कारी नेतृत्व का सबसे बड़ा प्रभाव था।

राज्य विधानसभाओं के चुनाव –

सातवीं लोकसभा के चुनाव में कांग्रेस को पूर्ण बहुमत मिलने के पश्चात कांग्रेस सरकार ने भी जनता सरकार द्वारा अपनाई गई नीति का अनुसरण किया और नौ राज्य विधानसभाओं का विघटन कर दिया जिनमें जनता पार्टी बुरी तरह पराजित हुई। ये राज्य थे – उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, उड़ीसा, तमिलनाडु और पंजाब। मई 1980 में इन 9 राज्यों में मध्यावधि चुनाव हुए जिनमें केवल तमिलनाडु में अन्ना डी.एम.के. को सफलता मिली, शेष आठ राज्यों में कांग्रेस को बहुमत प्राप्त हुआ। इस प्रकार 1980 में एक बार फिर कांग्रेस दल का राजनीतिक एकाधिकार स्थापित हो गया।

मई 1982 में चार राज्यों – हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, केरल और पश्चिमी बंगाल विधानसभाओं के चुनाव हुए। इन चुनावों में पश्चिमी बंगाल में मार्क्सवादी दल सत्ता में आया, शेष तीन राज्यों में कांग्रेस दल ने सरकार का निर्माण किया।

जनवरी 1983 में तीन अन्य राज्यों (आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक और त्रिपुरा) के चुनाव हुए। इन निर्वाचनों में कांग्रेस को हानि हुई। आन्ध्रप्रदेश से कांग्रेस शासन का अन्त हो गया और एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल 'तेलगुदेशम' ने सरकार का निर्माण किया। कनार्टक में कुछ विपक्षी दलों के सहयोग से जनता पार्टी ने सरकार का निर्माण किया और त्रिपुरा में मार्क्सवादी दल पूर्ण बहुमत के साथ विजयी हुआ।

7. 1984–85 का लोकसभा चुनाव –

प्रधानमंत्री– राजीव गांधी (कॉंग्रेस–आई)
(कार्यकाल– 31 अक्टूबर, 1984 से 1 दिसम्बर, 1989)

दिसम्बर 1984 में 8वीं लोकसभा चुनाव कुछ असाधारण परिस्थितियों का परिणाम था। 31 अक्टूबर 1984 को इंदिरा गाँधी की हत्या के बाद उसी दिन राजीव गांधी को प्रधानमंत्री पद की शपथ दिला दी गयी। नये प्रधानमंत्री ने लोकसभा के यथासंभव शीघ्र चुनाव कराने का निर्णय लिया। 20 नवम्बर को चुनाव आयोग द्वारा यह घोषणा कर दी गयी कि 24 दिसंबर को लोकसभा के चुनाव कराए जाएंगे। तद्नुसार दिसम्बर 1984 में 20 राज्यों और 9 केन्द्रशासित प्रदेशों में चुनाव सम्पन्न हुए। पंजाब और असम में व्याप्त आन्तरिक अशान्ति के कारण चुनाव नहीं कराये जा सके। जून 1984 में स्वर्ण मंदिर में सेना के प्रवेश के बाद पंजाब की स्थिति अत्यधिक तनावपूर्ण थी। इंदिरा गाँधी की उनके सिक्ख बॉडीगार्ड द्वारा हत्या किए जाने से स्थिति और भी खराब हो गई। देश के कुछ अन्य भागों, विशेषकर असम में भी स्थिति खराब थी। इस वातावरण में कांग्रेस (आई) की ओर से यह नारा दिया गया

कि देश की एकता और अखण्डता खतरे में है और इसे केवल कांग्रेस दल ही सुरक्षित रख सकता है।[17]

पूरा देश इंदिरा गाँधी की दुःखद हत्या से दुःखी था और जनता के दिल में राजीव गाँधी के लिए स्वाभाविक रूप से दया और सहानुभूति जाग उठी थी। विपक्षी दलों के पास कोई ऐसा मुद्दा नहीं था जो मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित कर पाता।

दिसम्बर 1984 में 508 निर्वाचन क्षेत्रों में चुनाव सम्पन्न हुए। सात स्थानों के लिए जनवरी 1985 में चुनाव हुए। इस चुनाव में इन्दिरा कांग्रेस को 515 स्थानों में से 405 स्थान प्राप्त हुए जो कुल स्थानों का लगभग 80 प्रतिशत स्थानों के लगभग था। 1984 के चुनाव में विभिन्न राजनीतिक दलों का निष्पादन निम्नलिखित तालिका में देखा जा सकता है।[18]

सन 1984–85 का लोकसभा चुनाव (8वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
कांग्रेस (आई)	405	78.64	49.10
			51.90
कांग्रेस (सोशलिस्ट)	4	0.78	1.52
जनता पार्टी	10	1.94	6.89
भारतीय जनता पार्टी	2	0.39	7.74
लोकदल	3	0.58	5.97
कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इण्डिया	6	1.16	2.71
कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी)	22	4.27	5.87
राज्य राजनीतिक दल	58	11.27	11.56
रजिस्टर्ड राजनीतिक दल	—	—	0.72
निर्दलीय	0.5	0.97	7.92
योग	**515**	**100.00**	**100.00**

सन 1984 के लोकसभा के चुनाव परिणामों से निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

1. 1952 से अब तक पहली बार कांग्रेस को इतना बड़ा बहुमत प्राप्त हुआ था।

2. इस चुनाव में पहली बार बहुमत प्राप्त दल को देश में पड़े हुए कुल मतों के 50 प्रतिशत से अधिक मत मिले। इससे पहले किसी भी चुनाव में सरकार बनाने वाले दल को, चाहे वह कांग्रेस दल रहा हो या जनता पार्टी, 50 प्रतिशत मत नहीं मिले थे। इन अर्थों में 1984 के चुनाव के बाद बनने वाली कांग्रेस सरकार देश की पहली सरकार थी जिसे देश के कुल मतदाताओं का पूर्ण विश्वास और समर्थन मिला।

3. 1984 के चुनाव में सात राज्यों में सभी चुनाव क्षेत्रों में कांग्रेस दल को सफलता मिली और विपक्ष को कोई भी सीट न मिल सकी। यह राज्य थे – हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, मणिपुर, मेघालय, नागालैण्ड और राजस्थान। इनके अतिरिक्त आठ केन्द्र शासित प्रदेशों में भी कांग्रेस को समस्त स्थान प्राप्त हुए।

4. कुछ राज्यों में जैसे पश्चिमी बंगाल, केरल और कर्नाटक जो विपक्षी दलों के गढ़ समझे जाते थे उनमें भी कांग्रेस को भारी सफलता मिली।

5. इस चुनाव में समस्त गैर कांग्रेसी दलों को प्राप्त कुल मतों को यदि जोड़ दिया जाए तो भी कांग्रेस को प्राप्त हुई सीटों में लगभग 20 स्थानों की ही कमी हो पाती।

6. पिछले सभी चुनावों में यह कहा गया था कि कांग्रेस की सफलता हरिजन और मुस्लिम मतदाताओं के समर्थन के कारण हुई थी। इस चुनाव ने इस तर्क को भी असत्य सिद्ध कर दिया क्योंकि को जिस बड़ी संख्या में मत प्राप्त हुए, वह समाज के सभी वर्गों के समर्थन के कारण ही मिल सके थे।

7. 1984 के चुनाव मतदाताओं ने इंदिरा गाँधी के नाम पर वोट दिया और वे भावनात्मक ढंग से राजीव गाँधी से जुड़ गये थे। यही कारण था कि इस चुनाव में धर्म और जाति जैसे महत्वपूर्ण कारक बड़ी हद तक अप्रभावी से प्रतीत हुये।

8. सन 1989 का लोकसभा चुनाव –

प्रधानमंत्री– वी.पी. सिंह (जनता दल)

(कार्यकाल– 2 दिसम्बर,1989 से 10 नवम्बर, 1990)

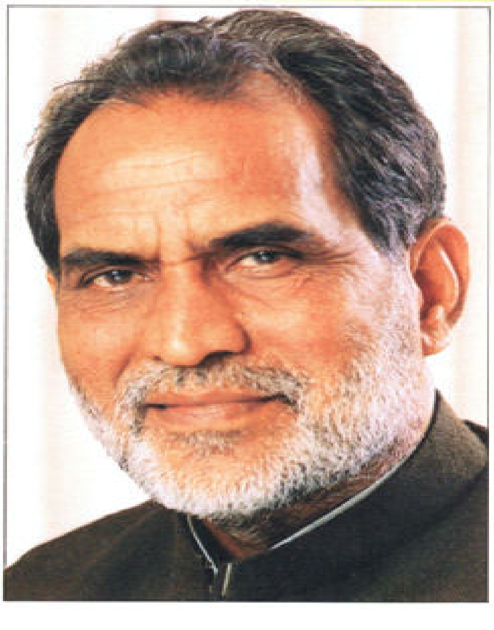

प्रधानमंत्री– चन्द्रशेखर (जनता दल–सो)

(कार्यकाल– 11 नवम्बर, 1990 से 21 जून, 1991)

नवम्बर 1989 में नवीं लोकसभा का चुनाव हुआ जिसमें आठ राष्ट्रीय दलों, 33 राज्य दल और 301 रजिस्टर्ड पार्टियों ने भाग लिया। इस चुनाव में विभिन्न

राजनीतिक दलों का निष्पादन निम्न रहा।[19]

सन 1989 का लोकसभा चुनाव (9वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
अ– राष्ट्रीय दल			
कांग्रेस	197	37.24	39.53
जनता दल	143	27.03	17.79
भारतीय जनता पार्टी	85	16.07	11.36
साम्यवादी	12	2.27	2.57
साम्यवादी (मार्क्सवादी)	33	6.24	6.55
कांग्रेस समाजवादी	1	0.19	0.33
जनता पार्टी	—	—	1.01
लोक दल (बी)	—	—	0.20
ब– राज्य दल	27	5.10	9.28
स– रजिस्टर्ड दल	19	3.59	6.13
द– निर्दलीय	12	2.27	5.25
योग	**515**	**100.00**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि 1989 के चुनाव में कांग्रेस पार्टी को मिले कुल स्थानों का प्रतिशत उसे मिले कुल मतों से कम रहा। ऐसी स्थिति 1977 के चुनाव में भी उत्पन्न हुई थी जब कांग्रेस को प्राप्त मतों के प्रतिशत के मुकाबले में लोकसभा में 6.11 प्रतिशत कम स्थान प्राप्त हुए थे। 1952 से 1971 तक के सभी चुनावों में कांग्रेस पार्टी के प्राप्त कुल मतों के प्रतिशत से लगभग दो गुना अधिक स्थान प्राप्त हुए थे।

1989 के चुनाव में कांग्रेस पार्टी को सबसे अधिक क्षति उठानी पड़ी, लोकसभा में इसकी सदस्य संख्या आठवी लोकसभा की तुलना में आधे से भी कम हो गई और मतों का प्रतिशत भी 10 प्रतिशत से कम हो गया। कांग्रेस दल में उत्पन्न

हुई अव्यवस्था, आन्तरिक गुटबन्दी, पारस्परिक वैमनस्य और मुख्य रूप से राजीव गाँधी के खिलाफ स्वयं कांग्रेस के सदस्यों द्वारा लगाये गये भ्रष्टाचार के आरोप कांग्रेस के पतन का मूल कारण बन गये। दूसरी ओर कतिपय गैर कांग्रेसी दलों के विलय से बनने वाली राजनीतिक दल जनता दल ने सुसंगठित रूप से कांग्रेस को भारी टक्कर दी।

इस चुनाव की एक प्रमुख विशेषता तथाकथित साम्प्रदायिक राजनीतिक दल 'भारतीय जनता पार्टी' का सशक्त रूप से उभरकर आना था। 1980 के चुनाव में भाजपा को लोकसभा में केवल दो स्थान और देश में पड़े हुए कुल मतों का मात्र 7.74 प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। उक्त चुनाव में भाग लेने वाले सात राष्ट्रीय राजनीतिक दलों में भाजपा को सबसे कम (केवल दो) स्थान मिले थे। इसके विपरीत 1989 के चुनाव में भाजपा को तीसरा स्थान प्राप्त हुआ और लोकसभा में इसे 85 स्थान प्राप्त हुए। यदि इस बात को मान लिया जाये कि भाजपा एक साम्प्रदायिक दल है तो उपयुक्त चुनाव परिणामों से यह निष्कर्ष निकालना गलत न होगा कि 1989 के बाद से राष्ट्रीय राजनीति में साम्प्रदायिक शक्तियों को बहुत ज्यादा बल मिला। यह बात निर्विवाद है कि भाजपा अयोध्या जैसे विवादास्पद, धार्मिक मुद्दों को उठाकर और भावनात्मक उत्तेजना पैदा करके धर्म के नाम पर जनसमर्थन जुटाने में सफल हुई।

संक्षेप में 1989 के चुनाव से भारतीय राजनीति में कांग्रेस के पतन और भाजपा के उत्कर्ष का युग प्रारम्भ होता है। यहीं से देश में ''एक दलीय सरकार'' के युग की समाप्ति और ''साझा सरकारों का युग'' प्रारम्भ हुआ है जिसने देश में राजनीतिक स्थायित्व के नाम पर अस्थायित्व को जन्म दिया।

1989 के चुनाव में किसी भी राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला। कांग्रेस पार्टी 197 सीटें जीतकर लोकसभा में सबसे बड़े राजनीतिक दल के

रूप में आई। कांग्रेस ने किसी अन्य दल के सहयोग से सरकार बनाने से इंकार किया। फलस्वरूप नेशनल फ्रंट ने जिसे 143 स्थान मिले थे, भाजपा और वामपंथी मोर्चे द्वारा बाहर से दिए गए समर्थन से 2 दिसम्बर 1989 को वीपी सिंह के नेतृत्व में सरकार का गठन किया किन्तु इस सरकार के एक वर्ष पूरा होने से पहले ही भाजपा ने सरकार से अपना समर्थन वापिस ले लिया और कांग्रेस के समर्थन से चन्द्रशेखर ने केवल 61 सांसदों वाले नेता की हैसियत से सरकार बनाई यह सरकार स्वाभाविक रूप से कांग्रेस की दया की पात्र थी। केवल 224 दिनों के बाद ही कांग्रेस ने चन्द्रशेखर सरकार से अपना समर्थन वापिस लेकर सरकार को भंग करा दिया और इस प्रकार 9वीं लोकसभा केवल दो वर्ष ही जीवित रह पाई।[20]

9. 1991 का लोकसभा का चुनाव –

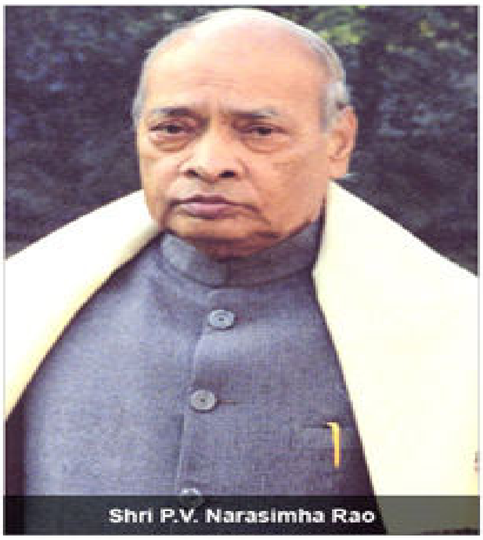

प्रधानमंत्री– पी.वी.नरसिम्हाराव (कॉग्रेस–आई)

(कार्यकाल– 21 जून, 1991 से 16 मई, 1996)

1991 में दसवीं लोकसभा के चुनाव हुए। इस चुनाव में 9 राष्ट्रीय दल, 39 राज्य दल और 301 रजिस्टर्ड राजनीतिक दलों ने भाग लिया। यह पहला चुनाव था

जिसमें नेहरू परिवार से कोई चुनाव मैदान में न था किन्तु राजीव गाँधी की हत्या के कारण मतदाताओं का सहानुभूति मत कांग्रेस को मिला। 1991 के चुनाव में विभिन्न राजनीतिक दलों का निष्पादन निम्नलिखित तालिका में देखा जा सकता है।[21]

सन 1991 का लोकसभा चुनाव (10वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
अ– राष्ट्रीय दल			
कांग्रेस	232	44.53	36.50
भारतीय जनता पार्टी	120	23.03	20.08
साम्यवादी	14	2.69	2.49
साम्यवादी (मार्क्सवादी)	35	6.72	6.10
कांग्रेस सोशलिस्ट	01	0.19	0.36
जनता दल	59	11.32	11.88
जनता दल (एस)	–	0.00	0.08
जनता पार्टी	05	0.96	3.30
लोक दल	–	0.00	0.06
ब– राज्य दल	50	9.61	12.98
स– रजिस्टर्ड दल	04	0.56	2.19
द– निर्दलीय	01	0.19	3.92
योग	**521**	**100.00**	**100.00**

उपरोक्त चुनाव परिणामों को देखने से यह स्पष्ट होता है कि पिछले चुनाव में कांग्रेस दल को मिलाने वाले मतों का प्रतिशत तो घटा किन्तु लोकसभा में लगभग 7 प्रतिशत अधिक स्थान मिले।1989 के चुनाव में कांग्रेस को 39.53 प्रतिशत मत और 37.24 प्रतिशत स्थान मिले थे। 1991 के इसका मत प्रतिशत घटकर 36.50 प्रतिशत हो गया किन्तु स्थान बढ़कर 44.53 प्रतिशत हो गए। यह स्थिति संभवतः समान स्तरीय राजनीतिक दलों की संख्या बढ़ने और उनके बीच मतों के बँटवारे के कारण उत्पन्न हुई।

1991 के चुनाव में भाजपा को लोकसभा में तीसरे के बजाए दूसरा स्थान मिला और यह 85 (1989) के स्थान पर 120 सीटें प्राप्त करके सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी के रूप में उभर कर आयी। भाजपा की इस विजय का कारण साम्प्रदायिक शक्तियों का बढ़ता हुआ प्रभाव बताया गया। इस चुनाव में सबसे अधिक क्षति जनता दल को हुई जो पिछले चुनाव में लोकसभा में दूसरे स्थान पर था किन्तु इस चुनाव में जनता दल की सीटें 143 (1989) से घटकर केवल 59 रह गईं। साम्यवादी दलों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ। जनता दल की पराजय का मुख्य कारण उसका आन्तरिक विभाजन तथा उसकी सरकार का असंतोषजनक निष्पादन था।[22]

1991 के चुनाव में राज्य स्तरीय दलों को लाभ पहुँचा। विगत चुनाव में प्राप्त 27 स्थानों के मुकाबले में इस चुनाव में उन्हें 50 सीटें मिली। यह स्थिति राज्य राजनीतिक दलों के बढ़ते हुए प्रभाव की ओर इंगित करती है।

इस चुनाव की एक अन्य विशेषता निर्दलीय प्रत्याशियों का मतदाताओं द्वारा तिरस्कार करना था। 1989 के चुनाव में 12 निर्दलीय प्रत्याशी विजयी हुए थे। 1991 में केवल एक निर्दलीय प्रत्याशी ही लोकसभा में प्रवेश पा सका इससे मतदाताओं की बढ़ती हुई राजनीतिक जागरूकता का परिचय मिलता है। एक स्वस्थ जनतांत्रिक व्यवस्था में दल उन्मुख मतदान व्यवहार होना आवश्यक है। यह भी उल्लेखनीय है कि अतीत में सरकारों को बनाने और गिराने में निर्दलीय सदस्यों की सक्रिय भूमिका रही है।

10वीं लोकसभा ने अपनी पाँच वर्ष की अवधि पूरी की जिसका श्रेय कांग्रेस प्रधानमंत्री नरसिंह राव को जाता है। अल्पमत में होने के बाद भी उन्होंने अपनी राजनीतिक सूझबूझ से अपनी सरकार को विघटन से बचाए रखा।

10. 1996 का लोकसभा का चुनाव –

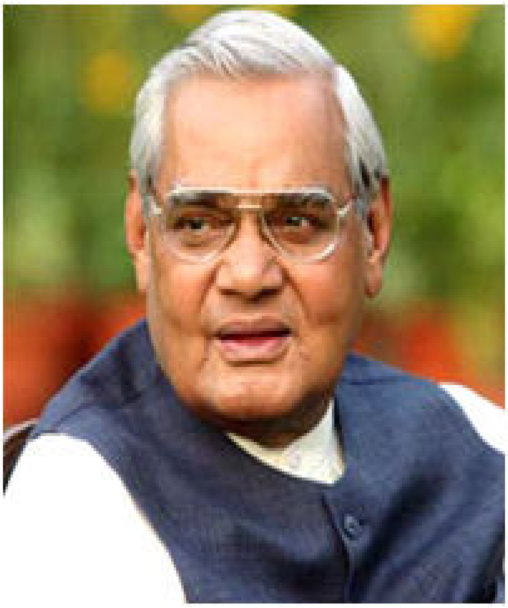

प्रधानमंत्री– अटल बिहारी वाजपेयी (भाजपा)

(कार्यकाल– 16 मई, 1996 से 1 जून 1996)

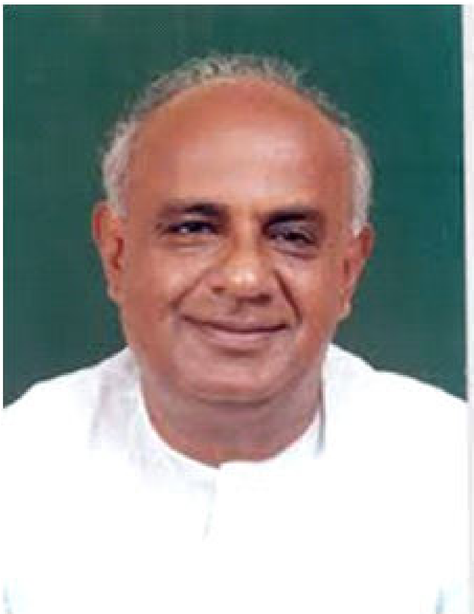

प्रधानमंत्री– एच.डी. देवगौड़ा (जनता दल संयुक्त मोर्चा)

(कार्यकाल– 1 जून 1996 से 21 अप्रैल,1997)

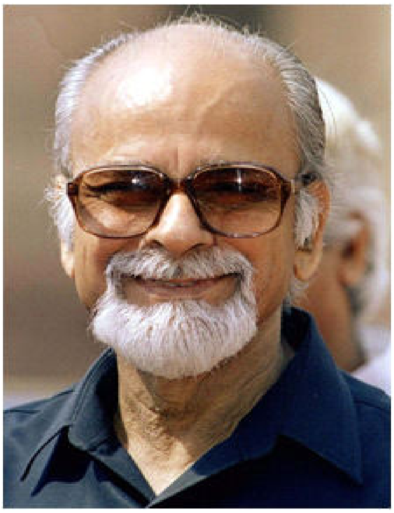

प्रधानमंत्री— इन्द्रकुमार गुजराल (जनता दल संयुक्त मोर्चा)
(कार्यकाल— 21 अप्रैल,1997 से 18 मार्च 1998)

1996 के चुनाव अत्यधिक अस्थिरता की स्थिति में हुए। सत्ता के दावेदार तीन मुख्य राजनीतिक दल थे — कांग्रेस (इन्दिरा), भारतीय जनता पार्टी तथा राष्ट्रीय मोर्चा। राष्ट्रीय मोर्चे में सम्मिलित थे — जनता दल, दोनों साम्यवादी दल, रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी तथा फार्वर्ड ब्लॉक आदि। इस नेशनल फ्रन्ट में कुछ नवनिर्मित क्षेत्रीय राजनीतिक दल जैसे — तेलगुदेशम, तमिलमनिला कांग्रेस, असमगण परिषद, मध्य प्रदेश विकास पार्टी, इन्दिरा कांग्रेस (तिवारी), डी.एम.के. तथा कर्नाटक कांग्रेस आदि भी सम्मिलित हो गए। इस प्रकार नेशनल फ्रन्ट का आकार पहले की तुलना में काफी बड़ा हो गया।

1991—96 के बीच विभिन्न राष्ट्रीय दलों में आन्तरिक गुटबंदी इतनी बढ़ गई कि उनमें से अनेक का विभाजन हो गया। कांग्रेस (इंदिरा) का एक गुट जो दल अध्यक्ष की नीतियों से असंतुष्ट था, वह अर्जुन सिंह के नेतृत्व में अलग हो गया और एक नया दल इन्दिरा कांग्रेस (तिवारी) अस्तित्व में आया। इस दल का अध्यक्ष उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी को बनाया गया। तमिलनाडु में डीएमके के विभाजन के फलस्वरूप मूपनार के नेतृत्व में एक नया दल ''तमिल मनिला

कांग्रेस'' अस्तित्व में आया। मध्यप्रदेश में माधवराज सिंधिया ने एक विशेष निर्वाचन क्षेत्र से लोकसभा का टिकट न पाने पर रूष्ट होकर अलग दल ''मध्यप्रदेश विकास पार्टी'' का निर्माण किया। गुजरात में भाजपा की आन्तरिक लड़ाई जोरों पर थी और चुनाव के बाद शंकर सिंह बघेला ने एक नई पार्टी ''महा गुजरात पार्टी'' की स्थापना की। एक अन्य राष्ट्रीय दल जनता दल ने 1994–95 के बीच दो बार विभाजन हुआ। राष्ट्रीय दलों ने इस टूट–फूट का परिणाम यह हुआ कि अन्य राज्यों में क्षेत्रीय राजनीतिक दल मजबूत हुए।

चुनाव के कुछ दिनों पूर्व जैन हवाला स्कैण्डल सामने आया जिसमें भाजपा अध्यक्ष एल.के. आडवाणी सहित 29 वरिष्ठ राजनीतिज्ञों (जिनमें 8 केन्द्रीय मंत्री थे और दो पूर्व राज्यपाल भी थे) के विरूद्ध चार्जशीट जारी की गई। भ्रष्टाचार के इस गम्भीर मामले का प्रभाव लगभग सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दलों की स्थिति पर पड़ा।

यह थी वह राजनीतिक परिस्थितियाँ जिनमें 1996 में 11वीं लोकसभा के चुनाव हुए। यह चुनाव कुछ अर्थों में विगत चुनावों से भिन्न था। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता मुख्य चुनाव आयुक्त टी.एन. शेषन द्वारा चुनाव की नयी आचार संहिता जिसने चुनाव में होने वाले असीमित व्यय और चुनाव अभियान में अपनाए जाने वाले प्रचार के तरीकों को इस प्रकार प्रतिबंधित कर दिया कि यह लगा ही नहीं कि देश में चुनाव हो रहे हैं। इस चुनाव में विभिन्न राजनीतिक दलों की स्थिति निम्न थी।[23]

सन 1996 का लोकसभा चुनाव (11वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
अ– राष्ट्रीय दल			
भारतीय जनता पार्टी	161	29.65	20.29
कांग्रेस	140	25.78	28.80

जनता दल	46	8.74	8.08
साम्यवादी	12	2.20	1.97
साम्यवादी (मार्क्स)	32	5.80	6.12
समता पार्टी	08	1.47	2.17
ऑल इण्डिया इन्दिरा कांग्रेस(तिवारी)	04	0.74	1.46
जनता पार्टी	00	0.00	0.19
ब– राज्य राजनीतिक दल	127	23.38	21.34
स– रजिस्टर्ड दल	04	0.73	3.29
द– निर्दलीय	09	1.65	6.28
योग	**538**	**100.00**	**100.00**

1996 के चुनाव में भारतीय जनता पार्टी लोकसभा में सबसे बड़े राजनीतिक दल के रूप में उभर कर सामने आयी। इसे 120 (1991) के मुकाबले में 161 स्थान मिले। कांग्रेस 141 स्थान प्राप्त करके दूसरे स्थान पर रही। यह उल्लेखनीय है कि 1989 के चुनाव से भाजपा की शक्ति लगातार बढ़ती रही। 1984 में इसे केवल 02 स्थान मिले थे। जो बढ़कर 1989 में 85, 1991 में 120 और 1996 में 161 हो गये। इससे स्पष्ट है कि एक दशक में भाजपा ने अप्रत्याशित लोकप्रियता प्राप्त की। राजनीतिक पर्यवेक्षकों का कहना है कि राम मंदिर जैसे कुछ धार्मिक मुद्दों ने भाजपा को बल प्रदान किया। और धर्म का कार्ड ही मूल रूप से उसकी बढ़ती हुयी लोकप्रियता के लिए उत्तरदायी था। दूसरी ओर कांग्रेस पार्टी में आंतरिक गुटबंदी और तोड़फोड़ तथा अन्य दलों में हुये विभाजन के कारण जनसाधारण का विश्वास उन दलों पर और कम हो गया। भाजपा की छवि एक अनुशासित पार्टी की थी और इसका लाभ भी उसको मिला। अयोध्या में राम मंदिर के निर्माण का मुद्दा भावनात्मक आकर्षण के रूप में अत्यधिक प्रभावी सिद्ध हुआ।इस धार्मिक भाव में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दे और नीतियाँ गौण बन गयी।[24]

इस चुनाव में कांग्रेस को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचा। लोकसभा में उसे केवल 140 स्थान मिले जो अब तक हुये चुनावों में से उसे मिले स्थानों की तुलना में सबसे कम थे। 1989 के चुनावों में कांग्रेस को 197 तथा 1991 में 232 स्थान मिले थे। यही नहीं कांग्रेस को मिलने वाले मतों का प्रतिशत भी 36.50 प्रतिशत (1991) से घटकर 28.80 प्रतिशत हो गया। उसके लोकसभा में प्राप्त स्थानों का प्रतिशत भी 44.53 प्रतिशत (1991) से घटकर 25.78 प्रतिशत हो गया। आश्चर्य की बात यह है कि हिंदी भाषी राज्यों में कांग्रेस का सफाया हो गया। इसके द्वारा जीते गये 140 स्थानों में से 100 स्थान गैर हिंदी भाषी राज्यों में मिले। उत्तरप्रदेश में कांग्रेस को 85 स्थानों में से केवल 5 और बिहार में 54 में से केवल 4 स्थान प्राप्त हुये। ऐसा लगता है कि धार्मिक मुद्दे हिंदी भाषी राज्यो ंमें ज्यादा आकर्षक सिद्ध हुये। जबकि अन्य राज्यो ंमें मंदिर–मस्जिद विवाद का ज्यादा प्रभाव नहीं हुआ।

कांग्रेस की भारी पराजय का मुख्य कारण उसके परम्परागत वोट बैंक (अल्पसंख्यक और अनुसूचित जाति तथा पिछड़ा वर्ग) का कमजोर होना था। बाबरी मस्जिद विवाद ने मुसलमानों को कांग्रेस से बहुत दूर कर दिया। वहीं दूसरी ओर समाजवादी पार्टी और बहुजन समाजवादी पार्टी ने पिछड़े वर्गों और अनूसूचित जातियो ंपर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया। इस प्रकार हुये वोट विभाजन ने स्वयं इन दलों को बहुत लाभ भले ही ना पहुचाया हो किन्तु कांग्रेस पार्टी को भारी नुकसान पहुंचा।

1996 के संसदीय चुनाव से भारतीय राजनीति में एक नया मोड़ आया। क्षेत्रीय दलों का प्रभावी रूप से उभरना। इस चुनाव में राज्य स्तर के राजनीतिक दलों को 127 तथा रजिस्टर्ड राजनीतिक दलों को 4 स्थान मिले जबकि 1991 में यह संख्या 50+04 (क्रमशः राज्य दल तथा रजिस्टर्ड दल) 1989 में 27+19, 1984 में 58, 1980 में 34+01 और 1977 में 40+13 थी। यह उल्लेखनीय है कि 1952 से 1991 तक राज्य स्तरीय, राजनीतिक दलों की अधिकतम संख्या 58 थी जो कि 1996 के

चुनाव में दुगुनी से अधिक हो गई। यूनाइटेड फ्रंट को प्राप्त हुए कुल 176 स्थानों में से 117 स्थान इसके घटक क्षेत्रीय दलों को मिले। इन 117 स्थानों में से केवल तीन दलों डी.एम.के. तमिल मनिला कांग्रेस और तेलगूदेशम को 53 स्थान मिले थे। परिणाम यह हुआ कि केन्द्र सरकार के बनाने और गिराने में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों ने निर्णायक भूमिका अदा की। वर्तमान स्थिति यह है कि क्षेत्रीय दलों के समर्थन के बल पर सरकार का जीवन निर्भर करता है। क्षेत्रीय दलों के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण अब केन्द्र सरकार उतनी शक्तिशाली नहीं हो सकती जितनी कांग्रेस शासनकाल में थी।[25]

11. 1998 का लोकसभा का चुनाव :–

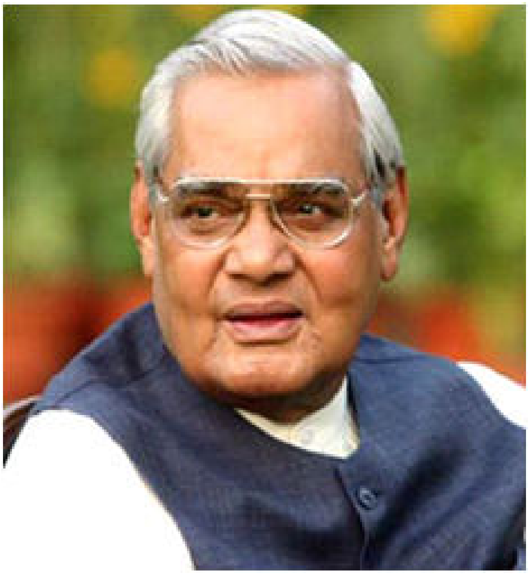

प्रधानमंत्री– अटल बिहारी वाजपेयी (एन.डी.ए.)

(कार्यकाल– 19 मार्च 1998 से 13 अक्टूबर, 1999)

11वीं लोकसभा के चुनाव 1996 में हुए थे जिसमें किसी भी राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला और पहली सरकार अटल बिहारी वाजपेयी ने 16 मई, 1996 को बनायी जो 13 दिनों तक ही जीवित रह सकी। मई 1996 से जनवरी 1998/मार्च 1998 तक तीन सरकारें बनीं और टूटी और अन्तोतगत्वा 4 दिसम्बर

1997 को लोकसभा की तरह इस चुनाव में भी किसी एक राजनीतिक दल को अकेले अथवा उसके सहयोगी दलों की सदस्य संख्या मिलकर भी पूर्ण बहुमत न मिल सका। फिर भी भाजपा सबसे बड़े राजनीतिक दल के रूप में लोकसभा में वापिस आयी।

1998 के लोकसभा चुनाव में विभिन्न राजनीतिक दलों की स्थिति निम्न प्रकार थी।[26]

सन 1998 का लोकसभा चुनाव (12वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
अ– राष्ट्रीय दल			
भारतीय जनता पार्टी	179	32.96	25.38
कांग्रेस	141	25.96	25.72
साम्यवादी दल (मार्क्स)	32	5.89	5.21
समता पार्टी	12	2.20	1.77
साम्यवादी दल	09	1.65	1.74
जनता दल	06	1.10	3.20
बहुजन समाज पार्टी	05	0.92	4.66
ब– राज्य दल	97	17.86	18.21
स– रजिस्टर्ड दल	58	10.68	9.62
द– निर्दलीय	04	0.73	2.22
योग	**543**	**100.00**	**100.00**

चुनाव परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि 1998 के चुनाव में भाजपा की संख्या 161 (1996) से बढ़कर 179 हो गई लेकिन कांग्रेस की स्थिति 1996 जैसी रही बल्कि उसे एक सीट का लाभ हुआ। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि भाजपा का समर्थन

आधार कांग्रेस के मुकाबले में कमजोर हुआ। भाजपा को कुल मतों का 25.38 प्रतिशत मिला जबकि कांग्रेस को 25.72 प्रतिशत मत प्राप्त हुआ। इससे यह निष्कर्ष निकालना गलत न होगा कि भाजपा कांग्रेस के मुकाबले में ज्यादा लोकप्रियता नहीं प्राप्त कर सकी। इस चुनाव ने यह स्पष्ट कर दिया कि कोई एक राजनीतिक दल कांग्रेस के अतीत का शायद मुकाबला न कर सकेगा।

1996 के चुनाव परिणामों की तुलना में 1998 के चुनाव में बिहार, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, उत्तरप्रदेश में भाजपा को मिलने वाली सीटों में वृद्धि हुई। आंध्र प्रदेश (04), हिमाचल प्रदेश (03),उड़ीसा (07), पंजाब(03),तमिलनाडु और यहां तक की पश्चिम बंगाल(01) में भाजपा को 1996 के चुनाव में एक भी स्थान नहीं मिला। इस बार लोकसभा में प्रतिनिधित्व मिला। इस प्रकार 12वीं लोकसभा चुनाव में भाजपा हिन्दी भाषी राज्यों से निकालकर दक्षिण के राज्यों में अपना परिचय बनाने में सफल रही। पिछले चुनाव की तुलना में 1998 के चुनाव में कांग्रेस ने असम, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, राजस्थान तथा कुछ अन्य राज्यों में अपनी स्थिति को सुधारा किन्तु सबसे अधिक लाभ उसे महाराष्ट्र में पहुँचा, जहाँ लोकसभा के 48 स्थानों में से 33 स्थान कांग्रेस को मिले। राजस्थान में इसे 25 में से 18 स्थान मिले। असम में कुल 14 स्थानों में से 10 स्थान कांग्रेस को प्राप्त हुए। आश्चर्य की बात यह है कि उत्तर प्रदेश में कांग्रेस को 85 में से एक भी स्थान नहीं मिला जबकि 1996 के चुनाव में ये संख्या 5 थी।[27]

1998 के चुनाव की तुलना में यह पता चलता है कि 12 राज्यों में (जिनमें केरल के अतिरिक्त अधिकांशतः छोटे–छोटे राज्य थे) भाजपा को लोकसभा में एक भी स्थान नहीं मिला। कांग्रेस की स्थिति भी यही रही। 12 राज्यों में इसे भी कोई स्थान नहीं मिला लेकिन ऐसे राज्यों में उत्तर प्रदेश और पंजाब भी सम्मिलित था।

1996 के चुनाव की तुलना में भाजपा की स्थिति में कुल मिलाकर सुधार हुआ। 20 प्रतिशत के मुकाबले में इसे 25 प्रतिशत वोट मिले जबकि कांग्रेस का

मतदान प्रतिशत 28 से घटकर 25 प्रतिशत हो गया। लोकसभा में भाजपा को मिलने वाली सीटों का प्रतिशत भी बढ़ गया। जैसा पहले लिखा जा चुका है, इस चुनाव में दक्षिण के राज्यों में, भाजपा ने अपनी पैठ बनाई और कर्नाटक में लोकशक्ति के साथ चुनाव लड़कर इसने भारी सफलता प्राप्त की। हरियाणा, गुजरात और महाराष्ट्र जहाँ भाजपा सत्ता में थी, उसे हार का सामना करना पड़ा जो भाजपा शाासन के प्रति जन रोष का द्योतक है।

नेशनल फ्रंट जिसके दो प्रधानमंत्री रह चुके थे, 1998 के चुनाव में बुरी तरह पराजित हुआ। तमिलनाडु में एआईडीएमके को भारी सफलता मिली।

12. 12वीं लोकसभा का विघटन और 1999 का चुनाव–

,

प्रधानमंत्री– अटल बिहारी वाजपेयी (एन.डी.ए.)

(कार्यकाल– 13 अक्टूबर, 1999 से 21 मई, 2004)

1998 के चुनाव में भाजपा को 179 स्थान मिले और उसने एक दर्जन से अधिक राजनीतिक दलों के सहयोग से मिश्रित सरकार का निर्माण किया था। यह सरकार केवल 13 महीनों तक जीवित रही। सरकार के घटक राजनीतिक दलों ने छोटी–छोटी माँगों को लेकर प्रधानमंत्री पर दबाव डालना शुरू किया जिनको एक

सीमा तक ही पूरा किया जा सकता था। सबसे बड़ी समस्या ए.आई.डी.एम.के. की नेता जयललिता थी। उन्होंने हर कदम पर प्रधानमंत्री की कमजोर दलीय स्थिति का लाभ उठाना चाहा। जयललिता चाहती थी कि उनके विरूद्ध भ्रष्टाचार के जो मुकदमे हैं, वह किसी तरह खत्म करा दिया जायें अन्त में उन्होनें समर्थन जारी रखने की शर्त यह रखी कि प्रधानमंत्री तमिलनाडु की डी.एम.के सरकार को अनुच्छेद 356 का प्रयोग करके भंग कर दें जिसे प्रधानमंत्री स्वीकार न कर सके। अन्तोगत्वा 14 अप्रेल 1999 को जयललिता ने सरकार द्वारा विश्वास प्राप्त करने का प्रस्ताव रखा जिस पर 17 अप्रेल 1999 को विवादोपरान्त मतदान हुआ। भाजपा सरकार केवल एक मत से सदन में पराजित हो गई और उसका अंत हो गया।[28]

लोकसभा में भाजपा सरकार द्वारा विश्वास मत प्राप्त न कर सकने के बाद कांग्रेस ने वैकल्पिक सरकार बनाने के लिए सक्रिय रूप से बातचीत शुरू की किन्तु विभिन्न गैर कांग्रेसी दलों के पारस्परिक मतभेद उन्हें एकता के सूत्र में न बांध सके। परिणामस्वरूप 26 अप्रेल 1999 को लोकसभा विघटित कर दी गई और अक्टूबर 1999 में 13वीं लोकसभा के चुनाव हुए।

नवम्बर 1998 में दिल्ली, राजस्थान, मध्यप्रदेश और मिजोरम विधानसभाओं के चुनाव में भाजपा को भारी पराजय का मुँह देखना पड़ा। मिजोरम ने नेशनल फ्रंट तथा शेष तीनों राज्यों में कांग्रेस का स्पष्ट बहुमत मिला और उसने सरकार का निर्माण किया। इस चुनाव परिणामों से भाजपा विरोधी लहर का संकेत मिल रहा था। यह भी अनुमान लगाया जा रहा था कि सोनिया गाँधी के दल अध्यक्ष के रूप में सक्रिय राजनीति में प्रवेश करने से शायद 1971 या 1980 जैसा कोई राजनीतिक चमत्कार हो सकता है।

1999 के चुनाव में भाजपा ने कुछ क्षेत्रीय दलों के साथ चुनावी समझौते करके नेशनल डेमोक्रेटिक अलायंस के मैनीफेस्टो पर चुनाव लड़ा। उसने केवल 239 स्थानों पर ही अपने उम्मीदवार खड़े किए जबकि कांग्रेस ने 453 स्थानों पर चुनाव

लड़ा। 1998 के विधानसभा चुनाव परिणामों से कांग्रेस को लोकसभा चुनाव में भी भारी सफलता मिलने की उम्मीद थी इसलिए उसने अकेले ही चुनाव लड़ा।

1999 के लोकसभा चुनाव में विभिन्न राजनीतिक दलों का निष्पादन निम्न प्रकार था।[29]

सन 1999 का लोकसभा चुनाव (13वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
अ– राष्ट्रीय दल			
भारतीय जनता पार्टी	182	33.51	23.75
बहुजन समाज पार्टी	14	2.57	4.16
भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी	04	0.73	1.48
कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्स)	33	6.72	5.40
इण्डियन नेशनल कांग्रेस	114	20.99	28.30
जनता दल (एस)	01	0.18	0.91
जनता दल (अर्स)	21	3.86	3.10
ब– राज्य राजनीतिक दल	158	29.09	26.93
स– रजिस्टर्ड दल	10	1.84	3.22
द– निर्दलीय	06	1.10	2.74
योग	**543**	**100.00**	**100.00**

यह उल्लेखनीय है कि 1998 और 1999 दोनों ही चुनावों में भाजपा को क्रमशः 179 और 182 स्थान मिले जिससे यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय स्तर पर भाजपा के समर्थन आधार में कोई अंतर नहीं आया। राज्य राजनीति में भले ही उसकी स्थिति में बदलाव आया हो।

अनुमान के बिल्कुल विपरीत इस चुनाव में कांग्रेस पार्टी को भारी क्षति पहुँची। 1998 के चुनाव में कांग्रेस को 141 स्थान मिले थे जबकि 1999 में उसकी संख्या

घटकर 114 हो गई। सोनिया गाँधी ने प्रियंका गाँधी के साथ चुनाव अभियान में बड़ी सक्रियता के साथ भाग लिया लेकिन परिणाम शून्य रहा।

राज्य दलों की स्थिति में बहुत ज्यादा सुधार हुआ। 1998 में इनकी सदस्य संख्या 97 थी, 1999 में यह संख्या 158 हो गई जो क्षेत्रीय दलों के बढ़ते हुए प्रभाव का प्रतीक है।

लोकसभा में सबसे बड़ा राजनीतिक दल होने के कारण भाजपा ने अपने सहयोगी दलों (एन.डी.ए)के साथ मिलकर अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में सरकार का निर्माण किया। देश की यह पहली साझा सरकार थी जो पारस्परिक गतिविरोधों के बाद भी अपनी पांच वर्ष की अवधि पूरी करने में सफल रही।

13. 2004 का लोकसभा का चुनाव –

प्रधानमंत्री– डॉ. मनमोहन सिंह (यू.पी.ए.)

(कार्यकाल– 22 मई, 2004 से 22 मई, 2009)

14वीं लोकसभा के लिए अप्रेल मई 2004 में चुनाव हुए। भाजपा द्वारा दिए गए फील गुड और इंडिया शाइनिंग के नारों से जो चुनावी माहौल उत्पन्न हुआ उसमें एन.डी.ए. सरकार की वापिसी निश्चित थी। सभी एक्जिट पोल और बड़े–बड़े

राजनीतिक पंडित भाजपा की सफलता का दावा कर रहे थे लेकिन चुनाव परिणाम अत्यधिक अप्रत्याशित रहे। सभी पूर्वानुमानों के विपरीत इस चुनाव में कांग्रेस पार्टी सबसे बड़े राजनीतिक दल के रूप में लोकसभा में वापिस आई और अटलबिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली राजग सरकार को जनता ने नकार दिया। 2004 के चुनाव में प्रमुख राजनीतिक दलों का निष्पादन निम्न प्रकार था।[30]

2004 का लोकसभा चुनाव (14वीं लोकसभा)

राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान	प्राप्त स्थानों का प्रतिशत	प्राप्त मतों का प्रतिशत
अ– राष्ट्रीय दल			
1. इंडियन नेशनल काँग्रेस	145		26.69
2. भारतीय जनता पार्टी	138		22.16
3. कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्स)	43		5.69
4. कम्यूनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया	10		1.40
5. बहुजन समाज पार्टी	19		5.35
6. राष्ट्रीय कॉग्रेस पार्टी	09		1.78
ब– राज्य स्तरीय दल	156		28.77
स– रजिस्टर्ड दल	15		3.97
द– निर्दलीय	04		4.18
योग	**539**		

उपर्युक्त चुनाव में चुनाव पूर्व के गठबंधनों के अनुसार 543 स्थानों में से सबसे ज्यादा सीटें (218) कांग्रेस के नेतृत्व वाले गठबंधन को तथा 187 सीटें राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) को मिलीं। इसमें कांग्रेस की 145 सीटें और राष्ट्रीय जनता दल को 24 स्थान प्राप्त हुए। उल्लेखनीय है कि 1997 के चुनाव में कांग्रेस को 114 स्थान मिले थे। इस प्रकार कांग्रेस को 31 स्थानों का लाभ हुआ। दूसरी ओर भाजपा की 182 सीटें घटकर 138 रह गईं और एन.डी.ए. गठबंधन को भारी नुकसान

हुआ। शेष 136 स्थानों में से सबसे ज्यादा सीटें 61 वामपंथी दलों की थी। राज्य स्तर दलों में समाजवादी पार्टी को सबसे ज्यादा सीटें 36 प्राप्त हुईं।

चुनाव के बाद वामपंथी दलों के अतिरिक्त कुछ अन्य पंथ निरपेक्ष राजनीतिक दलों, जैसे समाजवादी पार्टी तथा बहुजन समाज पार्टी आदि ने भी कांग्रेस गठबंधन को बाहर से समर्थन देने की घोषणा की। इन दलों के सहयोग से एक नया गठबंधन संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूनाइटेड प्रोग्रेसिव एलाइन्स 'यू.पी.ए.') अस्तित्व में आया जिसने डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व में 22 मई 2004 को मंत्रिपरिषद का निर्माण किया।[31]

14. 2009 का लोकसभा चुनाव –

प्रधानमंत्री– डॉ. मनमोहन सिंह (यू.पी.ए.)

(कार्यकाल– 22 मई, 2009 से 26 मई, 2014)

यूपीए सरकार का पाँच वर्ष का कार्यकाल पूरा होने पर मई 2009 में 15वीं लोकसभा का चुनाव हुआ। इस चुनाव में भारतीय राजनीति में एक नया मोड़ आया। चुनाव से पहले और चुनाव परिणाम घोषित होने के बाद का राजनीतिक परिदृश्य बड़ा ही रोचक रहा। समस्त नैतिक मूल्यों और मान्यताओं का त्याग करके मात्र राजनीतिक स्वार्थ के लिए लोग एक दल को छोड़कर दूसरे दल में शामिल होने

लगे। जैसे जैसे चुनाव करीब आते गए विभिन्न राजनीतिक दलों के रिश्ते तेजी से बदलने लगे। यूपीए और एनडीए दोनों ही गठबंधनों के बंधन ढीले पड़ गये। यूपीए से लालूप्रसाद यादव (राजद) और रामविलास पासवान (लोक जनशक्ति पार्टी) अलग हो गए जो अत्यधिक आश्चर्यजनक था। साम्यवादी दल बहुत पहले ही यू .पी. ए से अपना समर्थन वापस ले चुके थे। उनके स्थान पर मुलायम सिंह यादव ने परमाणु डील पर कांग्रेस सरकार को समर्थन देकर मनमोहन सिंह सरकार को बचाया था। संभावना यह थी कि काँग्रेस और समाजवादी दल मिलकर चुनाव लड़ेंगे लेकिन उनके बीच भी सीटों के विभाजन को लेकर सम्बन्ध खराब हो गए और कांग्रेस तथा सपा ने अलग–अलग चुनाव लड़ा।

एनडीए से चन्द्रबाबू नायडू के नेतृत्व वाली तेलगूदेशम पार्टी ने सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। उड़ीसा में नवीन पटनायक ने भाजपा से नाता तोड़ लिया जो राजनीतिक दल यूपीए और एनडीए से अलग हो गए उन्होंने और अन्य छोटे–छोटे दलों को मिलाकर तीसरे और चौथे मोर्चे के नाम से दो नए गठबंधनों का निर्माण किया।

साम्यवादी दलों ने अलग होकर बसपा, बीजू जनता दल, एआईडीएमके, तेलगूदेशम तथा कुछ अन्य दलों के साथ मिलकर तीसरे मार्चे का गठन किया। लालू प्रसाद यादव, रामबिलास पासवान, मुलायम सिंह यादव, कुछ अन्य छोटे–छोटे क्षेत्रीय दलों के साथ मिल गए और अपने को चौथे मोर्चे का नाम दिया। ऐसा लगता है कि सभी प्रमुख क्षेत्रीय दलों ने काँग्रेस को कमजोर समझते हुए उसके साथ चुनावी समझौते के मामले में अपना बर्चस्व बनाये रखना चाहा। उन सबको यह विश्वास था कि चुनाव के बाद यही क्षेत्रीय दल किंगमेकर होंगे और उनका समर्थन पाने के लिए काँग्रेस को उनके सामने गिड़गिड़ाना पड़ेगा लेकिन चुनाव ने नक्शा ही बदल दिया। काँग्रेस भारी संख्या के साथ लोकसभा में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरकर आई।[32]

15वीं लोकसभा के चुनाव में 364 राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और रजिस्टर्ड राजनीतिक

दलों ने सामूहिक रूप से अथवा अलग–अलग चुनाव लड़ा। राजनीतिक दलों के चार समूह एनडीए, यूपीए, तीसरा मोर्चा और चौथा मोर्चा मैदान में थे। इनके अतिरिक्त बहुत से छोटे दल और स्वतंत्र प्रत्याशी भी अपना–अपना भाग्य आजमा रहे थे।

2009 का लोकसभा चुनाव (15वीं लोकसभा)

2009 के लोकसभा चुनाव में विभिन्न गठबन्धनों का निष्पादन निम्न प्रकार रहा[33]–

	राजनीतिक दल	कुल प्राप्त स्थान
1.	यू.पी.ए.	262
2.	एन.डी.ए.	159
3.	वामपंथी – तीसरा फ्रन्ट	79
4.	चौथा फ्रन्ट – (सपा,राजद तथा अन्य)	43
	योग	543

सभी पूर्वानुमानों के विपरीत 15वीं लोकसभा चुनाव में कॉंग्रेस पार्टी काफी बढ़त के साथ बड़े राजनीतिक दल के रूप में, लोकसभा में वापिस आई। 2004 के चुनाव में कांग्रेस को 145 स्थान मिले थे जबकि इस चुनाव में कॉंग्रेस को 201 स्थान प्राप्त हुए। यह उल्लेखनीय है कि विगत 25 वर्षों में लोकसभा में किसी एक राजनीतिक दल को 201 सीटें नहीं मिली। कुछ राज्यों में कांग्रेस का निष्पादन अपेक्षा से कहीं ज्यादा अच्छा रहा। उदाहरण के लिए केरल में कांग्रेस को 20 स्थानों में 13 स्थान मिले जबकि पिछले चुनाव में उसे एक भी सीट नहीं मिली थी। दिल्ली की सभी 07 सीटों पर कांग्रेस विजयी रही। आंध्रप्रदेश में 42 में से 33 सीटें कांग्रेस को मिली। हरियाणा में कांग्रेस को पिछली बार की तरह 10 में से 9 स्थानों पर सफलता मिली। राजस्थान में कॉंग्रेस को 25 में से 20 स्थान प्राप्त हुए। उत्तर प्रदेश जहॉं कांग्रेस की स्थिति अत्यधिक निराशाजनक थी, इसके भारी सफलता मिली। 2004 के

चुनाव में यूपी में कांग्रेस को 9 स्थान मिले जबकि इस बार संख्या बढ़कर 21 हो गई।

पंजाब में कांग्रेस को 13 में से 8 स्थान मिले जबकि पिछली बार यह संख्या दो थी। बिहार में नीतिश कुमार भाजपा गठबंधन का पलड़ा भारी रहा और कॉंग्रेस को 40 में से केवल 2 स्थान मिले। पिछली बार यह संख्या 03 थी।

2009 के चुनाव में एनडीए का नेतृत्व करने वाली भारतीय जनता पार्टी को सबसे ज्यादा नुकसान हुआ। इसका एक महत्वपूर्ण कारण राजनैतिक परिदृश्य से अटलबिहारी वाजपेयी की अनुपस्थिति थी। पिछले चुनाव में भाजपा को 138 स्थान मिले थे किन्तु इस बार उसके केवल 121 स्थान प्राप्त हुए।

मध्यप्रदेश, कर्नाटक, छत्तीसगढ़ तथा कुछ अन्य छोटे राज्यों में भाजपा का निष्पपादन ठीक रहा। झारखण्ड में पिछले चुनाव में भाजपा को एक भी स्थान नहीं मिला था जबकि इस चुनाव में उसे 14 में से 8 स्थानों पर सफलता मिली। उत्तर प्रदेश में भाजपा की स्थिति लगभग 2004 जैसी ही रही इसे 80 में से 11 सीटें मिलीं।

2004 के चुनाव के मुकाबले में इस बार भाजपा को 17 सीटों का नुकसान हुआ लेकिन उसे अपनी सीटें घटने से ज्यादा कॉंग्रेस को इतनी ज्यादा सीटें मिलने से दुःख हुआ। अगर कांग्रेस को इतनी सीटें न मिलतीं तो भाजपा क्षेत्रीय दलों के सहयोग से सरकार बनाने में सफल हो सकती थी और लालकृष्ण आडवाणी का प्रधानमंत्री बनने का सपना पूरा हो सकता था।

15वीं लोकसभा के चुनाव में सबसे बड़ा धक्का साम्यवादी दलों को पहुँचा। पश्चिमी बंगाल जो कई दशकों से साम्यवाद का गढ़ था, इस चुनाव में उस पर तृणमूल कांग्रेस का कब्जा हो गया। साम्यवादी दलों को केवल 15 स्थान मिले जबकि 2004 में उनकी संख्या 35 थीं। इसके विपरीत मामला ममता बनर्जी की तृूणमूल कॉंग्रेस को एक सीट की जगह 19 स्थान प्राप्त हुए।

साम्यवादी दलों का दूसरा किला केरल था जहाँ 2004 के चुनाव में उन्हें 20 में से 15 स्थान मिले थे किन्तु इस बार उन्हें केवल 4 स्थान मिल सके और 13 सीटें कांग्रेस को मिलीं। कारण जो भी रहे हों किन्तु 2009 के चुनाव में भारत में

साम्यवादी दलों के अस्तित्व के लिए प्रश्न चिह्न लगा दिया।

क्षेत्रीय राजनीतिक दलों को अलग–अलग भले ही घाटा हुआ हो लेकिन इससे राष्ट्रीय दलों की सीटों में कोई अन्तर नहीं आया। संभवतः इसका कारण कुछ गैर मान्यता प्राप्त स्थानीय दलों और निर्दलीय उम्मीदवारों की संख्या बढ़ना था। 2004 के चुनाव के मुकाबले में 2009 के चुनाव में गैर मान्य प्राप्त राजनीतिक दलों की संख्या 140 प्रतिशत अर्थात् ढाई गुना ज्यादा थी। उल्लेखनीय है कि 2004 के चुनाव में राष्ट्रीय दलों को कुल मिलाकर 345 स्थान मिले थे जबकि इस बार उन्हें 343 स्थान मिले इसलिए काँग्रेस को भारी विजय और यूपीए की संख्या बढ़ने से यह निष्कर्ष निकालना उपयुक्त न होगा कि 2009 के चुनाव के बाद क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का जनाधार समाप्त हो गया।

ऐसा लगता है कि 2009 के चुनाव में मुस्लिम मतदाता किसी एक राजनीतिक दल का वोटबैंक न रहकर विभिन्न गैर साम्प्रदायिक दलों में विभाजित हो गए। काँग्रेस से टूटने के बाद विगत दो दशकों में मुसलमान समाजवादी दल का वोटबैंक बन गया था लेकिन कई कारणों से इस चुनाव में मुसलमानों पर से समाजवादी दल का एकाधिकार समाप्त हो गया और उनका बहुत बड़ा प्रतिशत काँग्रेस से पुनः जुड़ गया। मुसलमान समाजवादी दल से कितना नाखुश था इसका संकेत इस तथ्य से भी मिलता है कि उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी के कुल 12 मुस्लिम उम्मीदवारों में से एक मुसलमान भी चुनाव नहीं जीत सका।

जनता पार्टी ने इस चुनाव में भी 2009 के चुनाव में भी काँग्रेस पार्टी की अप्रत्याशित सफलता के अनेक कारण बताए जाते हैं लेकिन इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि अपने पाँच साल के कार्यकाल में कांग्रेस नेतृत्व में और विशेषकर डॉ. मनमोहन सिंह ने हर संकट के मौके पर जिस गंभीरता, सौम्यता और सहनशीलता का प्रदर्शन किया उसने कहीं न कहीं मतदाताओं में यह उम्मीद जगा दी कि कांग्रेस नेतृत्व ही देश को एक स्थायी सरकार प्रदान कर सकता है। भाजपा की मस्जिद–मन्दिर मुद्दा उन्हें आकर्षित न कर सका। उन्हें एक ऐसी सरकार की

तलाश थी जो उनकी जान–माल की हिफाजत कर सके जो गरीबी, बेरोजगारी, बीमारी जैसी मौलिक समस्याओं का हल निकाल सके तथा जो आतंकवाद और आर्थिक मंदी से छुटकारा दिला सके। कांग्रेस पार्टी के पांच वर्ष के शासन ने मतदाताओं पर यह छाप अवश्य छोड़ी की कांग्रेस विकास और स्वच्छ तथा पारदर्शी प्रशासन की पक्षधर है।

गैर कॉंग्रेसी दलों, विशेषकर साम्यवादी दलों ने डॉ. मनमोहन सिंह की सरकार के कार्य संचालन में जिस तरह की अड़चनें पैदा कीं उससे आम मतदाता का उन पर विश्वास कम होता गया। यही नहीं चुनाव अभियान के दौरान गैर कांग्रेसी राजनीतिक दलों ने एक दूसरे के खिलाफ जिस प्रकार की अश्लील भाषा का प्रयोग और प्रोपगंडे के घटिया तरीकों का इस्तेमाल किया उसका मतदाताओं पर बहुत खराब प्रभाव पड़ा। इसके विपरीत कांग्रेस ने शालीनता का परिचय दिया। चुनाव से कुछ दिन पहले से जिस प्रकार विभिन्न राजनीतिक दल और दल परिवर्तन हुए उससे भी मतदाताओं को यह संदेश गया कि यह सभी राजनीतिक दल और उनके नेता स्वार्थों, अवसरवादी और सत्ता के भूखे हैं और उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत 2004 के चुनाव के बाद सोनिया गाँधी ने जिस तरह प्रधानमंत्री के पद को ठुकराया, उसको भी मतदाता नहीं भूले थे।

सन्दर्भ :–

1. रॉय, एम.पी. "भारतीय सरकार एवं राजनीति" कॉलेज बुक डिपों, जयपुर 1980 पृष्ठ संख्या–686
2. तत्रैव पृष्ठ संख्या–638
3. तत्रैव पृष्ठ संख्या–639
4. इंडिया टूडे, अप्रैल 1997, पृष्ठ संख्या 42
5. इंडिया टूडे, 5 मई 1997, पृष्ठ संख्या 28
6. चतुर्वेदी, गीता "भारतीय राजनीतिक व्यवस्था" पंचशील प्रकाशन, जयपुर 2010 पृष्ठ संख्या–382
7. तत्रैव पृष्ठ 383
8. इंद्रजीत "पॉलिटिकल होलोस्ट्री "द टाइम्स ऑफ इंडिया" नबम्बर 18,1996 पृष्ठ संख्या–12
9. भारत के लोकसभा के छठें साधारण निर्वाचन की रिपोर्ट ''भारत निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली''
10. सईद, प्रो. एस.एम. 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' भारत बुक सेन्टर, लखनऊ, 2009, पृष्ठ संख्या–282
11. नवभारत टाइम्स 9, 1979 पृष्ठ संख्या–1–5
12. प्रसाद, अनिरूद्ध ''सप्तम संसदीय निर्वाचन (घोषणा पत्र, मतदान एवं लोकतंत्र का भविष्य) लोकतंत्र समीक्षा, पृष्ठ संख्या–12
13. तत्रैव पृष्ठ–13 एवं दि हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली दिसम्बर 3, 1979
14. दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, सितम्बर 26, 1979
15. भारत में लोकसभा के 7वें निर्वाचनों की रिपोर्ट 'भारत निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली'।
16. सईद प्रो.एस.एम.तत्रैव पृष्ठ संख्या–284

17. सईद, प्रो.एस.एम.तत्रैव पृष्ठ संख्या–285
18. 'भारत में लोकसभा के 8वें साधारण निर्वाचनों की रिपोर्ट' भारत निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली'
19. 'भारत में लोकसभा के 9वें साधारण निर्वाचनों की रिपोर्ट' भारत निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली'
20. सईद, प्रो.एस.एम.तत्रैव पृष्ठ संख्या–288
21. 'भारत में 10वें साधारण निर्वाचनों की रिपोर्ट', भारत निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली।
22. सईद, प्रो.एस.एम.तत्रैव पृष्ठ संख्या–290
23. भारत में लोकसभा के 11वें साधारण निर्वाचनों की रिपोर्ट ''भारत निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली''
24. सईद, प्रो.एस.एम. तत्रैव पृष्ठ संख्या–292
25. तत्रैव
26. 'भारत में लोकसभा के 12वें निर्वाचनों की रिपोर्ट' भारत निर्वाचन आयोग, दिल्ली।
27. सईद, प्रो.एस.एम. तत्रैव पृष्ठ संख्या–294
28. सईद, प्रो.एस.एम. तत्रैव पृष्ठ संख्या–295
29. 'भारत में लोकसभा के 13वें निर्वाचनों की रिपोर्ट' भारत निर्वाचन आयोग, दिल्ली''।
30. 'भारत में लोकसभा के 14वें निर्वाचनों की रिपोर्ट' भारत निर्वाचन आयोग, दिल्ली।
31. सईद, प्रो.एस.एम.तत्रैव पृष्ठ संख्या–297
32. सईद, प्रो.एस.एम.तत्रैव पृष्ठ संख्या–298
33. 'भारत में लोकसभा के 15वें निर्वाचनों की रिपोर्ट' भारत निर्वाचन आयोग, दिल्ली।

अध्याय सप्तम

मूल्यांकन

25 जून 1975 के आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों का मूल्यांकन

अध्याय सप्तम् – मूल्यांकन

25 जून 1975 के आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों का मूल्यांकन

भारत में आपातकाल तीन बार लगाया गया है। आपातकाल राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियों के अन्तर्गत आता है जिसका उल्लेख अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत किया गया है।

प्रथम आपातकाल सन् 1962 में भारत पर चीन के आक्रमण के कारण लगाया गया था।

अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत आपातकाल दूसरी बार सन 1971 में लागू किया गया था। 3 दिसम्बर 1971 को पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। उस समय भारत के राष्ट्रपति ने संकटकालीन स्थिति की घोषणा कर दी।

अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत तीसरी बार 25 जून 1975 को लागू किया गया था जो कि 21 मार्च 1977 तक रहा। यह आपातकाल अन्य दो आपातकाल से भिन्न था। 1962 तथा 1971 का आपातकाल बाह्य आक्रमण के कारण लगा था। लेकिन तीसरी बार आपातकाल आन्तरिक कारणों से लगाया गया था। सन 1975 में आपातकाल में संकटकालीन शक्तियों का दुरूपयोग किया गया था। 25 जून 1975 को राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने आतंरिक संकटकालीन स्थिति की घोषणा की। यद्यपि माना जाता है कि आपातकाल की घोषणा रेडियो पर पहले कर दी गई तथा बाद में सुबह मंत्रिमण्डल की बैठक के बाद उस पर राष्ट्रपति ने हस्ताक्षर किये। यद्यपि संवैधानिक प्रावधान है कि मंत्रिमण्डल की बैठक के बाद उसकी अनुशंषा पर राष्ट्रपति हस्ताक्षर कर देते हैं तब आपातकाल की घोषणा की जा सकती है।

25 जून 1975 को तत्कालीन राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने आतंरिक संकटकाल स्थिति की घोषणा की दी। उसके पश्चात स्वतंत्रता सम्बन्धी

मौलिक अधिकार निलम्बित कर दिये।

1971 में इंदिरा गाँधी अपने प्रतिद्वन्दी राजनारायण (उस समय समाजवादी ने और बाद में राष्ट्रीय जनता पार्टी के नेता) को एक लाख से भी अधिक मतों से पराजित करके रायबरेली (उ.प्र.) लोकसभा के लिए विजयी घोषित की गई। राजनारायण ने 24 अप्रेल 1971 में याचिका दायर की जिसमें उन्होंने कि इन्दिरा गाँधी पर निम्नलिखित आरोप लगाए –

1– इन्दिरा गाँधी ने चुनाव पूर्व मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए उन्हें कम्बल, धोतियाँ आदि बांटी।

2– चुनाव पर लगभग 15 लाख रू. खर्च किये जबकि चुनाव खर्च 75,000 रू. से अधिक नहीं होना चाहिए।

3– स्थल सेना और वायु सेना के विमानों और हेलीकॉप्टरों का चुनाव अभियान के दौरान प्रयोग किया गया।

4– मतदाताओं को मतदान केन्द्रों पर लाने के लिए सरकारी वाहनों का प्रयोग किया गया।

5– सरकारी कर्मचारी को चुनाव अभियानों में शामिल किया गया।

6– धार्मिक चित्र गाय और बछड़ों को पार्टी चिन्ह बनाया गया।

चुनाव कार्यों के लिए सरकारी अधिकारियों की सेवाओं के दुरूपयोग के सम्बन्ध में मुख्य आरोप यह लगाया था कि इन्दिरा गाँधी ने यशपाल कपूर की सेवाऐं ली जबकि वे केन्द्रीय सरकार के एक कर्मचारी थे और वे प्रधानमंत्री के सचिवालय में विशेष ड्यूटी पर नियुक्त अधिकारी के रूप में कार्य करते थे।

7– 24 जून 1975 को उच्चतम न्यायालय के अवकाश पीठ ने प्रधानमंत्री की अपील पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय को स्थगित करने के लिए एक आदेश जारी कर दिया जिसमें कहा गया कि इंदिरा गाँधी की अपील या निर्णय तक प्रधानमंत्री के रूप में कार्य कर सकती है और संसद की कार्यवाही

में भाग ले सकती है। पर मतदान में भाग नहीं ले सकती। 25 जून 1975 को जयप्रकाश के नेतृत्व में साम्यवादी दल को छोड़कर अन्य विरोधी दल (संगठन कांग्रेस, जनसंघ समाजवादी दल और भारतीय लोकदल इत्यादि) ने इंदिरा गाँधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए बड़ा व्यापक आंदोलन छेड़ने की घोषणा की। स्थिति बड़ी गम्भीर थी। इस पर प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने अपने सहयोगी मंत्रियों, मुख्यमंत्रियों और अन्त में राष्ट्रपति से विचार किया और 25 जून 1975 को आंतरिक आपातकाल लगा दिया गया जो कि 21 मार्च 1971 तक लगभग 21 महीने तक रहा।

इंदिरा गाँधी ने 1 जुलाई 1975 का प्रगतिशील सामाजिक, आर्थिक रूपान्तरणों के अन्तर्गत 20 सूत्रीय कार्यक्रम की जांच मूलतया भूमि सुधार कार्यक्रम को तेज करने खेतिहर मजदूरों की घोषणा की स्थिति में सुधार करने ऋणदासता आदि का उन्मूलन करने की ओर निर्देशित था।

आपातकाल की अवधि में भारतीय साम्यवादी पार्टी ने सरकार की नीतियों की समर्थन की घोषणा की और 20 सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सरकार के साथ सहयोग करने का निर्णय लिया गया। किसान सभा तथा खेत मजदूर संघ ने यह निर्णय लिया गया कि सन 1975–76 में 20 सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए पदयात्राऐं की जायें ताकि पता चल सके कि अधिकांश ग्रामीणों की स्थिति घोषित कार्यवाहियों से प्रभावित हुई या नहीं। इसमें एक कार्यक्रम नसबंदी कार्यक्रम था इमरजेंसी इतनी खराब थी और उसमें अत्याचार हुए नवयुवकों को पकड़–पकड़ कर नसबंदी की गई। दरअसल संजय गाँधी और इंदिरा गाँधी को लगा कि जिस प्रकार चीन में सख्ती के साथ विकास को धार दी गई उसी प्रकार भारत में यह चमत्कार करके दिखा दें। गांव में डॉक्टरों ने नसबंदी के आंकड़ें को पूरे करने के लिए जिस प्रकार फर्जी तरीके से नसबंदी की और झूठे आंकड़े पेश किए उसी से लोगों में गुस्सा और कांग्रेस के खिलाफ नफरत फैली ऐसा

नहीं है कि इमरजेंसी का पूरे देश में एक जैसा विरोध हुआ सन् 1977 में चुनाव में कांग्रेस का उत्तर भारत में सफाया हो गया। वहीं दक्षिण के प्रदेशों में कायम रही इंदिरा गांधी रायबरेली में राजनारायण के हाथों पराजित होने के बाद दक्षिण भारत में चुनाव जीत गई।

इमरजेन्सी का यह पहलू आज भी हमें याद है कि और उस पर हर साल चर्चा होती है और कहते हैं कि वह खराब थी। लोकतंत्र की हत्या थी लेकिन उस पहलू को कोई याद नहीं रखना चाहता जिसने देश की कानून व्यवस्था प्रशासन और सरकारी कामकाज को उस वक्त करने की सख्ती अपनायी आज के माहौल में यदि हम उसी पहलू की विवेचना करें तो गलत नहीं होगा। 20 सूत्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत मैने 1977 के जनता पार्टी से भरतपुर लोकसभा सांसद पण्डित रामकिशन एवं प्राध्यापक ओमप्रकाश गुप्ता जी का साक्षात्कार लिया है।

आपातकाल की घोषणा के साथ ही भारतीय राजनीति में नये युग का श्री गणेश हुआ। देश के प्रमुख विपक्षी नेताओं और इन दलों के सक्रिय कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। आन्तरिक सुरक्षा कानून और सेंसरशिप लागू कर दी गई। आपातकाल के दौरान विपक्ष पार्टी के नेताओं पर जो अत्याचार हुए इतिहास के काले पन्ने को आज भी याद किया जाता है। इस पर समय–समय पर विभिन्न लेख प्रकाशित होते हैं जिनमें विपक्षी पार्टी के नेताओं के साथ जो व्यवहार कांग्रेस पार्टी द्वारा किया गया। उसका विस्तार से वर्णन किया जाता है।

आपातकाल के दौरान अटलबिहारी वाजपेयी द्वारा जेल में रहते हुए कविता लिखी गई। आपातकाल लागू होने के बाद पुलिस ने ज्यादतियाँ करना शुरूकर दिया। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता खेमचन्द की गिरफ्तारी को पुलिस पीछे पड़ी थी। जब खेमचन्द जी नहीं मिले तो उनके भाई लक्ष्मण सिंह को भी उठा लिया। इसी तरह विश्व हिन्दू परिषद के शीर्ष नेता आचार्य गिरिराज किशोर की गिरफ्तारी के लिए उनके परिजनों पर दबाव बनाया गया। वयोवृद्ध

भाजपा नेता गेंदालाल गुप्ता बताते हैं कि जो लोग जेल चले गये। उनके परिजन पुलिस उत्पीड़न से मुक्त रहते थे जो भूमिगत थे। उनके परिवारों में आए दिन दबिशें पड़ती थीं। पुलिस लोकतंत्र के प्रहरियों से शातिर अपराधी की तरह व्यवहार करती थी।

आपातकाल का नाम सुनते ही प्रसिद्ध कवि देवकीनन्दन कुम्हेरिया की बूढ़ी आँखों में लाल डोरे पड़ गये। उन्होंने बताया कि देश के सिपाहियों ने बेदर्द तरीके से बन्दूकों की बंटों और लाठी डण्डों से पिटाई करते हुए सड़कों पर घुमाया जेल में प्रताड़ित किया। डॉ. फूलचन्द जैन बताते हैं कि नारेबाजी करते हुए थाने पहुंचे तो पुलिस वाले डंडे पीटते हुए दानघाटी मंदिर तक लाये और वहाँ से थाने तक ले गये फिर करीब तीन घंटे तक थाने में पिटाई की और मरणासन्न स्थिति से पहुँचा दिया।

नेमीचन्द अग्रवाल बताते हैं कि जितने नारे लगाए उतने ही डंडे पड़े। महीनों तक शरीर के अंगों ने कार्य करना छोड़ दिया। सुरीर के आर.एस.एस. कार्यकर्ता 84 वर्षीय बृजकिशोर वार्ष्णेय ने इमरजेंसी की काली यादें ताजा करते हुए कहा कि इमरजेंसी के दौरान पुलिस तरह–तरह की यातनाऐं दे रही थीं। उनके पकड़ने के लिए पुलिस घूम रही थी। कई बार घर पर दबिशें दी इससे बचने के लिए टी.बी. सेनेटियम अस्पताल वृन्दावन में जाकर भर्ती हो गये। यहीं पर 6 माह तक मरीज के रूप में पड़े रहे। आपातकाल के दौरान जेल में रहे गांव मुसमुना निवासी चौ. योगेन्द्र सिंह ने बताया कि आपातकाल की घोषणा होते ही वह खुद भगत भकरेलिया निवासी चौ. चतुर सिंह के नेतृत्व में, चौ. लटुर सिंह फिरोजपुर, चौ. हुकम सिंह सीगोनी, बंशो सिंह मुसमुना के साथ प्रदर्शन के लिए नौहझील आये। यहीं पर उन्हें गिरफ्तार कर मथुरा जेल भेज दिया।

कतरा बी आरजू लेखक राही मासूम रजा ने अपनी इस पुस्तक के माध्यम से आपातकाल की आलोचना की।

मिडनाइट्स चिल्ड्रन बुकर पुरस्कार से सम्मानित लेखक सलमान रूश्दी के इस चर्चित उपन्यास का एक नायक सलीम सिनाई नाम का एक व्यक्ति है। आपातकाल के दौरान किस प्रकार तक सरकारी योजनाओं से प्रभावित होता है। उपन्यास में इसका जिक्र है।

फाइन बैलेन्स व सच –अ लोग जनी रोहिटन मिस्त्री ने अपनी पुस्तकों में आपातकाल में लोगों के ऊपर हुए ज्यादतियों का किस्सा बयां किया है। पुस्तक पारसी संस्कृति के नजरिये से लिखी गई है।

इंडिया अ टूडेड सिविलाइजेंशन – बी.एस. नायपाल की यह पुस्तक आपातकाल के दौरान देश का हाल बयान करती है।

बहुत से लोग यह मानते हैं कि जम्मू कश्मीर की विधानसभा का कार्यकाल छह साल का सिर्फ अलग संविधान और धारा 370 के कारण हैं लेकिन यह आधा सच है। आपातकाल के दौरान ही इंदिरा गाँधी ने छह साल की विधानसभा और संसद का कानून लगाया था। उस समय कांग्रेस की मदद से शेख मुहम्मद अब्दुल्ला की सरकार चल रही थी। शेख अब्दुल्ला ने यह कहकर की हम पूरे देश के साथ चलना चाहते हैं सन 1977 राज्य विधानसभा में संशोधन प्रस्ताव लाया और उसके बाद से अब तक छह वर्ष की विधानसभा है।

आपातकाल के दौरान रामबाबू भाटिया कई स्थानों पर छिपते रहे पीछे से उनकी घर की कुर्की हो गई। इसके बाद उनकी भाटिया वॉच कम्पनी की दुकान को कुर्की हो गई। तब पुलिस इस दुकान से 12 टन घड़ियों का माल ले गई थी।

डी.आई.आर. के विरूद्ध पूर्व नगरपालिका अध्यक्ष वीरेन्द्र अग्रवाल इमरजेंसी के दौरान शांति मार्केट में बैठे थे तभी पुनेठा नाम का दरोगा आया उसे कोतवाली में ले जाकर विभिन्न धाराओं में पाबन्द कर जेल भेज दिया। लोकतंत्र सेनानियों के कोतवाली में नाखून और सिर के बाल तक नोचें गये।

आपातकाल का विरोध मींसा और डी.आई.आर. के तहत जेलों में बंद रहे थे। ऐसे नेताओं में ज्यादातर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और जनसंघ से जुड़े हुए थे।

अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल लागू होन के बाद इंदिरा गाँधी को असाधारण शक्तियाँ मिल गयी। विपक्षी नेताओं जयप्रकाश नारायण, लालकृष्ण आडवाणी, चरण सिंह, मोरारजी देसाई, राजनारायण के अलावा सैकड़ों नेताओं, कार्यकर्ताओं को मींसा एक्ट के तहत गिरफ्तार कर लिया। तमिलनाडु में एम. करूणानिधि सरकार को बर्खास्त कर दिया गया। कई राजनीतिक दलों को प्रतिबंधित कर दिया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे संगठनों को प्रतिबंधित कर दिया।

लोकतंत्र की मजबूती के लिए मीडिया की आजादी से सीधा संबंध है। स्वस्थ लोकतंत्र की धमनियों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता रक्त की तरह बहती है और निष्पक्ष मीडिया लोकतंत्र का हृदय है जो सुनिश्चित करता है कि रक्त संचार सुचारू रूप से होता रहे। यही कारण है कि जब भी लोकतंत्र को कमजोर या उसकी हत्या करने की कोशिश की गयी। पहला बार मीडिया की आजादी पर किया गया। कोई भी तानाशाह स्वतंत्र मीडिया का पक्षधर कभी नहीं हो सकता। तानाशाही में भय और आतंक के विरूद्ध डटकर खड़ी होने वाली मीडिया को बेरहमी से कुचला जाता है। भारत में भी आपातकाल के बहाने तानाशाही का ऐसा भी रूप देखा है। ठीक 40 वर्ष पहले 25 जून 1975 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने भारत में आपातकाल लगाया। आपातकाल के लगते ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू हो गया। प्रेस को साफ संदेश दिया गया था कि उनको इंदिरा इज इंडिया एण्ड इण्डिया इज इंदिरा मानना होगा। कुछ ने झुकने से साफ इंकार कर दिया। कई ऐसे भी थे जो रेंगने लगे फिर क्या था भारतीय मीडिया के इतिहास को सबसे काला अध्याय बन गया। आपातकाल का वह दौर।

आपातकाल की घोषणा के साथ ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू कर दी गई। स्वतंत्रता के बाद ऐसा पहली बार हुआ था। प्रेस पर पूर्ण सेंसरशिप लगाई गई थी। सभी अखबारों के सम्पादकों पर आपातकाल के दौरान की गई ज्यादतियों की खबर ना छापने के लिए दबाव बनाया गया। बड़ी संख्या में पत्रकार इस दबाव के

आगे नतमस्तक हो गये। मीडिया में सत्ता की चापलूसी करने वाले पत्रकारों ने भारतीय पत्रकारिता को हमेशा के लिए शर्मिन्दा कर दिया।

अधिकतर अखबारों में केवल सरकारी विज्ञप्तियों को ही खबर की तरह छापा जा रहा था। मीडिया में आपातकाल और सरकार विरोधी खबरों के लिए कोई जगह नहीं थी। खबरों को छापने से पहले सरकारी अधिकारी को दिखाना आवश्यक था। किसी भी खबर को बिना सूचित किये नहीं छापा जा सकता था।

इससे कई अखबारों ने मजबूरी में आपातकाल का विरोध नहीं किया। 9 जुलाई 1975 को दिल्ली के 47 सम्पादकों ने देश में समाचार पत्रों पर लगाये गये सेंसरशिप और इंदिरा गाँधी की नीतियों पर अपना समर्थन व्यक्त किया।

इन सरकारी शिकंजे के बावजूद बड़ी संख्या में ऐसे भी पत्रकार थे जिन्होंने अपने जमीर पर दाग नहीं लगने दिया। प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष करते हुए कुलदीप नैयर, सूर्यकान्त बाली, विक्रमराव, वीरेन्द्र कपूर, श्याम खोंसला, देवेन्द्र स्वरूप, रतन मलकायी और दीनानाथ मिश्र जैसे पत्रकारों ने जेल की यातनाएें झेलीं। कुल 327 पत्रकारों को मींसा कानून के अन्तर्गत जेल में बंद कर दिया गया। कई अखबारों और पत्रकारों ने अपने तरीके से प्रेस पर सेंसरशिप का विरोध किया। कुछ संपादकों ने संपादकीय का स्थल खाली छोड़कर सरकार का विरोध किया। कुछ ने संपादकीय के स्थान पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में महापुरुषों की उक्तियों को छापा। सरिता में 6 महीने तक कोई सम्पादकीय कॉलम नहीं छपा। सरिका ने जुलाई 1975 के अंक में संपादकीय को सेंसर अधिकारी द्वारा काला किए गए वाक्यों और शब्दों सहित हूबहू प्रकाशित कर दिया। इस अंक में 27–28 संख्या के पृष्ठ लगभग पूरी तरफ काले थे।

प्रेस में प्रतिबंध को लेकर ऐसा भय का वातावरण बना कि सेमिनार और अधिनियम जैसे अनेक पत्र–पत्रिकाओं को अपने प्रकाशन बंद करने पड़े। सरकार ने 3801 समाचार–पत्रों के डिक्लेरेशन जब्त कर लिये गये और 290 अखबारों के विज्ञापन बंद कर दिये गये।

आपातकाल से पहले देश में चार समाचार समितियाँ थीं। पीटीआई, यूएनआई, समाचार भारती और हिन्दुस्तान समाचार। सरकार ने इसे मिलाकर एक समिति समाचार का गठन किया। जिससे यह पूरी तरह सरकारी नियंत्रण में रहे। 18 दिसम्बर 1975 को अध्यादेश द्वारा प्रेस परिषद को समाप्त कर दिया गया। आपातकाल के दौरान आकाशवाणी और दूरदर्शन पर जनता का ऐसा विश्वास उठा कि लोग बीबीसी और वॉयस ऑफ अमेरिका सुनते थे।

ऐसा नहीं था कि सरकार ने विदेशी पत्रकारों को परेशान ना किया। ब्रिटेन के टाइम और गार्जियन के समाचार प्रतिनिधयों को भारत से निकाल दिया गया। रायटर सहित अन्य एजेन्सियों टेलेक्स और टेलीफोन काट दिये गये। 7 विदेशी संवाददाताओं को भारत छोड़ने का हुक्म सुनाया।

विरोध प्रदर्शन का तो सवाल नहीं उठता था क्योंकि जनता को जगाने वाले लेखक, कवि और फिल्म कलाकारों को नहीं छोड़ा गया। कहते हैं मीडिया, कवियों और कलाकारों को मुँह बंद करने के लिए नई बल्कि इनसे सरकार की प्रशंसा करवाने के लिए विद्याचरण शुक्ल सूचना प्रसारण मंत्री बनाये गये थे।

उन्होंने फिल्मकारों को सरकार की प्रशंसा में गीत लिखने और गाने पर मजबूर किया। ज्यादातर झुक गये लेकिन किशोर कुमार ने आदेश नहीं माना। उनके गाने रेडियो पर बजने बंद हो गये। उनके घर पर आयकर के छापे पड़े। अमृत नाहटा की फिल्म ''किस्सा कुर्सी का'' को सरकार विरोधी मानकर उनके सारे प्रिंट जला दिये गये। गुलजार की आवाज पर भी पाबन्दी लगाई गई। आपातकाल का यह दौर लगभग 21 माह अर्थात् 25 जून 1975 से 21 मार्च,1977 तक रहा। छठे आम चुनाव कराये जाने की आकस्मिक घोषणा ने विभिन्न प्रतिपक्षी राजनीतिक दलों के समक्ष गहन चुनौती उत्पन्न कर दी गई और आपसी विलय की विचारणा को अनिवार्य बना दिया। आपातकाल के दौरान प्रतिपक्षी नेताओं को आपसी विचार विमर्श का अनायास अवसर मिल गया था। जेल से छूटकर बाहर आये नेताओं के लिए यथार्थ को टालने

या बंटे बिखरे रहने के कारण स्वयं अपने अस्तित्व का विलोप का खतरा साफ था अतः उनके अपने पृथक अस्तित्व को समाहित करने तथा देश में व्याप्त राजनीतिक अभिशाप की स्थिति को समाप्त की प्रेरणा सबल बन गई। सौभाग्य से जयप्रकाश नारायण जैसे प्रभावी नेताओं का नेतृत्व भी सुलभ हुआ और जो कार्य वर्षों में नहीं हो पाया वह अवसरजन्य स्थिति के कारण कुछ दिनों में संभव हो गया। अन्ततः चार विपक्षी दलों (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल समाजवादी दल) ने मिलकर मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी का गठन किया। इसी बीच कृषि मंत्री श्री जगजीवनराम ने मंत्रिमण्डल व कांग्रेस की सदस्यता से इतनी लम्बी सेवा करने के बाद अचानक त्याग–पत्र दे दिया तथा लोकतांत्रिक कांग्रेस का गठन करके जनता पार्टी के सहयोग से चुनाव लड़ने की घोषणा की।

विभिन्न पार्टीयों द्वारा घोषणा पत्र जारी किये। इसमें जनता पार्टी का घोषणा पत्र, भारतीय साम्यवादी दल का घोषणा पत्र, मार्क्सवादी साम्यवादी दल का घोषणा पत्र, क्षेत्रीय दलों के घोषणा पत्र।

10 फरवरी, 1977 को जनता पार्टी के उपाध्यक्ष चौधरी चरण सिंह ने अपने का चुनाव घोषणा पत्र जारी किया। घोषणा पत्र में आपातकाल के दमनचक्र, परिवार नियोजन की ज्यादतियाँ, सत्ता के केन्द्रीयकरण और मौलिक अधिकारों के हनन के लिए सरकार की निन्दा की गई।

21 फरवरी 1977 को लोकतंत्री कांग्रेस महासचिव हेमवती नन्दन बहुगुणा ने अपने दल का घोषणा पत्र जारी किया। 10 पृष्ठीय इस घोषणा पत्र में आपातस्थिति को तत्काल समाप्त करने, आतंरिक सुरक्षा कानून को वापिस लेने, राजनीतिक बंदियों को तत्काल रिहा करने, आपत्तिजनक सामग्री के प्रकाशन पर प्रतिबंध समाप्त करने आदि की घोषणा की गई।

9 फरवरी 1977 को भारतीय साम्यवादी दल का चुनाव घोषणा पत्र जारी किया। घोषणा पत्र में चुनाव का महत्व, आपातकालीन स्थिति का समर्थन, आपातकाल

के बाद उभरती नकारात्मक प्रवृत्तियों का विरोध किया।

मार्क्सवादी साम्यवादी दल ने अपने चुनाव घोषणा पत्र में आपातस्थिति को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं करने, आतंरिक सुरक्षा कानून को जारी रखने, अदालतों को अधिकारों से वंचित रखने, प्रेस को नियंत्रित करने, 42वें संविधान संशोधन द्वारा संघीय स्वरूप को क्षतिग्रस्त करने, जीवनोपयोगी वस्तुओं के मूल्य बढ़ाने कार्यपालिका पर संसद की सर्वोच्चता को समाप्त करने, सरकारी कर्मचारियों और मजदूरों की मँहगाई, भत्ते, वेतन और बोनस को रोकने, बढ़ती बेरोजगारी दमनात्मक परिस्थितियों में लोकसभा चुनाव सम्पन्न कराने, जबरदस्ती नसबन्दी कराने और अन्य अपराधों के लिए कांग्रेस सरकार को उत्तरदायी ठहराते हुए उसकी निन्दा की।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि देश में आजादी से लेकर 1975 तक कांग्रेस का एकछत्र शासन था। पहली बार केन्द्र में गैर कांग्रेस सरकार बनी। आपातकाल की ज्यादतियों ने जनता पर इतना गहरा आघात पड़ा। निश्चित रूप से इन चुनाव परिणामों पर भारतीय मतदाताओं की राजनीतिक परिपक्वता और दक्षता सामने आई। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत में लोकतन्त्र ही शासन का एकमात्र विकल्प है और वंशानुगत राजवंश के लिए कोई स्थान नहीं है। भारतीय जनता ने मतपत्रों से एक शांतिपूर्ण क्रांति करते हुए अपनी लोकतांत्रिक सिद्धान्तों और प्रतिक्रियाओं के प्रति अपने अटूट विश्वास को प्रदर्शित किया साथ ही प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी की पराजय भारतीय राजनीति के इतिहास में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन की तरफ संकेत करती थी। इसके अतिरिक्त अनेक केन्द्रीय मंत्रियों और कांग्रेस के शीर्षस्थ पदाधिकारियों और नेताओं की पराजय आपातकाल के विरूद्ध जन विरोध की उग्रता प्रदर्शित करती है। चुनाव परिणामों ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि भारत में संसदीय शासन प्रणाली का एकमात्र विकल्प है।

इन चुनाव परिणामों को इंदिरा गाँधी की व्यक्तिगत पराजय का नाम भी दिया गया क्योंकि कांग्रेस की शक्ति का आधार उन्हीं के करिश्मे पर टिका हुआ

था। भारतीय जनता ने अपने ऐतिहासिक निर्णय से लोकतांत्रिक मूल्यों को प्राथमिकता देते हुए व्यक्तिदायी और करिश्मावादी राजनीति को अस्वीकार कर दिया।

साधारण व्यक्तियों ने अपने मताधिकार से यह सिद्ध कर दिया कि वे समय आने पर ऐतिहासिक और क्रांतिकारी निर्णय ले सकते हैं। कांग्रेस के लिए यह चुनाव परिणाम वज्रपात बनकर सामने आया। इससे न केवल भारतीय राजनीति पर तीस वर्षों से चला आ रहा कांग्रेस का एकाधिकार ही समाप्त हो गया अपितु केन्द्र में गैर कांग्रेस शक्तियों का विजय एक नये युग का श्री गणेश कर दिया जनता पार्टी की जीत के बाद जनता पार्टी की सरकार ने बहुमत खो दिया और जनता पार्टी का विभाजन हो गया। भाजपा का निर्माण हुआ। कांग्रेस की कांग्रेस (ई) हो गयी। अनेक पार्टीयां बनीं और बिगड़ी आज केन्द्र की राजनीति एन.डी.ए. (नेशनल डेमोक्रेटिव अलाइन्स) और यू.पी.ए. (यूनाइटेड प्रोगेशिव अलाइन्स) के बीच है।

साक्षात्कार

एक साक्षात्कार – पंडित रामकिशन के साथ

(आपातकाल के दौरान विरोधी दल के नेता के साथ शोधार्थी योगेन्द्र सिंह का साक्षात्कार)

नाम – पंडित रामकिशन

1975 – विधायक (संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी), विधानसभा–भरतपुर

1977 – सांसद (जनता पार्टी), लोकसभा क्षेत्र भरतपुर

जन्म – संवत 1983 फागुन, जाति – ब्राह्मण

आपातकाल में विरोधी दल के नेता पंडित रामकिशन के साथ मेरी बातचीत हुई। मैंने उनसे कुछ प्रश्न पूछे। उन्होंने मेरे द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर भी दिये। इस प्रकार हमारे मध्य बातचीत का जो क्रम रहा, वह इस प्रकार है :–

प्रश्न – आपातकाल के दौरान 20 सूत्री कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा सरकार के सामने क्या थी ?

उत्तर – बाधा यह थी कि सिनसियरिटी नहीं थी। सरकार में इच्छा शक्ति नहीं थी। आपातकाल के बाद जो कार्यक्रम बनाया गया था उसे रोकने वाला कोई नहीं

था। विरोध नाम की कोई चीज नहीं थी। जैसे भूमि का बंटवारा, कई चीज ऐसी थी जो आवश्यक थी। जमींदारी उन्मूलन के उद्देश्य को पूरा नहीं किया गया। उनके बाद उम्मीद यह थी कि भूमि का बंटवारा कार्यक्रम को पूरा नहीं किया गया। सरकार की इच्छा शक्ति और सिनसियरिटी नहीं थी।

प्रश्न — समस्या के निवारण के लिए क्या प्रभावी कदम उठाये ?

उत्तर — समस्या के समाधान के लिए कार्यक्रम की समीक्षा होती रही। सरकार के विभाग, उनके बाद मंत्रालय बनाया गया। मंत्री इस बात को देखते थे कि कार्यक्रम किस सीमा तक पूरा हो रहा है। किस सीमा तक पूरा नहीं हो रहा है। समस्या तो हर कार्यक्रम में आती है। हर काम में आती है। समीक्षा के बाद भी यह हो रहा है। इसका मतलब समीक्षा भी सही ढंग से नहीं की गई।

प्रश्न — आपातकाल में सरकार, प्रशासन और जनता के बीच समन्वय की स्थिति कैसी थी ?

उत्तर — सरकार के बीच और जनता के बीच संवाद बिल्कुल टूट गया था। केवल प्रशासन सरकारी आदेशों की पालना करता था। इसके अलावा प्रेस पर पाबंदी थी। न तो सीधा संवाद होता था न समाचार के माध्यम से होता था। एकतरफा चीजें चलती थी। जैसे आजकल भी चल रही है।

प्रश्न — सामाजिक सुरक्षा के लिए नीतिगत ढांचे में क्या बदलाव किया गया था ?

उत्तर — दिखाने के लिए जैसे बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। उससे लाभ यह हुआ जो बैंकों से ज्यादातर लोन उद्योगपति लेते थे। इससे एक कृषि के लिए कोटा तय कर दिया गया। जिससे किसानों को थोड़ा लाभ मिला, छोटे व्यवसाय को लाभ मिला। यह नीतिगत परिवर्तन था। यह भी पूरा होता, इसकी भी इच्छा शक्ति सरकार में नहीं थी।

प्रश्न – जन–जन स्वास्थ्य के तहत बनाई गई नीतियों की पालना क्या आपातकाल के दौरान अधिक प्रबलता से की गई थी ?

उत्तर – परिवार नियोजन पर जोर दिया गया। परिवार नियोजन पर जो जबरदस्ती थी। उसकी वजह से लोगों में नाराजगी थी। यदि इसे समझा बुझाकर करते तो यह कार्यक्रम आज भी अच्छा है। बहुत बड़ी जरूरत है। इस कार्यक्रम की आज भी जरूरत है। चाहे आपातकाल में लागू किया हो। परिवार नियोजन देश की सबसे बड़ी जरूरत है। हर वर्ग पर हर समाज पर इसका असर होना चाहिए तभी इसका लाभ समाज को मिलेगा।

प्रश्न – 20 सूत्री कार्यक्रमों में पंचायतों की भागीदारी का स्तर क्या था ?

उत्तर – पंचायतों को धीरे–धीरे अधिकार दिये जा रहे हैं। आपातकाल में पंचायतों की कोई भागीदारी नहीं थी। केवल सरकारी कार्यक्रम थे जिससे जनता में भय था तथा जनता की सहभागिता थी।

प्रश्न – किसान मित्र एवं श्रमिक कल्याण की योजनाओं में क्रियान्वयन आपातकाल के दौरान कितनी सुनिश्चित हो पायी थी?

उत्तर – किसानों को लोन की सुविधा मिली थी। बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ जिससे किसानों को, छोटे व्यवसायी को हिस्सा तय कर दिया गया था।

प्रश्न – आपातकाल के दौरान शिक्षा, चिकित्सा, रोड़वेज व अन्य सरकारी सेवाओं की स्थिति क्या थी ?

उत्तर – शुरू में जैसे आपातकाल में लोगों में भय था। सरकारी दफ्तरों में हाजिरी टाइम पर होने लगी। ट्रेनें चलने लगी। रोडवेज समय पर चलने लगी। जैसे–जैसे समय बीतता गया। जैसे देश का ढर्रा था वहीं आ गया। हम लोग जेलों में थे। दो–चार महीने चला, हम लोग सुनते थे। कर्मचारियों में डर था। धीरे–धीरे शिथिलता आने लगी।

प्रश्न – 20 सूत्री कार्यक्रम क्या आपातकाल के नकारात्मक स्वरूप को खत्म करने के लिए था?

उत्तर – कार्यक्रम जल्दी में बनाया गया। आलोचना हो रही थी। जो नसबन्दी थी। यह दिखाने के लिए कि मैं गरीबों की पक्षधर हूँ और 'गरीबी हटाओ' का नारा दिया गया उसके तहत गरीबों में यह मैसेज जाये।

प्रश्न – 20 सूत्रीय कार्यक्रम में स्वच्छता के नाम पर सरकार ने क्या कार्यवाही की?

उत्तर – दिल्ली में झुग्गी झोपड़ियों को हटाया गया। जो मुस्लिम बस्तियां थी। आपातकाल में दो कार्यक्रम थे। नसबंदी और झुग्गी झोपड़ियाँ। झुग्गी झोपड़ियों को हटाने की वैकल्पिक व्यवस्था नहीं थी।

एक साक्षात्कार – ओमप्रकाश गुप्ता के साथ

(आपातकाल के दौरान आम नागरिक के साथ शोधार्थी योगेन्द्र सिंह का साक्षात्कार)

नाम	–	**श्री ओमप्रकाश गुप्ता**
उम्र	–	**77 वर्ष**
जाति	–	**वैश्य अग्रवाल**
1975	–	**प्राध्यापक**
पता	–	**भरतपुर**

आपातकाल के दौरान आम नागरिक ओमप्रकाश गुप्ता के साथ मेरी बातचीत हुई। मैंने उनसे कुछ प्रश्न पूछे। उन्होंने मेरे द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर भी दिये। इस प्रकार हमारे मध्य बातचीत का जो क्रम रहा, वह इस प्रकार है :–

प्रश्न – आपातकाल के दौरान 20 सूत्री कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा सरकार के सामने क्या थी ?

उत्तर – इसमें मुख्य था नसबन्दी करना। वैसे देखा जाये तो नसबन्दी कार्यक्रम ठीक था परन्तु सरकारी अधिकारियों ने गैर जिम्मेदार तरीकों से इसे गलत दिशा में मोड़कर गलत रूप दे दिया एवं वाहवाही लूटने के प्रयास में अविवाहित व्यक्तियों, बच्चों व बूढ़ों तक की नसबन्दी कर दी गई जिससे पूरा देश पूर्ण रूप से इंदिरा गाँधी सरकार के विरूद्ध हो गया।

प्रश्न – समस्या के निवारण के लिए क्या प्रभावी कदम उठाये ?

उत्तर – श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए **"गरीबी हटाओ"** का नारा दिया।

प्रश्न – आपातकाल में सरकार, प्रशासन और जनता के बीच समन्वय की स्थिति कैसी थी ?

उत्तर – सरकार की तरफ से छूट मिलने के कारण प्रशासन ने भी जनता के ऊपर मनमाने तरीके से अत्याचार किये। विरोधी पार्टियों से सम्बन्ध बनाये रखने वाले सरकारी कर्मचारियों को नौकरी से निलम्बित किया गया। उनको बर्खास्त किया गया। गैर कांग्रेसी व्यापारी वर्ग पर छापे मारे गये। जनता में प्रशासन द्वारा भय का माहौल बनाया गया।

प्रश्न – सामाजिक सुरक्षा के लिए नीतिगत ढांचे में क्या बदलाव किया गया था ?

उत्तर – सरकार एवं प्रशासन द्वारा सामाजिक सुरक्षा के नाम पर किसी प्रकार का नीतिगत ढांचे में बदलाव नहीं किया गया बल्कि नागरिकों के मन में एक भय का वातावरण पैदा किया गया।

प्रश्न – जन–जन स्वास्थ्य के तहत बनाई गई नीतियों की पालना क्या आपातकाल के दौरान अधिक प्रबलता से की गई थी ?

उत्तर – जन स्वास्थ्य के तहत सरकार द्वारा कोई नई नीति नहीं बनाइ गई इतना जरूर था कि अस्पताल समय पर खुलने लगे थे। डॉक्टर लोग अस्पताल में समय पर आने जाने लगे थे तथा डॉक्टर जो अपने रूखे स्वभाव के लिए प्रसिद्ध हैं उनमें नरमाई देखने को मिलती थी। जन स्वास्थ्य में थोड़ा बहुत योगदान बीस सूत्री कार्यक्रमों ने दिया था।

प्रश्न – 20 सूत्री कार्यक्रमों में पंचायतों की भागीदारी का स्तर क्या था ?

उत्तर – बीस सूत्री कार्यक्रम जो कि सरकार द्वारा घोषित किय गये थे। इनको

लागू करने के लिए हर पंचायत समिति में होड़ मची हुई थी। इन कार्यक्रमों को केवल कागजों में ही पूरा किया जाता था। हर अधिकारी द्वारा मनगढन्त एवं झूठे आंकड़ें बढ़ा–चढ़ाकर राज्य सरकारों को प्रस्तुत किये जाते थे जबकि वास्तविक कार्य जनता की भलाई के लिए होते ही नहीं थे। इन्हीं झूठे आंकड़ों को सही मानकर अधिकारियों द्वारा जनता के पैसे को खूब लूटा जाता था। किये गये कार्य होते ही नहीं थे।

प्रश्न – किसान मित्र एवं श्रमिक कल्याण की योजनाओं में क्रियान्वति आपातकाल के दौरान कितनी सुनिश्चित हो पायी थी ?

उत्तर – किसान मित्र एवं श्रमिक कल्याण कार्यक्रमों की रूप रेखा बनाई जाती थी इन योजनाओं का खूब प्रचार–प्रसार किया जाता था विज्ञापनों पर खूब धन खर्च किया जाता था। 'गरीबी हटाओ देश बचाओ' का नारा खूब जोर से दिया जाता था परन्तु इसके विपरीत गरीब और गरीब होता चला गया। मजदूर एवं किसानों को रोजगार मिलना कठिन हो गया। केवल सरकारी फाइलों एवं कागजों एवं विज्ञापन में ही श्रमिक एवं किसानों का उत्थान दिखाया जाता था। उस समय की सरकार ने भी यह माना था कि देश में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर व्याप्त है तथा जो धन श्रमिक कल्याण एवं किसानों के हित के लिए दिया जाता है वह गरीबों तक पहुँचता ही नहीं है उस धन को बड़े–बड़े अधिकारी अपनी जेबों में डाल लेते थे।

प्रश्न – आपातकाल के दौरान शिक्षा, चिकित्सा, रोडवेज व अन्य सरकारी सेवाओं की स्थिति क्या थी ?

उत्तर – आपातकाल के दौरान, शिक्षा, चिकित्सा, रोड़वेज एवं अन्य सेवाओं पर अच्छा प्रभाव पड़ा था यह प्रभाव केवल भय के कारण था, अध्यापक समय पर विद्यालय पहुँचते थे उनको परीक्षा परिणाम की चिन्ता लगी रहती थी। परीक्षा परिणाम खराब होने पर सेवा रिकॉर्ड खराब होने का डर बना रहता था तथा स्थानान्तरण का डर बना रहता था इसी कारण अध्यापक विद्यालय में समय पर

आकर छात्रों को नियमत रूप से मन से पढ़ाया करते थे तथा अधिकारी भी स्कूलों का निरीक्षण करते रहते थे। अन्य सेवाओं जैसे रोड़वेज आदि समय पर संचालित होने लगी थी। सरकारी कार्यालयों में कर्मचारी एवं अधिकारीगण समय पर कार्यालय पहुँचने लगे थे। इसका कारण यह था कि प्रत्येक कर्मचारी एवं अधिकारी के मन में एक भय व्याप्त था कि उनके खिलाफ कोई कार्यवाही न हो जाये इस कारण सभी अपना अपना कार्य सुचारू रूप से करने लगे थे।

प्रश्न – 20 सूत्री कार्यक्रम क्या आपातकाल के नकारात्मक स्वरूप को खत्म करने के लिए था ?

उत्तर – आपातकाल के कुछ दुष्परिणाम भी थे उनको दूर करने के लिए एवं जनता को राहत देने के लिए तत्कालीन सरकार ने 20 सूत्री कार्यक्रम की योजना प्रारम्भ की थी परन्तु सरकारी अधिकारियों की लापरवाही नासमझी एवं अयोग्यता के कारण जनता को इन योजनाओं का कोई लाभ नहीं मिल सका। यह योजनाऐं केवल कागजों में ही सिमट कर रह गई।

प्रश्न – 20 सूत्री कार्यक्रमों ने स्वच्छता के नाम पर सरकार ने क्या कार्यवाही की?

उत्तर – बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वच्छता अभियान के रूप में कोई खास प्रगति नहीं हुई। न तो नगर निगम, नगर पालिका आदि को कोई सहायता नहीं दी गई और न कचरा हटाने एवं जलाने के लिए कोई प्रबन्ध किया गया। स्वच्छता के नाम पर गरीब नागरिकों की झुग्गी झोपड़ियों को हटा तो दिया परन्तु पुनर्वास के लिए कोई प्रबन्ध नहीं किया गया।

सारांश

सारांश

शोध का उद्देश्य :–

प्रस्तुत शोध 'भारत में आपातकाल 25 जून 1975 और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों की विवेचना (सन 1975 से 2012 तक)' अपनी प्रकृति में विश्लेषणात्मक एवं उद्देश्य परक अध्ययन है। इस शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह जानना है कि सन 1975 में आपातकाल क्यों लगाया गया? और उसके बाद राजनीति में क्या परिवर्तन आये? राष्ट्रीय स्तर पर आपातकाल लागू करने की क्या परिस्थितियाँ थीं? आपातकाल के दौरान संघीय शासन व्यवस्था को सुदृढ़ करने, स्वच्छ एवं संकल्पनात्मक सुशासन किस प्रकार प्रभावी सिद्ध हुए हैं। आपातकाल की पुनरावृति को रोकने में इनका क्या योगदान रहा? आपातकाल के दौरान विभिन्न राजनीतिक दलों के अस्तित्व, संगठन एवं महत्व के लिए राजनीतिक दलों के सामने एक चुनौती थी और राजनीतिक दलों के लिए इन प्रश्नों से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने में राजनीतिक दलों में क्या बदलाव परिलक्षित होता है। आपातकाल में देश का राजनैतिक परिदृश्य क्या हो जाता है? क्या आपातकाल का प्रयोग तात्कालीन कांग्रेस सरकार के समक्ष एक मात्र विकल्प था? इसे टाला जा सकता था? आपातकाल के बाद आम चुनाव हुए, जनता पार्टी सत्ता में आयी कुछ महीनों के बाद जनता पार्टी की सरकार ने बहुमत खो दिया व जनता पार्टी का विभाजन हो गया।

जनता पार्टी ने बहुमत क्यों खो दिया? भाजपा का निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ व कांग्रेस की कांग्रेस (आई) हो गयी। यह क्यों हुआ बाद में जनता दल, कांग्रेस तिवारी, राष्ट्रवादी कांग्रेस, यूनाइटेड और राष्ट्रीय ध्रुवीकरण के रूप में एन.डी. ए. (नेशनल डेमोक्रेटिव अलाइन्स) और यूपीए (यूनाइटेड प्रोग्रेशिव अलाइन्स) बने? इनके अलावा और भी पार्टियाँ बनीं और बिगड़ी उन सभी का इस शोध प्रबन्ध में विचारधारा और कार्यक्रम के आलोक में शोध करने का प्रयास किया गया है।

अध्याय–प्रथम

(अ) सामान्य परिचय
(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ और उनके निर्णय का अध्ययन

(अ) सामान्य परिचयः– आपातकाल का सामान्य अर्थ ऐसी परिस्थितियों से लिया जाता है। कि "विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए विशेष संवैधानिक प्रावधान प्रयुक्त किये जाए" आपातकाल के प्रावधान को जर्मनी के संविधान से लिया गया है। सविधांन के 18वें भाग मे अनुच्छेद 352 से 360 तक आपातकाल का वर्णन किया गया है।

आपातकाल के दौरान राजनैतिक व्यवस्था संघीय से एकात्मक हो जाती है। भारत या उसके किसी एक भाग में सशस्त्र विद्रोह हो जाये या भारत किसी युद्ध मे फँस जाये तो उस समय राष्ट्रपति 352 के अर्न्तगत संकटकाल की घोषणा कर सकता है। इन्ही प्रावधानो का सहारा लेते हुए भारत में 25 जून 1975 मे आपातकाल लागू किया गया। पहला आपातकाल 1962 में लगाया गया। दूसरा आपातकाल 1971 में लगाया गया। तीसरा आपातकाल 25 जून 1975 में लगाया गया। जो कि 21 मार्च 1977 तक रहा।

(ब) भारत में 1975 के आपातकाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ और उनके निर्णय का अध्ययनः– जून 1975 में भारतीय राजनीति मे एक नया मोड उत्पन्न हुआ। राजनैतिक नारेबाजी तथा आर्थिक दाब–पेचों की असफलता के बाद इन्दिरागाँधी ने उदारवादी लोकतंत्र मे प्राप्त आखिरी अधिकार का प्रयोग, आपात स्थिति की घोषणा और निरंकुश शासन स्थापित करने की कार्यवाही की।

मार्च 1971 में राजनारायण (समाजवादी नेता) ने इन्दिरागाँधी के

विरूद्ध रायवरेली (उत्तरप्रदेश) से चुनाव लडा था उसमे वह बुरी तरह पराजित हुआ था। उसके बाद उसने अप्रेल 1971 में प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी के विरूद्ध इलाहबाद उच्च न्यायालय में एक चुनाव याचिका दायर की थी जिसमें प्रधानमंत्री के विरूद्ध भ्रष्टाचार का आरोप लगाया गया था। 12 जून 1975 को इलाहबाद उच्च न्यायालय के न्यायधीश श्री जगमोहन सिन्हा ने राजनारायण की याचिका पर हाई कोर्ट का निर्णय पढकर सुनाया। जिससे इन्दिरागाँधी पर भ्रष्टाचार के आरोप कायम रख दिए गये। उनके चुनाव को रद्द कर दिया गया। उससे इलाहबाद उच्चन्यायालय के फैसले को 20 दिन तक के लिए लागू न करने के लिए पूर्ण स्थगनादेश (Absulate Stay) भी जारी कर दिया क्योकि प्रधानमंत्री का पद अत्यन्त महत्वपूर्ण था। इसके बाद इन्दिरा गाँधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए साम्यवादी दल को छोडकर अन्य विरोधी दलो ने आन्दोलन छेडने का निश्चय किया उन्होने 13 जून 1975 को राष्ट्रपति भवन के सामने धरना दिया।

18 जून 1975 को कांग्रेस संसदीय दल ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमें इन्दिरा गाँधी के नेतृत्व में अटूट विश्वास प्रकट किया और कहा गया कि उनका नेतृत्व देश के हित के लिए अनिवार्य है 20 जून 1975 को प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने इलाहबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय से अपील की। इस अपील में इलाहबाद उच्च न्यायालय के निर्णय कों उस समय तक पूर्ण रूप से तथा बिना शर्त के स्थगित रखने के लिए प्रार्थना की गई। जब तक उच्च न्यायालय अन्तिम रूप से अपील पर कोई निर्णय नही लेता।

24 जून 1975 को उच्चतम न्यायालय के अवकाश पीठ ने प्रधानमंत्री की अपील पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय को स्थगित करने के लिए एक आदेश जारी कर दिया जिसमें कहा गया कि इन्दिरा गाँधी की अपील या निर्णय तक प्रधानमंत्री के रूप मे कार्य कर सकती है। और संसद की कार्यवाही

में भाग ले सकती है पर मतदान मे भाग नही ले सकती है। 25 जून 1975 को जयप्रकाश के नेतृत्व में साम्यवादी दल को छोडकर अन्य विरोधी दल (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, समाजवादी दल और भारतीय लोकदल इत्यादि) ने इन्दिरा गाँधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए बडा व्यापक आन्दोलन छोडने की घोषणा की। स्थिति बडी गंम्भीर थी। इस पर प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने अपने सहयोगी मंत्रियों, मुख्यमंत्रियो और अन्त में राष्ट्रपति से विचार किया। इन्दिरा गांधी के विचार में कानून तथा व्यवस्था के टूटने और अराजकता फैलने की पूरी–पूरी संभावना थी इसलिए उन्होने तत्कालीन राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद से आन्तरिक संकटकालीन स्थिति की घोषणा करवा दी। बाहरी संकटकालीन स्थिति 3 दिसम्बर 1971 से पहले की चल रही थी। इसके बाद आन्तरिक आपातकाल 25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 तक लगभग 21 महीने तक रहा।

अध्याय द्वितीय

आपातकाल के दौरान 20 सूत्रीय कार्यक्रमों का क्रियान्वयन और प्रभाव की विवेचना (साक्षात्कार, सर्वे) पर आधारित

(अ) बीस सूत्रीय कार्यक्रम :–

1. गरीबी हटाओ।
2. जनशक्ति (लोगों का अधिकार)
3. किसान मित्र (किसानों को सहायता)
4. श्रमिक कल्याण,
5. खाद्य सुरक्षा
6. सबके लिए आवास
7. शुद्ध पेयजल
8. जन–जन स्वास्थ्य
9. सबके लिए शिक्षा
10. अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्प संख्यक एवं अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण
11. महिला कल्याण
12. बाल कल्याण
13. युवा विकास
14. बस्ती सुधार
15. पर्यावरण संरक्षण एवं वन वृद्धि
16. सामाजिक सुरक्षा
17. ग्रामीण सड़क
18. ग्रामीण ऊर्जा

19. पिछड़ा क्षेत्र विकास

20. ई–शासन

(ब) 1975 में विधायक एवं 1977 में सांसद पंडित रामकिशन जी का साक्षात्कार

(स) 1975 में प्राध्यापक ओमप्रकाश गुप्ता जी का साक्षात्कार

अध्याय–तृतीय

आपातकाल के दौरान गैर कांग्रेस राजनीतिक दलों की स्थिति की विवेचना

विपक्ष की आवाज बंद :–

आपातकाल की घोषणा हुई और जो कहने के पूर्व सभी विरोधी दलों (सी.पी.आई. को छोड़कर) के नेताओं को जेलों में ठूंस दिया गया। न उम्र का लिहाज रखा गया न स्वास्थ्य का 120 से अधिक बड़े नेताओं की गिरफ्तारी हुई जिनमें जयप्रकाश नारायण, विजयाराजे सिंधिया, राजनारायण मोरारजी देसाई, चरण सिंह, कृपलानी, अटल बिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी, सत्येन्द्र नारायण, जार्ज फर्नाडिश, मधु लिमये ज्योति बसु, सुमर गुहा, चन्द्रशेखर, बाला साहेब देवरस और बड़ी संख्या मे सांसद, विधायक शामिल थे। राष्ट्रीय स्तर के नेता आंतकवादियों की तरह रात के अंधेरे में घर से उठा लिए गए और मींसा के तहत अनजाने स्थान पर कैद कर लिए गए।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का पूर्व दमनः–

आपातकाल में अगर किसी एक संगठन का सबसे अधिक दमन हुआ तो वह था राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, संघ के स्वयंसेवक कार्यकर्ता और प्रचारक गिरफ्तार किए गए। पुलिस ने गिरफ्तार करने में उम्र का भी ख्याल नहीं रखा। आपातकाल के दौरान गिरफ्तार और प्रताड़ित होने के लिए स्वयंसेवक का विरोध कर रहे 90 फीसदी लोग किसी न किसी तरह से संघ से जुड़े थे। वाराणसी के बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्रसंघ पर उस समय अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद का कब्जा था। पुलिस ने आपातकाल की घोषणा होते ही पंडित मदन मोहन मालवीय ने आरएसएस को लॉ कॉलेज के परिसर में दो कमरों का एक भवन कार्यालय के लिए दिया था पर प्रशासन ने उसे एक ही रात में बुलडोजर लगा कर ध्वस्त करा दिया।

आपातकाल के विरूद्ध राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने जन आंदोलन को सफल बनाने के लिए बहुत बड़ी भूमिका निभाई।14 नवम्बर 1975 से 14 जनवरी 1976 तक पूरे देश में हजारों स्थानों पर सत्याग्रह हुए जिसमें 1,54,860 सत्याग्रही शामिल हुए। इन सत्याग्रहियों में 80,000 संघ के स्वयंसेवकों का समावेश था। सत्याग्रह के दौरान कुल 44,963 संघ से जुड़े लोगों को गिरफ्तार किया गया जिनमें से 35,310 स्वयंसेवक थे।

अध्याय–चतुर्थः
आपातकाल में प्रेस/मीडिया की प्रेस क्लिपिंग का अध्ययन

अ. प्रेस पर लागू हुआ सेंसरशिप :–

आपातकाल की घोषणा के साथ ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू कर दी गई। स्वतंत्रता के बाद ऐसा पहली बार हुआ था। प्रेस पर पूर्ण सेंसरशिप लगाई गई थी। सभी अखबारों के सम्पादको पर आपातकाल के दोरान हो रही ज्यादतियां की खबर ना छापने के लिए दबाव बनाया गया। बड़ी संख्या में पत्रकार इस दबाव के आगे नतमस्तक हो गये। मीडिया में सत्ता की चापलूसी करने वाले पत्रकारों ने भारतीय पत्रकारिता को हमेशा के लिए शर्मिन्दा कर दिया।

अधिकतर अखबारों में केवल सरकारी विज्ञप्तियों को ही खबर की तरह छापा जा रहा था। मीडिया में आपातकाल और सरकार विरोधी खबरों के लिए कोई जगह नहीं थी। खबरों को छापने से पहले सरकारी अधिकारी को दिखाना आवश्यक था। किसी भी खबर को बिना सूचित किये नहीं छापा जा सकता था। जैसे कई अखबारों ने मजबूरी में आपातकाल का विरोध नहीं किया। 9 जुलाई 1975 को दिल्ली के 47 संपादकों ने देश में समाचार पत्रों पर लगाये गये सेंसरशिप और इंदिरागाँधी की नीतियों पर अपना समर्थन व्यक्त किया।

साप्ताहिक हिन्दुस्तान पत्रिका ने खुलकर सरकार की तरफदारी की। पत्रिका ने 6 फरवरी 1977 को 'राजनीतिक शतरंज के पुराने खिलाड़ी और नए मोहरें' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित किया जिसमें आने वाले चुनाव में कांग्रेस का पलड़ा भारी होने की बात कही गई थी जबकि देशभर में कॉग्रेस के खिलाफ माहौल था। अन्ततः 1977 के चुनाव में कांग्रेस की बुरी तरह हार भी हुई।

निश्चित तौर पर कई अखबारों और पत्रिकाओं को अपना अस्तित्व बचाये रखने के लिए झुकना पड़ा पर पत्रकारों की बड़ी जमात जिस तरह से रेंगने के लिए

तैयार हो गयी उससे भारतीय पत्रकारिताओं पर कभी न मिटने वाला दाग लग गया।

ब. जो झुकने को नहीं हुए तैयार :–

इन सरकारी शिंकजे के बावजूद बड़ी संख्या में ऐसे भी पत्रकार थे जिन्होंने अपने जमीर पर दाग नहीं लगने दिया। प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष करते हुए कुलदीप नैयर, सूर्यकान्त बाली, विक्रमराव, वीरेन्द्र कपूर, श्याम खोंसला, देवेन्द्र स्वरूप, रतन मलकायी और दीनानाथ मिश्र जैसे पत्रकारों ने जेल की यातनायें झेली। कुल 327 पत्रकारों को मीसा कानून के अन्तर्गत जेल में बंद कर दिया गया। कई अखबारों और पत्रिकाओं ने अपने तरीके से प्रेस पर लगे सेंसरशिप का विरोध किया। कुछ संपादकों ने संपादकीय का स्थल खाली छोड़कर सरकार का विरोध किया। कुछ ने संपादकीय के स्थान पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में महापुरूषों की उक्तियों को छापा।

सरिता में 6 महीने तक कोई संपादकीय कालम नहीं छपा। सरिका ने जुलाई 1975 के अंक में संपादकीय को सेंसर अधिकारी द्वारा काला किए गए वाक्यों और शब्दों सहित हुबहू प्रकाशित कर दिया। इस अंक में 27–28 संख्या के पृष्ठ लगभग पूरी तरह काले थे।

प्रेस में प्रतिबंध को लेकर ऐसा भय का वातावरण बना कि सेमिनार और अधिनियम जैसे अनेक पत्र पत्रिकाओं को अपने प्रकाशन बंद करने पड़े। सरकार ने 3801 समाचार पत्रों के डिक्लेरेशन जब्त कर लिये और 290 अखबारों के विज्ञापन बंद कर दिये गये।

आपातकाल लगने से पहले देश में चार समाचार समितियाँ थीं – पीटीआई, यूएनआई, समाचार भारती और हिन्दुस्तान समाचार। सरकार ने इसे मिलकर एक समिति समाचार का गठन किया जिससे यह पूरी तरह सरकारी

नियंत्रण में रहे। 18 दिसम्बर 1975 को अध्यादेश द्वारा प्रेस परिषद को समाप्त कर दिया गया। आपातकाल के दौरान आकाशवाणी और दूरदर्शन पर जनता का ऐसा विश्वास उठा कि लोग बीबीसी और वॉयस ऑफ अमेरिका सुनते थे।

ऐसा नहीं था कि सरकार ने विदेशी पत्रकारों को परेशान ना किया हो। ब्रिटेन के टाइम और गार्जियन के समाचार प्रतिनिधियों को भारत से निकाल दिया गया। रायटर सहित अन्य एजेन्सियों टेलेक्स और टेलीफोन काट दिये गये। 7 विदेशी संवाददाताओं को भारत छोड़ने का हुक्म सुनाया गया।

आपातकाल के चालीस साल बीत चुके हैं। पर भारतीय पत्रकारिता के उस काले दौर को हमेशा याद रखने की जरूरत है ताकि आने वाली पीढ़ियों को प्रेस की स्वतंत्रता, के लिए अपना सब कुछ दांव पर लगा देने वाले पत्रकारों से सीख मिलती रहे।

स. बॉलीवुड पर भी चला सरकारी डण्डा –

विरोध प्रदर्शन का तो सवाल नहीं उठता था क्योंकि जनता को जगाने वाले लेखक, कवि और फिल्मी कलाकारों तक को नहीं छोड़ा गया। कहते हैं – मीडिया, कवियों और कलाकारों का मुँह बंद करने के लिए नहीं बल्कि इनसे सरकार की प्रशंसा करवाने के लिए विद्याचरण शुक्ल सूचना प्रसारण मंत्री बनाये गये थे।

उन्होंने फिल्मकारों को सरकार की प्रशंसा में गीत लिखने गाने पर मजबूर किया। ज्यादातर लोग झुक गये लेकिन किशोर कुमार ने आदेश नहीं माना। उनके गाने रेडिया पर बजने बंद हो गये। उनके घर पर आयकर के छापे पड़े। अमृत नाहटा की फिल्म ''किस्सा कुर्सी का'' को सरकार विरोधी मानकर उसके सारे प्रिंट जला दिये गये। गुलजार की आवाज पर भी पाबंदी लगाई गई।

(1) हजारों ख्वाहिशें ऐसी 2005 :–

निर्देशक सुधीर मिश्रा की यह फिल्म आपातकाल की पृष्ठ भूमि पर बनी

है। फिल्म में उस दौरान बढ़ रहे नक्सलवाद पर भी प्रकाश डाला गया है।

(2) नसबन्दी 1978 :–

सरकार द्वारा चलायें गये नसबंदी अभियान पर कटाक्ष करती आइ एस. जौहर की इस फिल्म की रिलीज को प्रतिबंधित कर दिया गया क्योंकि इसमें इंदिरागाँधी सरकार को दिखाया गया था।

(3) किस्सा कुर्सी का 1977 :–

अमृत नाहटा की इस फिल्म में शबाना आजमी ने भोली–भाली जनता का किरदार निभाया है। आपातकाल पर बनी फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया गया और सभी प्रिन्ट जला दिये गये।

(4) आँधी 1975 :–

गुलजार की इस फिल्म को प्रति बंधित कर दिया गया, क्योंकि यह इंदिरा गाँधी पर आधारित थी।

अध्याय–पंचम

आपातकाल के बाद भारत का राजनीतिक परिदृश्य, राजनीतिक परिवर्तन, राजनीतिक दलों पर उसका प्रभाव, राजनीतिक चेतना और बनती–बिगडती राजनीतिक पार्टियों की विवचेना।

छठें आम चुनाव कराये जाने की आकस्मिक घोषणा ने विभिन्न प्रतिपक्षी राजनीतिक दलों के समक्ष गहन चुनौती उत्पन्न कर दी और आपसी विलय की विचारणा को अनिवार्य बना दिया। आपातकाल के दौरान प्रतिपक्षी नेताओं को आपसी विचार विमर्श को अनायास ही अवसर मिल गया था। जेल से छूट कर बाहर आये नेताओं के लिए यर्थाथ को टालने या बंटे–बिखरे रहने के कारण स्वयं अपने अस्तित्व के विलोप का खतरा साफ था अतः उनके अपने अपने पृथक अस्तित्व को समाहित करने तथा देश में व्याप्त राजनीतिक अभिशाप की स्थिति को समाप्त करने की प्रेरणाऐं सबल बन गईं। सौभाग्य से जयप्रकाश नारायण जैसो प्रभावी नैतिक नेतृत्व भी सुलभ हुआ और जो कार्य वर्षों में नहीं हो पाया वह अवसरजन्य स्थिति कारण कुछ दिनों में संभव हो गया अन्ततः चार विपक्षी दलों (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल, समाजवादी दल) ने मिलकर मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी का गठन किया। लोकसभा के मार्च 1977 के चुनाव परिणामों ने जिनके फलस्वरूप जनता सरकारक` रूप में पहली बार गैर कांग्रेसी सरकार केन्द्र में बनी।

(अ) जनता पार्टी का गठन :–

चार विपक्षी दलों संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल, समाजवादी दल ने मिलकर मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी का गठन किया।

(ब) लोकतंत्र कांग्रेस का गठन :–

इसी बीच कृषि मंत्री जगजीवन राम ने मंत्रिमण्डल व कांग्रेस की

प्राथमिक सदस्यता से इतनी लम्बी सेवा करने के बाद अचानक त्याग–पत्र दे दिया तथा लोकतांत्रिक कांग्रेस का गठन किया और जनता पार्टी के सहयोग से चुनाव लड़ा।

(स) कांग्रेस (एस) का गठन :–

25 जून 1979 को श्री देवराज अर्स ने कॉग्रेस (ई) से नाता तोड़कर कर्नाटक कांग्रेस नाम से एक नये दल की स्थापना कर ली। बाद में रेड्डी, चाव्हण, स्वर्णसिंह वाली कांग्रेस तथा कर्नाटक कांग्रेस का विलय हो गया। इसको बाद में कांग्रेस (एस) का नाम दिया गया।

(द) लोकतंत्रीय कांग्रेस (कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी) :–

2 फरवरी 1977 को जगजीवन राम, हेमवती नन्दन बहुगुणा, नन्दनी सतपथी तथा अनेक कांग्रेसी नेताओं ने दल में आन्तरिक लोकतंत्र के हनन का आरोप लगाते हुए कांग्रेस से त्याग–पत्र दे दिया और अपनी अलग लोकतंत्रीय कांग्रेस (कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी) का गठन किया।

(य) लोकदल का निर्माण (जनता एस) :–

जुलाई 1979 में जनता पार्टी की बहुमत से सदस्यों ने दल छोड़कर राजनारायण के नेतृत्व में जनता एस का निर्माण किया।

(र) भाजपा :–

4 अप्रैल 1980 को जनता पार्टी की कार्य समिति ने अपने सदस्यो के राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्य होने पर प्रतिबंध लगा दिया। पूर्व के भारतीय जनसंघ के सदस्यों ने इसका विरोध किया। जनता पार्टी से अलग होकर 6 अप्रैल 1980 को एक नया संगठन भारतीय जनता पार्टी की स्थापना की।

(व) कांग्रेस (तिवारी) :—

1975 में अर्जुन सिंह व नारायण दत्त तिवारी को कांग्रेस से निष्कासित किया गया तो उन्होंने कांग्रेस तिवारी नाम से नये दल का गठन किया।

(क्ष) राष्ट्रवादी कांग्रेस :—

1999 में शरद पंवार, तारिक अनवर, पी.ए.संगमा ने कांग्रेस से निष्कासित किये जाने के पश्चात राष्ट्रवादी कांग्रेस का गठन किया।

(त्र) एन.डी.ए. — 1998 :— 11वीं तथा 12वीं लोकसभा के चुनावों में किसी भी राजनीतिक दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं हुआ और सरकारों का जल्दी—जल्दी पतन होने लगा तो ऐसी स्थिति में 13वीं लोकसभा चुनाव के पूर्व भी 1999 में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन का गठन किया गया। गठबंधन ने अटल बिहारी वाजपेयी को अपना नेता घोषित किया। भाजपा सहित गठबंधन के भागीदार दलों ने अपने अलग घोषणा पत्र जारी करने के बजाय 'राजग' के घोषणा—पत्र के आधार पर 13वीं लोकसभा का चुनाव लड़ा। घोषणा पत्र में भूख, भय और भ्रष्टाचार से मुक्त सुदृढ़ भारत बनाने का संकल्प लिया गया। घोषणा—पत्र में राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय पुनर्निमाण, गतिशील कूटनीति, संकीय समरसता, आर्थिक आधुनिकीकरण, सेक्यूलरवाद, सामाजिक न्याय और शुचिता इन आठ बिन्दुओं पर विशेष जोर दिया गया तथा कहा गया कि अगली सदी में बाँटने वाली बातों को त्यागकर आपसी विश्वास की भावनाओं और बातों पर बल दिया जायेगा। चुनाव के बाद वाजपेयी के नेतृत्व में राजग सरकार का गठन हुआ तथा इस सरकार ने राजनीतिक स्थायित्व के साथ आर्थिक विकास की दिशा में कुछ कदम आगे बढ़ाये लेकिन 6 फरवरी 2004 को 13वीं लोकसभा समय से पूर्व भंग करके 14वीं लोकसभा के चुनाव की घोषणा कर दी।

14वीं लोकसभा (2004) में इसने 'फीलगुड' और 'इण्डिया शाइनिंग' के नारों के साथ चुनाव लड़ा लेकिन अन्ततः पराजय का सामना करना पड़ा और विपक्ष

में बैठना पड़ा। इसी प्रकार 15वीं लोकसभा (2009) में भी इस गठबंधन को बहुमत प्राप्त नहीं हुआ और पहले से अधिक स्थिति खराब हो गई और इसके सहयोगी दल टूट–टूटकर अलग होने लगे।

(ज्ञ) यूपीए – 2004 :– यू.पी.ए. का पूरा नाम 'यूनाइटेड प्रोग्रेसिव एलाइन्स' है। 14वीं लोकसभा में किसी भी राजनीतिक दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं हुआ तो ऐसी परिस्थिति में कांग्रेस पार्टी के नेतृत्व में 14 दलों का संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन बनाया गया जिसकी अध्यक्षा सोनिया गाँधी को चुना गया। गठबंधन की सरकार बनी जो फिर से 15वीं लोकसभा में चुनकर आयी थी। गठबधंन के इकाई दलों को दो भागों में 1. सरकार में शामिल दल 2. बाहर से समर्थन देने वाले दलों में बाँटा गया है जिसमें विभिन्न घटक दलों का चुनाव घोषणा–पत्रों को आधार बनाया गया। साझा न्यूनतम कार्यक्रम की घोषणा 'संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन' से सभी राजनीतिक दलों के नेताओं की बैठक में व्यापक विचार विमर्श के बाद 27 मई 2004 को की गयी थी। साझा कार्यक्रम के 6 बुनियादी सिद्धान्त इस प्रकार बताए गएः– सामाजिक सदभाव, रोजगार, किसानों की भलाई, महिला सशक्तिकरण, सबको समान अवसर और प्रतिभा को प्रोत्साहन। वस्तुतः लोकतंत्र की आत्मा व प्राण, राजनीतिक दल में लोकतांत्रिक पद्धति का अभाव देखा गया। राजनीतिक दल व्यक्ति विशेष के ईद गिर्द घूमते रहते हैं। दल महत्वपूर्ण नहीं होता। व्यक्ति महत्वपूर्ण होता है। दल के संगठन के चुनाव लम्बे समय तक नहीं होते। वर्षों बाद कांग्रेस संगठन के चुनाव 1992 में हुए दल न केवल अलोकतांत्रिक पद्धति से कार्य करते हैं अपितु सर्वाधिकार की पद्धति भी पाई जाती है।

अध्याय षष्ठः

कांग्रेसवाद और गैर–कांग्रेसवाद की अवधारणा की विवेचना तथा आपातकाल के बाद राजनीतिक चेतना पर सर्वेक्षण।

(अ) 1977 का लोकसभा चुनाव :–

मोरारजी देसाई – जनता पार्टी

कार्यकाल – 21 मार्च 1977 से 28 जुलाई, 1979

कांग्रेस – 154 सीट

चौधरी चरण सिंह– जनता पार्टी

कार्यकाल – 28 जुलाई 1979 से 14 जनवरी 1980

(ब) 1980 का लोकसभा चुनाव –

इंदिरा गांधी – कॉग्रेस (आई)

कार्यकाल – 14 जनवरी 1980 से 31 अक्टूबर 1984

कांग्रेस – 352 सीट

(स) 1984 का लोकसभा चुनाव –

राजीव गांधी – कॉग्रेस (आई)

कार्यकाल – 31 अक्टूबर 1984 से 1 दिसम्बर 1989 तक

कॉग्रेस – 405 सीट

(द) 1989 का लोकसभा चुनाव –

वी.पी.सिंह – जनता दल

कार्यकाल – 2 दिसम्बर 1989 से 10 नवम्बर 1990 तक

कॉग्रेस – 197 सीट

चन्द्रशेखर – जनता दल (सो0)

कार्यकाल – 11 नवम्बर 1990 से 21 जून 1991 तक

(य) 1991 का लोकसभा चुनाव –

पी. वी. नरसिम्हाराव – कॉंग्रेस (आई)

कार्यकाल – 21 जून 1991 से 16 मई 1996

कॉंग्रेस – 232 सीट

(र) 1996 का लोकसभा चुनाव –

अटलबिहारी बाजपेयी – भाजपा

कार्यकाल – 16 मई 1996 से 1 जून 1996 तक

कॉंग्रेस – 140 सीट

एच.डी. देवगोड़ा – जनता दल संयुक्त मोर्चा

कार्यकाल – 1 जून 1996 से 21 अप्रैल 1997

इन्द्रकुमार गुजराल– जनता दल संयुक्त मोर्चा

कार्यकाल – 21 अप्रैल 1997 से 18 मार्च 1998

(ल) 1998 का लोकसभा चुनाव –

अटलबिहारी बाजपेयी – एन.डी.ए.

कार्यकाल – 19 मार्च 1998 से 13 अक्टूबर 1999

कॉंग्रेस – 141 सीट

(व) 1999 का लोकसभा चुनाव –

अटलबिहारी बाजपेयी – एन.डी.ए.

कार्यकाल – 13 अक्टूबर 1999 से 21 मई 2004

कॉंग्रेस – 114 सीट

(क्ष) 2004 का लोकसभा चुनाव –

मनमोहन सिंह – यू.पी.ए.

कार्यकाल – 22 मई 2004 से 22 मई 2009

कॉंग्रेस – 145 सीट

(त्र) 2009 का लोकसभा चुनाव –

मनमोहन सिंह	–	यू.पी.ए.
कार्यकाल	–	22 मई 2009 से 26 मई 2014
यूपीए	–	262 सीट

अध्याय–सप्तमः
मूल्यांकन 25 जून, 1975 के आपातकाल और उसके बाद के राजनीतिक परिवर्तनों का मूल्यांकन

आमधारणा के विपरीत यह प्रक्रिया नेहरू के दिनों ने ही शुरू हो गई थी। उनकी बेटी इंदिरा गांधी ने राजनीति में दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी थी और सन् 1950 के दशक में आखिरी वर्षों में नेहरू ने उन्हें कांग्रेस का आक्रामक रूप से संविधानेत्तर गतिविधियों में दखल 1970 के दशक में देखने को मिला। तब युवक कांग्रेस के अध्यक्ष संजय गाँधी ने केंद्रीय मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों को आदेश देने शुरू कर दिये थे। शासन की यह पद्धति आपातकाल के दौरान तमाम हदें पार कर गईं। अपनी माँ प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी द्वारा प्रेरित संजय गांधी ने संघीय स्तर पर और राज्यों में समानान्तर सत्ता केन्द्र स्थापित कर लिया था। केन्द्रीय मंत्रियों, मुख्यमंत्रियों, आईएएस और आईपीएस अधिकारियों के पर कतर दिए गए थे और पूरे भारत में भय का शासन कायम कर दिया गया था। इंदिरा गाँधी, संजय गाँधी के कारनामों से इस कदर अभिभूत हुई थीं कि उन्होंने अपने प्रचण्ड बहुमत के बल पर सन् 1971–76 के लोकसभा के कार्यकाल को एक वर्ष का विस्तार दे दिया था। यह भयावह दौर तब खत्म हुआ जब लोगों ने चुनाव में कांग्रेस को उखाड़ फेंका। इंदिरा गांधी ने यह चुनाव इन खुफिया रिपोर्टों के बाद कराया था कि जनता उनका समर्थन करेगी।

यह कांग्रेस के शासन का इतिहास है, किन्तु बहुत से कांग्रेसी दिखावा करते हैं कि ऐसा कुछ हुआ ही नहीं या फिर वह लोगों की स्मृति से लोप हो गया है, किन्तु वे लोग जिनका लोकतंत्र में अटल विश्वास है, फिर से ऐसा नहीं होने देना चाहते। आतंक के दिनों को भूलना मुसीबतों को फिर से न्यौता देने के समान है। इसलिए लोकतंत्र की खातिर आपातकाल की वर्षगांठ 25 जून पर इनके स्याह दिनों को याद करना जरूरी है।

इसी आलोक में कुछ संगठनों व व्यक्तियों पर समानान्तर सत्ता खड़ी करने संबंधी केन्द्रीय मंत्रियों के आरोपों की भर्त्सना करना जरूरी हो जाता है। उदाहरण के लिए, भ्रष्टाचार की समस्या का समाधान करने क अनिच्छुक सरकार प्रधानमंत्री और सांसदों को लोकपाल के दायरे में लाने से पैर खींच रही है। यह ऐसा है जो नागरिकों के कड़े तबके को परेशान कर रहा है। नेहरू के दिनों से ही कांग्रेस भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के कदम उठाने से हिचकिचाती रही है। उदाहरण के लिए आजादी के बाद से ही कांग्रेस पार्टी के वफादार सदस्यों को ही राज्यपाल के रूप में नियुक्त करती रही है। इसी प्रकार उसने हमेशा प्रयास किया है कि चुनाव आयुक्त ऐसा व्यक्ति न बन जाये जो स्वतंत्र रूप से फैसले कर सकता हो। आपातकाल के दौरान कांग्रेस खुलेआम स्वतंत्र मीडिया और न्यायपालिका के खिलाफ अभियान चलाती रही है। संविधान में 42वें संशोधन पर संसद में हुई बहस से ही साफ हो जाता है कि कांग्रेस न्यायपालिका, मीडिया और स्वतंत्र विचारों वाले नौकरशाहों के किस कदर खिलाफ है। सीएम स्टीफेन जैसे लोगों ने खुलेआम 'समर्पित न्यायपालिका' की वकालत की थी। यह समर्पण संविधान के प्रति न होकर कांग्रेस के प्रति अभीष्ट था। इसके बाद भी हालात में कोई परिवर्तन नहीं आया। हमेशा यह प्रयास किया जाता रहा है कि पार्टी के समर्थक या फिर दागदार छवि वाले व्यक्ति संवैधानिक पदों पर तैनात कर दिये जायें। इसकी सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है चुनाव आयुक्त के रूप में नवीन चावला की तैनाती, जिन्हें शाह जांच आयोग किसी भी सार्वजनिक पद को अयोग्य ठहरा चुका है। इसका दूसरा उदाहरण है कांग्रेस द्वारा मानकों को धज्जियाँ उड़ाते हुए भ्रष्टाचार के एक आरोपी को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त (सीवीसी) के तौर पर तैनात करना।

इस परिप्रेक्ष्य में कपिल सिब्बल और पी. चिदम्बरम जैसे कुछ केन्द्रीय मंत्रियों के प्रवचन सुनना अजीब लगता है, जो सन् 1980 के दशक में मीडिया विरोधी बिल लाने के कर्णधार थे। कुछ दिन पहले उन्होंने संयुक्त रूप से मीडिया को

संबोधित करते हुए मजबूत लोकपाल बिल लाने की पक्षधर सिविल सोसायटी के सदस्यों पर हमला किया कि बाहरी लोगों द्वारा किए गए फैसलों के आधार पर सरकार चलाना सही नही है। मजबूत लोकसभा के खिलाफ एक अन्य दलील यह थी कि सरकार के समानान्तर एक और ढांचा खड़ा नहीं किया जा सकता। इन मंत्रियों ने हैरानी जताते हुए कहा कि सरकार अपनी शक्तियों को कम करने का कार्य कैसे कर सकती है? किन्तु क्या मनमोहन सिंह पिछले सात वर्षों से यही नही कर रहे है? क्या उसने अपनी शक्तियाँ संवैधानेत्तर सत्ता सोनिया गाँधी के हाथों में नहीं सौंप दी? पी. चिदम्बरम की दलील तो इससे भी अधिक हास्यास्पद थी कि देश में संविधान है, जिसके मूल ढांचे में बदवाल नहीं किया जा सकता। कांग्रेस के दर्जनों सांसदों व नेताओं ने सुप्रीम कोर्ट द्वारा प्रतिपादित संविधान के मूलभूत ढाँचे के विचार की संसद के भीतर और बाहर अनेक बाहर धज्जियाँ उड़ाई हैं। उन्होंने तो यहाँ तक कहा है कि उनके पास सुप्रीम कोर्ट के जजों को सबक सिखाने के अपने तरीके हैं।

आपातकाल की वर्षगांठ पर हमें उन भयावह संवैधानिक संशोधनों पर भी नजर डालनी चाहिए जो कांग्रेस ने आपातकाल के दौरान किए थे। इनमें प्रधानमंत्री को संविधान से ऊपर स्थापित करना, सुप्रीम कोर्ट व हाईकोर्ट की शक्तियों को कम करना और राष्ट्रपति को कार्यकारी आदेशों के माध्यम से संविधान संशोधन की शक्ति प्रदान करना शामिल था। इन संशोधनों ने संविधान के मूलभूत सिद्धान्तों को ही ध्वस्त कर दिया था। कांग्रेस के रवैये में अभी भी कोई परिवर्तन नहीं आया है, इसलिए अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है। हमें 25 जून को खुद यह याद दिलाने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए कि कांग्रेस अथवा उसके नेतृत्व वाली सरकार क्या–क्या शरारतें करने में समर्थ है? हमें विरोध से घृणा करने वाली कांग्रेस द्वारा आपातकाल के दौरान मारे गए, सताए गए और जेल में ठूंस दिए गए लाखों लोगों का स्मरण करना चाहिए।

साधारण व्यक्तियों ने अपने मताधिकार से यह सिद्ध कर दिया कि वे

समय आने पर ऐतिहासिक और क्रांतिकारी निर्णय ले सकते हैं। कांग्रेस के लिए यह 1977 का चुनाव परिणाम वज्रपात बनकर सामने आया। इससे न केवल भारतीय राजनीति पर तीस वर्षों से चला आ रहा कांग्रेस का एकाधिकार ही समाप्त हो गया अपितु केन्द्र में गैर कांग्रेस शक्तियों का विजय एक नये युग का श्री गणेश कर दिया। जनता पार्टी की जीत के बाद जनता पार्टी की सरकार ने बहुमत खो दिया और जनता पार्टी का विभाजन हो गया। भाजपा का निर्माण हुआ। कांग्रेस की कांग्रेस (ई) हो गयी अनेक पार्टी बनीं और बिगड़ी आज केन्द्र की राजनीति एन.डी.ए. (नेशनल डेमोक्रेटिव अलाइन्स) और यू.पी.ए. (यूनाइटेड प्रोगेशिव अलाइन्स) के बीच है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

MAGAZINE :-

1. कामथ, एम.वी. : ''इन्दिरा गांधी इन पार्लियामेन्ट'' इलुस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इण्डिया, दिसम्बर 1–7, 1978।

2. प्रेसीडेन्टशियल नोटीफिकेशनः ''प्रेसीडेन्ट डीजोल्वस लोकसभा–मिड टर्म पोल इन दिसम्बर,'' 22–8–79।

3. प्रताप, भानु मेहता, 'द राइज ऑफ जूडीकल सबराइटी'' जनरल ऑफ डेमोक्रेसी, 2007।

4. चितकारा, एम.जी., 'हिन्दूत्वा' नई दिल्ली, ए.पी.एच. पब्लिशिंग, 1997।

5. मसानी, एम.आर., 'इन्दिरा सेकण्ड ऐवूलेशन, ऐशियन अफेयर्स, 1977।

6. निहालनी, गुलजार तथा चटर्जी गोविन्द, सायवेल, 'एनसाइक्लोपीडिया ऑफ हिन्दी सिनेमा' नई दिल्ली, मुम्बई इन्साइक्लोपिडिया ब्रिटेनिका इण्डिया पोपूलर प्रकाशन 2003।

7. धंगारे, डी.एन., 'सिक्स लोकसभा इलैक्शन इन उत्तर प्रदेश, 1977, पोलिटिकल साइन्स रिव्यू 1979।

8. गांगुली, मीरा तथा गांगुली बेगेन्द्र, 'लोकसभा इलेक्शन 1977, पॉलिटिकल साइन्स रिव्यू 1979।

9. पालमेर, एन.डी., 'इण्डिया इन 1975 डेमोक्रेसी इन एक्लीप्स' एशियन सर्वे 1975।

10. अहमद, फरजान्द, '1978 किस्सा कुर्सी का सेलुलाइड चुटजफन' कवर हिस्टोरी इण्डिया टूडे दिसम्बर, 24, 2009।

11. फ्रेंक, केथरीन, 'इन्दिरा द लाइफ आफ इन्दिरा नेहरू गाँधी' यू.एस. हापर कोलींस 2010

12. मल्होत्रा, इन्दर, 'इन्दिरा गाँधी' न्यूर्याक, कोरनेट बुक्स, 1991

13. केनिथ, प्लेचर, 'द हिस्ट्री आफ इण्डिया' न्यूयॉर्क, द रोजन पब्लिसिंग ग्रुप, 2010।

14. डायसी, ए.बी., 'लॉ आफ द कंस्टीटूशन', लंदन, मैकमिलन 1971।

15. दिलीप, हीरो, 'इनसाइड' इण्डिया टू डे, लंदन, 1976।

16. पालखी, बाला एन.ए., 'अवर कंस्टीटूशन नई दिल्ली डिसफेस्ट एण्ड डिफाल्ड 1974।

17. सिंह, एम.एम., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' कलकत्ता, द वर्ल्ड प्लेस, 1973।

18. कु. अजय, 'स्ट्रगल फोर जस्टिस सीरीज फरोम सिलेवरी टू फ्रीडम, नई दिल्ली, आईएसआई 1994।

ARTICLES :-

1. मीरचन्दानी, जी.जी. : ''सबवीटिंग दि कंस्टीटूशन''

2. नायर, कुलदीप : 'दि जजमेन्ट'

3. गुप्ता, अनिरूद्ध : 'रिवूलुशन थ्रू बेलॅट : इण्डिया–जनवरी–मार्च 1977।

4. नरसिंहन, वी.के. : डेमोकेसी रीड़ीम्ड,'' एस. चान्द

5. वासुदेव, उमा : ''टू फेसेस ऑफ इन्दिरा गांधी,'' विकास दिल्ली

6. ठाकुर, जनार्दन : आल दी प्राइम मीनीस्टरस् मैन,'' विकास, दिल्ली

7. सेलबोर्न, डेविड : 'एन आई टू इन्डिया,''

8. दयाल, जॉन : देहली अण्डर इमरजेन्सी'

9. अब्राहम, अब्रू : 'दी गेम्स ऑफ इमरजेन्सी'

10. शर्मा, धीरेन्द्रः दि जनता ;पीपुल्सद्ध स्ट्रगल'' ।

11. श्यामलाल : ''दि नेशनल सीन–दी जनता पार्टी इन ए ट्रेप,'' दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, जुलाई 28, 1978।

12. खन्ना, के. सी. : ''दि ब्वेटिंग गेम इन देहलीः पॉलिटिक्स ऑफ फ्रेगमेन्टेशन,'' दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, सितम्बर 12,1978 ।

13. नौरिया, अनिल के. : डीलिंग वि डिफेक्शन्सः दि रीयल मैलेज,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, सितम्बर 25, 1978।

14. जैन, गिरी लाल : ''न्यू चैलेन्जेज फॉर मि. देसाई : ग्रोइंग कोमुनल एण्ड कास्ट टेन्शन,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अक्टूबर 11,1978।

15. चौपड़ा, प्राणः ''फ्यूचर ऑफ पार्टी सिस्टम : 1 'जनता' एक्स पेक्टेड टू सरवाईव 2 डिफरेन्ट व्यू पोइन्टस'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अक्टूबर 16 एण्ड 17, 1978।

16. जैन, गिरी लाल : ''दि रिटर्न ऑफ इन्दिराम्माः चिकमगलूर एण्ड आफ्टर,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, नवम्बर 9, 1978।

17. खन्ना, के.सी. : जनताज् ग्रोइंग डीलेम्मा : वेजेज ऑफ इनफाईटिंग एण्ड एनएपटीट्यूड,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, नवम्बर 21, 1978।

18. जैन, गिरी लाल : डिस्सीडेन्स इन जनता गवर्नमेन्टः नाइदर यूनिटी नॉर स्पलिट इन साइट,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, दिसम्बर 9, 1978।

19. झा, प्रेम शंकर : ''जनताज इकोनोमिक रीकार्डः वाइडिनिंग एरियाज ऑफ कोनफ्लिट'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, दिसम्बर 20, 1978।

20. विनायक, ए. : ''लिविंग वि इनस्टेबिलीटीः पोलिटिकल आइसि एण्ड सोसियल चेन्ज'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, दिसम्बर 23, 1978।

21. जैन, गिरी लाल : ''दि रैली एण्ड आफ्टरः लिमीटेशन्स ऑफ किसान लीडरशिप,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, दिसम्बर 26, 1978।

22. जैन, गिरी लाल : ''जनता टियरींग इटशेल्फ एपार्ट : फियर ऑफ इन स्टेबिलीटी एट दि सेन्टर,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, जनवरी 7, 1979।

23. मल्होत्रा, इन्दरः ''क्वेस्ट फॉर कांग्रेस यूनिटीः सडन रिवाइवल ऑफ होप्स,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, मार्च 1, 1979।

24. श्यामलाल : ''दि नेशनल सीन–सर्च फोर न्यू एलाइल,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, मार्च 16, 1979।

25. जैन, गिरी लाल : ''दि सिस्टम अण्डर स्ट्रेसः 1 'स्ट्रगल अगेन्स्ट आर.एस.एस. –जनसंघ, 2 'सोसिएल रीयलिटी ओवरटेक्स पोलिटी' एण्ड (3) ''जनता नो सब्सीट्यूट फॉर कांग्रेस,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अप्रैल 4–6, 1979।

26. ग्रोवर, शारदा : ''ग्रीड लाइक इण्डियान सोसायटी– 1 एपारथीड एण्ड घेटो एक्जीसटेन्स, 2 ''जनता–ए रिफ्लेक्शन ऑफ रियलिटी,'' एण्ड 3 ''टू फेसेस ऑफ जनता पार्टी,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, मई 5–7, 1979।

27. सम्पादकीयः ''ओवर टू चरण सिंह'', दि हिन्दुस्तान टाइम्स, जुलाई 22,1979।

28. एक्सपर्टस ओपिनिएन्सः ''वेलिडिटी ऑफ प्राइममिनीस्टर्स एडवाईस टू प्रेसीडेन्ट,'' इण्डियन एक्सप्रेस अगस्त 15,1979 ।

29. सम्पादकीयः ''दि राइट कोर्स, दि हिन्दुस्तान टाइम्स, अगस्त 21, 1979।

30. सम्पादकीयः ''ए डाऊटफुल डिसिश्जन,'' दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 23,1979।

31. मल्होत्रा, इन्दर : ''टेन टरबुलेन्ट वीक्स देज वर,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 23,1979।

32. सम्पादकीयः ''इन बेड ऑडव्र,'' दि इण्डियन एक्सप्रेस, अगस्त 23,1979।

33. पालखीवाला, नानी ए. : ''दि प्रैसीडेन्टस डिसीजनः कान्सीक्यून्सेस ऑफ डिजोलुशन,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 24,1979।

34. लेटर्स : ''टैक्स्ट ऑफ जगजीवनराम् थ्री लेटरस् टू प्रेसीडेन्ट,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 24, 1979।

35. सम्पादकीयः 'एण्ड नाऊ एट दि सेन्टर,' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 25, 1979।

36. इन्दर, मल्होत्राः ''डिजोलुशन एण्ड आफ्टरः रीमूविंग कान्स्टी–ट्यूशनल लेकुना,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 30, 1979।

37. अब्राहम, ए.एस. : ''रूट्स ऑफ प्रजेन्ट क्राइसिस : न्यू नोर्म्स ऑफ पोलिटिकल बिहेवीयर,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अगस्त 31, 1979।

38. सम्पादकीयः ''नाट बाई कॉन्शॅन्स,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, सितम्बर 5, 1979।

39. सम्पादकीयः ''फाइट इज स्ट्रेट,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, सितम्बर 8, 1979।

40. झा, प्रेमशंकर : ''ग्रोइग पोलिटिकल इनस्टेबिलिटी 1 दि ब्रैक–डाऊन ऑफ दि केबीनेट गवर्नमेट,' एण्ड 2 ''प्रेसीडेन्ट सिस्टम हेज मेनी स्नेग्स,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, सितम्बर 10–11, 1979।

41. सम्पादकीयः इण्डिएन मेफीस्टोफेल्स,'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, अक्टूबर 4, 1979।

42. खन्ना, के.सी. : ''प्रोब्लेम ऑफ गवर्नाएबीलीटीः मेनी मिटिगेंटिंग फेक्टर्स'' टाइम्स ऑफ इण्डिया, नबम्बर 6, 1979।

43. सम्पादकीयः ''ऑन दि रॉक्स,' दि हिन्दुस्तान टाइम्स, दिसम्बर 7, 1979।

44. जेटली, अरूण, 'ए टेल ऑफ थ्री एमरजेन्सीज रीयल रीजन एडवे डीफरेन्ट' द इण्डियन एक्सप्रेस, नव, महिना, 05, 2007।

45. हॉब कार्ल तथा शर्मा ओ.पी., 'इण्डिया पोपूलेशन रीयलटी रेकोसिलिंग चेन्ज एण्ड ट्रेडीशन' दिल्ली, पोपूलेशन बुलेटिन, 2006।

<u>BOOKS :</u>

1– गुप्ता, अनिरूद्ध, रिवोल्यूशन थ्रू बैलट, इण्डिया जनवरी मार्च 1977, अंकुर पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1977।

2– नायर कुलदीप, 'दी जजमेन्ट साइड स्टोरी ऑफ द इमरजेन्सी इन इण्डिया' विकास पब्लिशिंग हाउस, 1977।

3– ब्राइट, जे.एस., 'इलाहाबाद हाईकोर्ट टू शाह कमीशन' दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1979।

4– कलहन प्रोमिला, ब्लैक वेडन्सडे, स्टार्लिंग प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977 पृष्ठ–2

5– मल्होत्रा इन्दर, बैक टू पोल : दि इलेस्डेड वीकली ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, फरवरी 6, 1977।

6– सिन्हा, सच्चिदानन्द : 'इमरजेन्सी इन प्रॉस्पेक्टिव रिप्राइज एण्ड चैलेन्ज' हेरिटेज पब्लिशर्स, 1977 ।

7– वर्मा गोविन्दराम, 'जनता पार्टी का उदय और भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' (अजयबंधु, भरतपुर किला) 1977।

8— गहलोत, एन.एस.; छठी लोकसभा का चुनाव एक अद्वितीय ऐतिहासिक घटना, लोकतंत्र समीक्षा, अप्रेल जून 1978 वर्ष 10 अंक 2 (संविधानिक तथा संसदीय अध्यक्ष संस्थान, नई दिल्ली) का प्रकाशन।

9. एस.पी. अय्यर एण्ड एस.वी.राजू : 'व्हैन दि विन्ड ब्लोज : इन्डियाज बेलट बोक्स रीवोलूशन,'' हिमालया, बम्बई।

10. आडवानी, एल. के.: ''दि पीपुल बीट्रयेड,'' विज्न बुक्स, नई दिल्ली, 1979।

11. सिंह, खुशवन्त : ''इन्दिरा गांधी रिटर्न्स,'' विजन बुक्स, नई दिल्ली,1979।

12. ठाकुर, जनार्दन : 'इन्दिरा गांधी एण्ड हर पॉवर गेम'' विकास पब्लिकेशन्स दिल्ली,1979।

13. मोहम्मद, युनुसः कंस्टीटूशनपरसन्स, पैरसन्स एण्ड पॉलिटिक्स,' विकास पबिशिंग हाउस, नई दिल्ली,1979।

14. खन्ना, एच.आर, 'मेकिंग ऑफ इण्डिया कोस्टिट्यूशन' लखनऊ, ईस्टन बुक कम्पनी, 1981

15. गिरेवाल जे.एस., 'द सिख ऑफ द पंजाब' दिल्ली, केम्ब्रीज यूनिवर्सिटी प्रेस इण्डिया, 1990

16. सिंह, गुरमीत, 'ए हिस्ट्री ऑफ सिख स्ट्रगल' नई दिल्ली अटलांटिक पब्लिशर एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर 1991

17. कुमार, रामनारायण तथा सियवर जार्ज, 'द सिख स्ट्रगल ओरिजन एवुलेशन एण्ड प्रजेन्ट केस' दिल्ली, चाण्क्य पब्लिसर, 1991।

18. मल्होत्रा, इन्दर, 'इन्दिरा गाँधी ए पर्सनल एण्ड पॉलिटिकल बायोग्राफी' न्यूयोर्क, लंदन / टोरन्टो, होल्डर एण्ड स्टाउटन, 1989।

19. ऑस्टिन ग्रेनबिल, 'वर्किंग ए डेमोक्रेटिक कोस्टिट्यूशन द इण्डियन एक्सपियरिंस' जयपुर, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999।

20. समरबिल, बरवारा, 'इण्दिरा गांधी पॉलिटिक लीडर इन इण्डिया' यूनाइटेड स्टेट, केप्सटन पब्लिसर, 2007।

21. अग्रवाल, मीना, 'इन्दिरा गाँधी' दिल्ली, डायमण्ड पोकेट बुक्स, 2005।

22. गुप्त, प्रानो, 'मदर इण्डिया ए पॉलिटिकल बायोग्राफी ऑफ इन्दिरा गांधी' नई दिल्ली, पेनजीयन बुक्स, 2012।

23. जायेकर पुपुल, 'इन्दिरा गाँधी ए बायोग्राफी' नई दिल्ली, पेनजीयन बुक्स, 1997।

24. मलिक, योगेन्द्र कुमार, 'इण्डिया द ईयर्स आफ इन्दिरा गांधी, यू.के. बिल्स पाब्लिसर 1988'।

25. क्रिस्टोक जेफरलोट, 'हिन्दू नेशनलिज्म' न्यू जेर्सी यू.एस.ए., प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987।

26. माथुर, ओ.पी., 'इन्दिरा गाँधी एण्ड द ऐमरजेन्सी एज वीयूड इन द इण्डियन नोबेल' नई दिल्ली, सार्क एण्ड संस, 2004।

27. देसाई, मेघनाथ, 'द रिडस्कवरी आफ इण्डिया,' नई दिल्ली, पेनजीयन बुक्स 2011।

28. गुप्ता, के.एल तथा कोर हरविन्दर, 'न्यू इण्डियन एकोनोमी एण्ड रिफार्मस' दिल्ली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स 2004।

29. स्टेनली, कोचनेक, 'मिसेज गाँधी पिरामिड द न्यू कॉग्रेस' यूनाइटेड स्टेट, वेस्टव्यू प्रेस वाउलडर 1976।

30. फडिया, बी.एल., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया, आगरा साहित्य भवन पब्लिकेशन 2008।

31. चन्द्र, विपन, 'लोकतंत्र आपातकाल और जय प्रकाश नारायण' नई दिल्ली, अनामिका पब्लिसर, 2007।

32. शर्मा, बृजकिशोर, 'इन्ट्रोडेक्शन टू द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया' नई दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल प्रा.लि. 2007।

33. खान, ए.आर. तथा सिद्दकी के.एच. 'द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया' नई दिल्ली, बी.पी.जी. बुक्स, 2004।

34. यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग, 'द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया' दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग 2002।

35. सहारे, एच.के., 'द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया' नई दिल्ली ईस्टर लॉ हाउस, 2002।

36. सिंह, महेन्द्र पी. तथा शुक्ला वी.एन., 'कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया लखनऊ,' ईस्टन बुक्स कम्पनी 2003।

37. सेन, सरवानी, 'द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया' लखनऊ ईस्टन बुक कम्पनी, 2008।

38. जेनिंग्स सर आइवर, 'सम कैरेक्टरिस्टिक्स ऑफ इण्डियन कंस्टीटूशन , लंदन, ऑक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस, 1953।

39. गुप्ता, बी.एन., 'द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया, लखनऊ ईस्टन बुक कम्पनी 1972।

40. पायली, एम.बी., 'सीटेड इन कंस्टीटूशन गॉवरमेन्ट इन इण्डिया', नई दिल्ली, एशिया पब्लिसिंग हाउस, 1965।

41. सिंघवी, एल.एम. तथा कश्यप सुभाष, 'फण्डामेन्टल राइट एण्ड कंस्टीटूशन एमेडमेड', नेशनल दितवर 1971।

42. ग्रेनबिल, ऑस्टीन, 'द इण्डियन कंस्टीटूशन कॉर्नर स्टोन ऑफ द नेशन', यू.के ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1966

43. संथानम, के., 'यूनियन स्टेट रिलेसन्स इन इण्डिया' बम्बई इशिया पब्लिसिंग हाउस, 1963।

44. जौहरी, जे.सी., 'रिफ्लेशन आफ इण्डियन पॉलिटिक्स' नई दिल्ली, एस चांद एण्ड कम्पनी, 1974।

45. मलिक, सुरेन्द्र, 'द फण्डामेन्टर राइटस' लखनऊ, ईस्टन बुक कम्पनी 1973

46. गुप्ता, डी.सी., 'इण्डियन गवर्नमेंन्ट एण्ड पॉलिटिक्स', नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस, 1972

47. बसु, डी.डी., 'कंस्टीटूशन लॉ आफ इण्डिया' नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया 1996।

48. बसु, डी.डी. 'ह्यूमन राइटस कंस्टीटूशन लॉ' नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया 1994।

49. बसु, डी.डी. 'केसबुक ऑन इण्डियन कंस्टीटूशन लॉ' नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया 1971।

50. बसु, डी.डी. 'कमेन्टी ऑन दी कंस्टीटूशन आफ इण्डिया ' नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया 1975।

51. बसु, डी.डी. 'कम्परेटिव फेडरलिज्म' नई दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया 1987।

52. नायक, कुल्दीप, 'द जजमेन्ट' नायेडा विकास पब्लिसिंग हॉउस 1977।

53. कश्यम, सुभाष, 'अवर कंस्टीटूशन, जयपुर नेशनल बुक ट्रस्ट, 2001

54. शंकर, गौरी, 'इण्डियन नेशनल कॉग्रेस इट्स हिस्ट्री एण्ड हेरीटैज' नई दिल्ली ए.आई.सी.सी. 1975।

55. सेटी, जे.डी., 'स्टेरिक पॉवर आफ स्ट्रक्चर', दिल्ली, विकास पब्लिसिंग हाउस, 1972।

56. मुंशी, के.एम., 'इण्डिया कंस्टीटूशन डेकोमेन्टस बॉम्बे' जयपुर भारतीय विद्या भवन 1967।

57. श्री निवास एम.एन., 'सोशियल चेन्ज इन मॉडर्न इण्डिया' नई दिल्ली, ओरियन्ट लॉगमेन्स, 1972।

58. गडकर, पी.बी. गजेन्द्र, 'द कंस्टीटूशन ऑफ इण्डिया इट्स फिलोसपी एण्ड बेसिक पोस्टूलेट्स' यू.के. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1969।

59. मुखर्जी, पी.बी. 'द क्रिटिकल प्रोबलम आफ इण्डिया कंस्टीटूशन ' बॉम्बे यूनिवर्सिटी आफ बॉम्बे, 1972।

60. कश्यप, सुभाष, –'नेहरू एण्ड कंस्टीटूशन' नई दिल्ली, स्टेरलिंग हाउस, 1981।

61. देसाई, पी.बी., ' प्लानिंग इन इण्डिया' दिल्ली, विकास पब्लिसिंग हाउस, 1972।

62. सेठ, एस.पी., ' फण्डामेन्टल राइट एण्ड एमेडमेन्ट आफ दी इण्डिया कंस्टीटूशन बॉम्बे' यूनिवर्सिटी आफ बाम्बे, 1968।

63. वर्मा, एस.एल., 'भारत में संवैधानिक आपातकाल' जयपुर, रावत पब्लिकेशन, 1999।

64. पाण्डे, जे.एन., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' इलाहाबाद, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सीज, 2012

65. हेनरी, सी. हार्ट, 'इन्दिरा गाँधीज इण्डिया' यूनाइटेड स्टेट, वेस्टव्यू प्रेस बाउल्डर, 1976।

66. अग्रवाल, वी.आर, 'सुप्रीम कोर्ट प्रेक्टिस एण्ड प्रोसिजर', नई दिल्ली, इलाहाबाद लॉ एजेन्सी, 1974।

67. अनाजवाल, सी.सी., 'दि कंस्टीटूशन लॉ आफ इण्डिया' इलाहबाद लॉ एजेन्सीज, इलाहबाद, 1976।

68. भट्टाचार्य, अरूण, 'इण्डियन कंस्टीटूशन एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन' नई दिल्ली, मेट्रो पॉलिटन बुक कम्पनी, 1983।

69. मेहता, एस.एस., 'इण्डियन कंस्टीटूशन लॉ' कुरूक्षेत्र, विशाल पब्लिकेशन 1982।

70. कागजी, एम.सी. जैन, 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया', नई दिल्ली मेट्रो पॉलिटन बुक कम्पनी, 1984।

71. पंत, एच.जी., 'कंस्टीटूशन सिस्टम इन इण्डिया कंस्टीटूशन एण्ड चैन्ज', नई दिल्ली, बसुधा पब्लिकेशन, 1983।

72. परान्जे, एन.वी., 'द रोल आफ डायरेक्टिव प्रिन्सीपल्स अन्डर दी इण्डियन कंस्टीटूशन ' इलाहाबाद सेन्टर लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 1975।

73. पायली, एम.बी., 'क्राइसिस, कोशन्स एण्ड द कंस्टीटूशन ' बम्बई। एसीआर पब्लिसिंग हाउस, 1982।

74. रमन, सुन्दर, 'फण्डामेन्टल राइट एण्ड दी फोरेरी–सैकण्ड कंस्टीटूशन अमेडमेन्ट' कलकता मिनर्वा एसोसियेट, 1977।

75. रे.एस.एन., 'ज्यूडिशियल रिव्यू एण्ड फण्डमेन्टल राइटस', कलकत्ता, ईस्टन लॉ हाउस, 1974।

76. शकधर, एस.एल., 'द कंस्टीटूशन एण्ड द पार्लियामेन्ट इन इण्डिया' बम्बई, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, 1976।

77. शेषाद्रि, पी.एण्ड के.आर. आचार्य, कंस्टीटूशन फोरेरी सैकण्ड अमेडमेन्ट एक्ट, 1976, ए क्रिटिकल स्टडी', हैदराबाद, उसमानिया यूनिवर्सिटी प्लेस, 1977।

78. शुक्ला, वी.एन., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' लखनऊ, ईस्टन बुक कम्पनी 1982।

79. दातर, अरविन्द पी., दातर आन कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' आगरा, वाधवा एण्ड कम्पनी, 2001।

80. हसन, जोया एण्ड ई श्रीधरन, 'इण्डिया लिविंग कंस्टीटूशन आइडियाज, प्रेक्टिसेज, कॉन्टरवरसेज', दिल्ली। परमानेन्ट ब्लाक 2002।

81. सीरवी, एच.एम., 'कंस्टीटूशन लॉ आफ इण्डिया वॉल0 1, 11, 111, बॉम्बे, एन. एम.. त्रिपार्टी 1991।

82. मैथ्यू, पी.डी., 'फण्डामेन्टल राइटस इन एक्शन' नई दिल्ली, इण्डियन सोसियल इन्सट्टियूट 1996।

83. चौबे, शिभानीकिंकर, कास्ट्रीटेन्ट असेम्बली आफ इण्डिया' नई दिल्ली, मनोहर पब्लिसर एण्ड डिस्ट्रीब्यूर, 2000।

84. बक्शी पी.एम., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' दिल्ली यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग, 2002।

85. जैन, सुभाष सी., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया सेलेक्ट इश्यू एण्ड प्रेसीपन्स' नई दिल्ली, टैक्समान पब्लिकेशन्स, 2000

86. राजहंस, 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' नई दिल्ली, सुरजीत पब्लिकेशन्स, 1998।

87. स्वार्प, जगदीश, 'कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' 2 वॉल0 1,11,111, नई दिल्ली, मॉडर्न पब्लिकेशन्स, 2006।

88. जैन, एम.पी. इण्डिया कंस्टीटूशन लॉ वाल. 1, 2' नई बाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर, 2003।

89. हंसारिया, जस्टिस बी.एल., '6 शिड्यूल टू द कंस्टीटूशन' दिल्ली यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कम्पनी, 2005।

90. बक्शी, पी.एम., 'द कंस्टीटूशन आफ इण्डिया' दिल्ली यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कम्पनी, 2006।

91. जोइस, जस्टिस एम.रामा., 'लीगल एण्ड कंस्टीटूशन हिस्ट्री आफ इण्डिया' दिल्ली। यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कम्पनी, 2005।

92. ई.डी. सोरावजी सोली जे. ' लॉ एण्ड जस्टिस इन्थॉलोजी' दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग, 2006।

93. राय, कैलाश, 'कंस्टीटूशन लॉ आफ इण्डिया' इलाहाबाद, सेन्टर लॉ पब्लिकेशन, 2001।

94. शर्मा, एस.आर., ' इनसाइक्लोपीडिया आफ कंस्टीटूशन लॉ वॉल0 1 से 5 एन इन्ट्रोडक्शन लच कंस्टीटूशन लॉ, नई दिल्ली अनमोल पब्लिकेशन्स, 2003।

95. मैथ्यू, पी.डी. एण्ड पी.एम बक्शी, 'इण्डियन ज्यूडिकल सिस्टम' नई दिल्ली, आईएसआई, 2002।

96. कश्यप, सुभाष सी, 'एन्टी डिफेक्शन लॉ एण्ड पार्लियामेन्टरी प्रीवीलेक्स' बॉम्बे, एन.एम. त्रिपाठी प्रा.लि., 1993

97. चौधरी, अरूणधुती रॉय, 'युनिफार्म सिविल कोड़ सोसियल चेन्ज एण्ड जेण्डर जस्टिस' नई दिल्ली इण्डियन सोसियल इन्सटटीयूट 1998।

98. एन्टॉनी, मार्ग्रेट एण्ड जी माहेश्वरन, 'सोशियल सेग्रेशन एण्ड स्लम्स, द प्लाइट आफ दलित इन द स्लम आफ दिल्ली, नई दिल्ली इण्डियन सोशियल इन्सट्टीयूट, 2001।

99. लुइस, प्रकाश, 'एक्स्ट्राआर्डिनेरी ला इन इण्डिया ए रीडर फोर अण्डरस्टेण्डिंग लेगीजलेशन इण्डरजेण्डिंग सिविल लीवर्टिज' नई दिल्ली, इण्डरजेनिंग सिविल लीवरटिज, 2002।

100. चाको, टी एण्ड गोपेशनाथ, 'कन्जूमर एण्ड दियर राइटस' नई दिल्ली, आईएसआई 2002।

101. मैथ्यू, पी.डी. राजीव कपूर, 'लॉ आन फोरिजन कंस्टीटूशन' नई दिल्ली, आईएसआई, 2001।

102. बाधवा, के.के., 'कंस्टीटूशन एटानॉमी ए केस स्टेडी, जे.एण्ड के.', नई दिल्ली भावना बुक्स, 2001।

103. नूरानी, ए.जी., 'सिटीजन राइटस जज एण्ड स्टेट एकाउन्टविलेटी', नई दिल्ली, ओ.यू.पी. 2002।

104. सरस्वती, शशीनाथ, 'राइट टू एक्वालटी इन द कंस्टीटूशन ए गांधीयन प्रेसपेक्टिव/शशीनाथ सरस्वती' नई दिल्ली कन्सेप्ट पब्लिशिंग हाउस, 2002।

105. फर्नाडिज, वाल्टर एण्ड विजय प्रान्जपे, रिहवीलेशन पॉलिसी एण्ड लॉ इन इण्डिया ए राइट टू लाइव्लहूड' नई दिल्ली इण्डियन सोशल इन्स्ट्टीयूट 1997।

106. राय, कैलाश, 'कंस्टीटूशन लॉ आफ इण्डिया' इलाहबाद सेन्टर लॉ पब्लिकेशन, 2001।

107. चडडा, पी.के. ' भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' जयपुर आदर्श प्रकाशन, 1980।

108. गुप्ता, अनिरूद्ध, 'रिवोल्यूशन थ्रू वेलेट इण्डिया' नई दिल्ली अंकूर पब्लिसिंग 1977।

109. पालेकर एस.ए. 'इण्डियन कंस्टीटूशन गवरमेन्ट एण्ड पॉलिटिक्स', जयपुर ए.बी. डी. पब्लिसररर्स 2003।

110. विश्वरंजन मोहन्ते, 'कंस्टीटूशन गवरमेंन्टस एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया' नई दिल्ली, न्यू सेन्टरल पब्लिसर, 2009।

111. कौटिल्य, 'द कंस्टीटूशन हिस्ट्री आफ इण्डिया' बॉम्बे' सी जमनादस एण्ड कम्पनी एजूकेशनल एण्ड लॉ पवलेसर, 2002।

112. अग्रवाल आर.एन. 'नेशनल मूवमेन्ट एण्ड कंस्टीटूशन डवलपमेन्ट ऑफ इण्डिया' नई दिल्ली, मेट्रोपॉलिटन बुक्स कम्पनी प्रा.लि., 1976।

113. मौहम्मद बी.एस. सयैद, 'अवर कंस्टीटूशन हैव्स या हैव्ज नोटस मौहम्मद' दिल्ली, लिपि प्रकाशन, 1975।

समाचार पत्र–पत्रिकाऐं–

1. इण्डियन एक्सप्रेस
2. टाइम्स ऑफ इण्डिया
3. हिन्दुस्तान टाइम्स
4. नई दुनिया
5. हिन्दुस्तान दैनिक
6. राजस्थान पत्रिका
7. अमर उजाला
8. दैनिक जागरण
9. दिनमान
10. नवभारत टाइम्स

परिशिष्ट

ISSN No. (E) 2455 - 0817
ISSN No. (P) 2394 - 0344

RNI : UPBIL/2016/67980
Vol -I * Issue - 11 * February, 2017

Monthly / Bi-lingual

Multi-disciplinary International Journal

Remarking
An Analisation

Impact Factor
GIF = 0.543

Indexed with Google scholar

Impact Factor
SJIF =4.473

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-1* ISSUE-11* February- 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

आपातकाल में विरोधी दल के नेताओं की स्थिति का अध्ययन

योगेन्द्र सिंह
शोधार्थी ,
राजनीतिक विज्ञान विभाग,
कोटा यूनिवर्सिटी कोटा,
राजस्थान

सारांश

आपातकाल की घोषणा के साथ ही भारतीय राजनीति में नये युग का श्री गणेश हुआ देश के प्रमुख विपक्षी नेताओं और इन दलों के सक्रिय कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। आंतरिक सुरक्षा कानून और सेंसरशिप लागू कर दी गई। आपातकाल के दौरान विपक्षी पार्टी के नेताओं पर जो अत्याचार हुए इतिहास के काले पन्ने को आज भी याद किया जाता हैं इस पर समय–समय विभिन्न लेख प्रकाशित होते है। जिनमें विपक्षी पार्टी के नेताओं के साथ के साथ जो व्यवहार कांग्रेस पार्टी द्वारा किया गया, लोगों के बोलने की शक्ति ओर मिलकर प्रतिरोध करने की शक्ति, भ्रष्ट और अलोकतांत्रिक ताकतों को डरा देती हैं अगर एक बार हम लोगों ने बोलना बंदकर दिया और विरोध करना बंद कर दिया अगर हमने एक–दूसरे से मुँह मोड़ लिया तो हम ज्यादा समय स्वतंत्र नहीं रह पायेंगे और सच्चे अर्थों में लोकतंत्र का स्वरूप नष्ट हो जायेगा।

मुख्य शब्द : आपातकाल, सेंसरशिप, मीसा, डीआइआर, विरोधी दल, अनु. 352

प्रस्तावना

25 जून 1975 की रात को राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की सलाह पर उस मसौदे पर मौहर लगाते हुए देश में संविधान के अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल घोषित कर दिया। इसके तहत लोकतंत्र को निलम्बित कर दिया गया।

अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल लागू होने के बाद इंदिरा गांधी को असाधारण शक्तियां मिल गई। विपक्षी नेताओं जयप्रकाश नारायण, लालकृष्ण आडवाणी, चौधरी चरणसिंह, जार्ज फर्नाडिश, नरेन्द्र मोदी, मोरारजी देसाई, राजनारायण के अलावा सैंकड़ों नेताओं, कार्यकर्ताओं को मीसा (मेंटीनेंस ऑफ, इंटरनल सिक्योरिटी एक्ट) के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। तमिलनाडु में एम करूणानिधी सरकार को बर्खास्त कर दिया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे संघटनों को प्रतिबंधित कर दिया गया।

दिल्ली में अटलबिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में चलाए जा रहे जनसंघ सत्याग्रह में मोदी ने पहली बार सहभागिता की सन 1971 मे नवयुवक के तौर पर वे इन सत्याग्रहों का हिस्सा बने इस दौरान मुक्ति वाहिनी का साथ देने के विरोध में सरकार ने उन्हें जेल में डाल दिया। कई प्रकार की उच्च स्तरीय जिम्मेदारी के चलते हुए एक वर्ष के अंदर मोदी को अहमदाबाद में स्वयंसेवक कार्यालय का प्रचारक बना दिया।

आपातकाल के विरूद्ध मोदी को गुप्त रूप से कार्यों को करना पड़ा जिसके लिए आरएसएस ने उन्हें गुजरात की लोकसंघर्ष समिति का अधिकारी नियुक्त किया इस दौरान दिल्ली की जेल में कैद लोगों से अलग–अलग रूप व कपड़ों मे जाया करते थे। साथ ही उन्होंने अपना नाम भी रखा 'प्रकाश' इन साहसी कार्यों से वे जनता के लिए अद्वितीय शोभा के रूप में सामने आये।

1. झुक नहीं सकते

टूट सकते है मगर हम झुक
नहीं सकते।
सत्य का संघर्ष सत्ता से,
न्याय लड़ता है निरंकुशता से,
अंधेरे ने दी चुनौती है,
किरण अंतिम अस्त होती है।
दीप निष्ठा का लिये निष्कम्प,
वज्र टूटे या उठे भूकंप,
यह बराबर का नहीं है युद्ध,

हम निहत्थे, शत्रु हैं सन्नुद्ध,
हर तरह के शस्त्र से हैं सज्ज,
और पशुबल हो उठा निर्लज्ज।
किन्तु फिर भी जूझने का प्रण,
पुनः अंगद ने बढ़ाया चरण,
प्राण–प्राण से करेंगे प्रतिकार,
सम्पूर्ण की मांग अस्वीकार,
दांव पर सबकुछ लगा है, रुक
नहीं सकते।
टूट सकते है, मगर हम झुक
नहीं सकते।

अटल बिहारी वाजपेयी
(आपातकाल के दौरान जेल में रहते हुए लिखी कविता)

2. तीन दिन नही दिया भाई को खाना

आपातकाल लागू हाने के बाद पुलिस ने जब ज्यादती करना शुरू कर दिया तो सत्याग्रह होने लगे। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता खेमचंद जी की गिरफ्तारी को पुलिस उनके पीछे पड़ी थी। दरियावजगंज निवासी खेमजी जब नहीं मिले, तो उनके भाई लक्ष्मण सिंह को उठा लिया। खेमजी का पता पूछने के लिए भाई को न सोने दिया और न ही भोजन दिया। परिवार की यह हालत देख खेमचंद जी ने सत्याग्रह की तिथि घोषित कर दी और 7 जुलाई 1975 को उनकी गिरफ्तारी हो गई। इसी तरह पुलिस ने विश्व हिंदू परिषद के शीर्ष नेता स्व. आचार्य गिरिराज किशोर की गिरफ्तारी के लिए उनके परिजनों पर दबाव बनाया।

3. अपराधियों जैसा बर्ताव करता था प्रशासन

वयोवृद्ध भाजपा नेता गैंदालाल गुप्ता बताते है कि जो लोग जेल चले गए,उनके परिजन पुलिस उत्पीड़न से मुक्त रहते थे। जो भूमिगत थे। उनके परिवारों में आए दिन दविशें पड़ती थी। पुलिस लोकतंत्र के प्रहरियों से शातिर अपराधी की तरह व्यवहार करती थी। उन्होनें कहा कि जेल में चूंकि मींसा बंदियों की तादाद ज्यादा थी। इस कारण जेल प्रशासन कभी उलझने की नहीं सोचता था।। जेल के अंदर रहने वालों का सबसे बड़ा दर्द यह था कि वे अपने परिवार से दूर थे। अखबारों में दमन की खबरे ही ज्यादा आती थी। जिन पर खूब चर्चा होती थी। जेल के अंदर जब यह खबरे पहुँचती थी कि बंदी लोगों के साथियों को पकड़ने के लिए पुलिस परिवारजनों पर दबाव बना रहीं है तो खून खोल उठता था। लेकिन हम सब विवश थे।

4. अपनों ने ढ़हाये थे अंग्रेजों जैसे जुल्म

आपातकाल का नाम सुनते ही प्रसिद्ध कवि देवकीनंदन कुम्हेरिया की बूढ़ी आंखों में लाल डोरे पड़ गये। बताया कि अपने देश के सिपाहियों ने बेदर्द तरीके से बंदूकों की बटों और लाठी डण्डों से पिटाई करते हुए सड़कों पर घुमाया। जेल में प्रताड़ित किया गया है। डा0 फूलचंद जैन बताते है कि नारेबाजी करते हुए थाने पहुँचे, तो पुलिस वाले डंडे से पीटते हुए दानघाटी मंदिर तक लाए और वहां से थाने तक ले गये। फिर करीब तीन घंटे तक थाने में पिटाई की गई। इसने मुझे मरणासन्न स्थिति में पहुँचा दिया।

नेमीचंद अग्रवाल बताते है कि जितने नारे लगाए, उतने ही डंडे पड़े। महीनों तक शरीर के अंगों ने काम करना छोड़ दिया। पिटाई के वक्त लगा कि मुश्किल ही बच पायेंगे। परंतु अपनी मातृभूमि को अपने ही लोगों से बचाने की थी। सो उत्साह ने दामन नही छोड़ा।

5. जेल जाने के डर से बने टी.बी. मरीज

सुरीर के आर.एस.एस. कार्यकर्ता 84 वर्षीय बृजकिशोर वार्ष्णेय ने इमरजेंसी की याद ताजा करते हुए बताया कि इमरजेंसी के दौरान पुलिस तरह–तरह की यातना दे रही थी। उन्हें पकड़ने के लिए पुलिस घूम रही थी। कई बार घर पर दबिश दी। इससे बचने के लिए टी. बी. सेनेटेरियम वृंदावन में जाकर भर्ती हो गए थे। यहाँ पर छः माह तक मरीज के रूप में पड़े रहे।

6. कोतवाली में नोंचे गये बाल और नाखून

मथुरा आपातकाल के दौरान पुलिस से लेकर जेल तक में लोगों को यातनाएं दी गई। जो पकड़ में नहीं आ उनके परिजनों पर जुल्म ढ़ाए गए। कोतवाली में तो कई सत्याग्रिहों के नाखून और बाल तक नोंचे गए थे।

आपातकाल के दौरान रामबाबू भाटिया कई स्थानों पर छिपते रहे । पीछे से उनके घर की कुर्की हो गई। इसके बाद उनकी भाटिया वॉच कंपनी की दुकान की कुर्की हो गई। पुलिस इस दुकान से 12 टन घड़ियों का माल ले गई थी। बड़ा बेटा नहीं मिला, तो छोटे को ले गई। बेमुश्किल स्कूल के प्रिंसिपल ने यह कहकर उसे छुड़वाया कि ये बच्चा तो स्कूल में था। उनकी पत्नी आत्मादेवी ने सत्याग्रिहों का माला पहनाकर स्वागत किया था तो उन्हें भी पुलिस ने बहुत परेशान किया। आखिर 31 जुलाई 1975 को जेलर ने उन्हें तन्हाई में डाल दिया। इस बैरक में 22 घंटे कैद रखा जाता था। डी.आई.आर में निरूद्ध पूर्व नगरपालिका अध्यक्ष वीरेन्द्र अग्रवाल बताते है कि इमरजेंसी के दौरान वह शांति मार्केट में बैठे थें। तभी पुनेठा नाम का दरोगा आया और उन्हें कोतवाली ले जाकर विभिन्न धाराओं में पाबंद कर जेल भेज दिया। कई लोकतंत्र सैनानियों के कोतवाली में नाखून और सिर के बाल तक नोंचे गये। जेल में शाम को खाना खाने के दौरान यह गीत रोजाना गाया जाता था।

देश प्रेम का मूल्य प्राण है, देख कौन चुकाता
है।
देखें कौन सुमन सैया तक कंटक पथ अपनाता
है।
संबल मोह–ममता को तल कर माता जिसको
प्यारी है।
शत्रु को हिय छेदने हेतु जिसकी तेज कटारी
हो।
वहीं वीर अब बढ़े जिसमे हँस–हँस कर बढ़ना
आता हो।

आपातकाल का विरोध मेंटीनेंस ऑफ ईटरनल सिक्योरिटी एक्ट(मींसा) और डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स यानि डीआईआर स्वयं सेवक संघ और जनसंघ से जुडे थे।

7. जंजीरों में जकड़ें गए जॉर्ज

आपातकाल के दौरान तत्कालीन केन्द्र सरकार ने विपक्षी नेता जॉर्ज फर्नाडिंश और 24 अन्य लोगों के

खिलाफ बड़ौदा डायानामाइट नामक अपराधिक मामला दर्ज किया था। सरकार की तरफ से सी.बी.आई. ने आरोप लगाया था कि जॉर्ज और उनके सहयोगियों ने सरकारी प्रतिष्ठान और रेलवे लाईन को उड़ाने के लिए डायनामाइट की तस्करी की। समाजवादी नेता जॉर्ज को जेल में जंजीरों मे जकड़ कर रखा गया था। आपातकाल के बाद हुए चुनाव में जनता पार्टी की सरकार आने पर फर्नांडिश और उनके सहयोगियों के खिलाफ चल रहा मामला वापिस ले लिया गया था।

8. संपूर्ण क्रांति के नायक

संपूर्ण क्रांति के जनक रूप में पहचान बनाने वाले जयप्रकाश नारायण की पहचान लोकनायक के रूप में रही है। सन् 1974 मे बिहार और गुजरात मे चले छात्र आन्दोलन का नेतृत्व जयप्रकाश नारायण ने किया। आपातकाल के दौरान 21 महीने की जेल काटने के बाद सन् 1977 के लोकसभा चुनाव में जनता पार्टी के गठन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। उन्हें आपातकाल के हीरों के रूप में पहचाना जाता है। पहली बार गैर कांग्रेस सरकार के केन्द्र में सत्तारूढ़ होने के लिए भाई जयप्रकाश को ही श्रेय दिया जाता है। राजनीति में रहते हुए भी जयप्रकाश नारायण ने कभी सक्रिय राजनीति में आने या पद की महत्वाकांक्षा नहीं पाली।

9. आपातकाल व राज्य के शत्रु

आपातकाल के दौरान गुजरात में संघ के सभी बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया था। मोदी को हेडगेवार भवन का कनिष्ठ कर्मचारी मान छोड़ दिया गया। मगर भूमिगत आंदोलन को न सिर्फ संगठित किया, बल्कि मीडिया पर पाबंदी के बावजूद इस सरकारी अतिरेक से जुड़ी खबरें पर्चो के रूप में देश ही नहीं विदेश भिजवाने का प्रबंध किया। कार्यकर्ताओं के लिए सुरक्षित ठिकाने और पैसे जुगाड़े। उस वक्त सरकार ने विरोध करने वाले लोगों को राज्य का शत्रु करार दिया।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोधपत्र के माध्यम से शोधार्थी द्वारा आपातकाल में विरोधीदल के नेताओं की स्थिति, भूमिका का अध्ययन करना है । तथा यह बात ज्ञात करना कि आपातकाल में सरकार द्वारा विरोधी दल के नेताओं पर किस– किस प्रकार के अत्याचार किये तथा विरोधी दल के नेताओं की क्या भूमिका रही।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आपातकाल में सरकार द्वारा विरोधी दल के नेताओं को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया और उनको नजरबंद किया गया तथा विरोध में उठने वाले स्वरों को दबाया गया तथा एक तरह से लोकतंत्र की हत्या कर दी गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *राजस्थान पत्रिका 9 अप्रैल 2013*
2. *राजस्थान पत्रिका 14 अप्रैल 2013*
3. *राजस्थान पत्रिका 27 जून 2013*
4. *राजस्थान पत्रिका 17 मई 2014 (अलवर)*
5. *राजस्थान पत्रिका 25 जून 2015*
6. *राजस्थान पत्रिका 12 अक्टूबर 2015*
7. *दैनिक जागरण 25 जून 2011*
8. *दैनिक जागरण 25 जून 2015 (आगरा)*
9. *अमर उजाला 25 जून 2015*

ISSN (P) : 2321-290X ★ (E) 2349-980X
Vol 4 * Issue-5* January, 2017
RNI No. : UPBIL/2013/55327
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
Indexed with Google scholar
Impact Factor
SJIF = 4.106
GIF = 0.543
The Research Series
द्विभाषीय - मासिक
Shrinkhala
श्रृंखला
A Multi-Disciplinary International Journal

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-5*January-2017
E: ISSN NO.: 2349-980X Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

आपातकाल में मीडिया की भूमिका का अध्ययन

सारांश

लोकतंत्र में प्रेस को चौथा स्तम्भ माना जाता है। लोकतंत्र की मजबूती का प्रेस की आजादी से सीधा संबंध है। स्वस्थ्य लोकतंत्र की धमनियों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता रक्त की तरह बहती है और निष्पक्ष मीडिया लोकतंत्र का ह्रदय है जो सुनिश्चित करता है कि रक्त संचार को सुचारू रूप से होता रहे। यही कारण है कि जब भी जहां भी लोकतंत्र को कमजोर करने या उसकी हत्या करने की कोशिश की गयी पहला बार मीडिया की आजादी पर किया गया। कोई भी तानाशाह स्वतंत्र प्रेस/मीडिया का पक्षकार कभी नहीं हो सकता। तानाशाही में भय और आतंक के विरूद्ध डटकर खड़ी होने वाली मीडिया को बेरहमी से कुचला जाता है। भारत में भी आपातकाल के बहाने तानाशाही का ऐसा भी रूप देखा है।

मुख्य शब्द : आपातकाल, प्रेस, मीडिया, लोकतंत्र, सेंसरशिप, तानाशाह, मींसा।

योगेन्द्र सिंह
शोध छात्र,
राजनीतिक विज्ञान विभाग,
कोटा विश्वविद्यालय,
कोटा

प्रस्तावना

25 जून 1975 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने भारत में आपातकाल लगाया गया था। आपातकाल के लगते ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू हो गया प्रेस को साफ संदेश दे दिया गया था कि उनको इंदिरा इज इंडिया एण्ड इंडिया इज इंदिरा मानना होगा या भुगतना होगा। कुछ ने झुकने से साफ इंकार कर दिया, भारतीय मीडिया के इतिहास का सबसे काला अध्याय बन गया। आपातकाल का वह दौर।

आपातकाल की घोषणा के साथ ही प्रेस पर सेंसरशिप लागू कर दी गयी। स्वतंत्रता के बाद ऐसी पहली बार हुआ था। प्रेस पर पूर्ण सेंसरशिप लगाई गई थी। सभी अखबारों के सम्पादकों पर आपातकाल के दौरान हो रही ज्यादतियों की खबर ना छापने के लिए दबाव बनाया गया। बड़ी संख्या में पत्रकार इस दबाव के आगे नतमस्तक हो गये। मीडिया में सत्ता की चापलूसी करने वाले पत्रकारों ने भारतीय पत्रकारिता को हमेशा के लिए शर्मिन्दा कर दिया। अधिकतर अखबारों में केवल सरकारी विज्ञप्तियों को ही खबर की तरह छापा जा रहा था। मीडिया में आपाताकल और सरकार विरोधी खबरों के लिए कोई जगह नहीं थी। खबरों को छापने से पहले सरकारी अधिकारी को दिखाना आवश्यक था। किसी भी खबर को बिना सूचित किये नहीं छापा जा सकता था। जैसे कई अखबारों ने मजबूरी में आपातकाल का विरोध नहीं किया। 9 जुलाई 1975 को दिल्ली के 47 सम्पादकों ने देश में समाचार पत्रों पर लगाये सेंसरशिप और इंदिरागाँधी की नीतियों पर अपना समर्थन व्यक्त किया।

सप्ताहिकी हिन्दुस्तान पत्रिका ने खुलकर सरकार की तरफदारी की। पत्रिका ने 6 फरवरी 1977 को ''राजनीतिक शतरंज के पुराने खिलाड़ी और नए मौहरे'' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित किया। जिसमें आने वाले चुनाव में कांग्रेस का पलड़ा भारी होने की बात कही गई थी।

जो झुकने को नहीं हुए तैयार

इन सरकारी शिकंजे के बावजूद बड़ी संख्या में ऐसे भी पत्रकार थे जिन्होंने अपने जमीर पर दाग नहीं लगने दिया। प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष करते हुए कुलदीप नैयर, सूर्यकान्त बाली, विक्रमराव, वीरेन्द्र कपूर, श्याम खोंसला, देवेन्द्र स्वरूप, रतन मलकायी और दीनानाथ मिश्र जैसे पत्रकारों ने जेल की यातनाएँ झेली। कुल 327 पत्रकारों को मींसा कानून के अन्तर्गत जेल में बन्द कर दिया गया।

सरिता में 6 महीने तक कोई सम्पादकीय कालम नहीं छपा। सरिका ने जुलाई 1975 के अंक में संपादकीय सेंसर अधिकारी द्वारा काला किए गए वाक्यों और शब्दों सहित हूबहू प्रकाशित कर दिया। इस अंक में 27–28 संख्या के पृष्ठ लगभग पूरी तरह काले थे।

प्रेस में प्रतिबंध को लेकर ऐसा भय का वातावरण बना कि सेमीनार और अधिनियम जैसे अनेक पत्र पत्रिकाओं को अपने प्रकाशन बंद करने पड़े। सरकार

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-5*January-2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

ने 3801 समाचार पत्रों के डिक्लेरेशन जब्त कर लिये और 290 अखबारों के विज्ञापन बंद कर दिये गये।

आपातकाल से पहले देश में चार समाचार समितियाँ थीं – पीटीआई, यूएनआई, समाचार भारती और हिन्दुस्तान समाचार। सरकार ने इसे मिलाकर एक समिति समाचार का गठन किया जिससे यह पूरी तरह नियंत्रण में रहे। 18 दिसम्बर 1975 को अध्यादेश द्वारा प्रेस परिषद को समाप्त कर दिया गया।आपातकाल के दौरान आकाशवाणी और दूरदर्शन पर जनता का ऐसा विश्वास उठा कि लोग बीबीसी और वॉयस ऑफ अमेरिका सुनते थे।

ऐसा नहीं था कि सरकार ने विदेशी पत्रकारों को परेशान ना किया हो ब्रिटेन के टाइम्स ऑफ गार्जियन के समाचार प्रतिनिधियों को भारत से निकाल दिया। रायटर सहित अन्य एजेन्सियों के टेलेक्स और टेलीफोन काट दिये। 7 विदेशी संवाददाताओं को भारत छोड़ने का हुक्म सुनाया गया।

लेकराज के 5 जुलाई 1975 के अंक में आपात घोषणा शीर्षक से सम्पादकीय छपा है। इस संपादकीय में कहा गया है कि कुछ लोगों के अपराध के लिए सम्पूर्ण प्रेस जगत को सेंसरशिप क्यों झेलना पड़े?

लोकराज के 12 जुलाई 1975 के अंक में अनुशासन पर्व शीर्षक से एक संपादकीय छपा जिसमें आपातकाल की घोषणा का स्वागत किया गया था।

25 जून 1975 की रात कालरात्रि जैसी थी। जब देश में आपातकाल लागू हुआ। अगली सुबह से ही पुलिस ने सामाजिक संगठनों, प्रेस, राजनैतिक दलों, समाजसेवियों को सूचीबद्ध कर जेल भेजना शुरू कर दिया। एटा (उत्तर प्रदेश) के करीब उस वक्त 200 लोग मींसा में बंद हुए इनमें भाजपा के बुजुर्ग नेता पूर्व राज्यमंत्रि गेंदालाल गुप्ता, रमाकान्त वैद्य, अतिवीर सिंह जैन, राजेन्द्र प्रसाद शर्मा, बैनीराम आदि लोग जेल में थे। कई ऐसे लोग भी हैं जो इस दुनिया में नहीं रहे हैं। इनमें स्व0 बचान सिंह राठौड़, स्व0 फकीर चन्द्र अग्रवाल जैसे लोकतंत्र रक्षक सेनानी भी शामिल हैं।

बॉलीवुड पर भी चला सरकारी डण्डा

विरोध प्रदर्शन का तो सवाल ही नहीं उठता था क्योंकि जनता को जगाने वाले लेखक, कवि और फिल्म कलाकारों का मुंह बंद करने के लिए नहीं बल्कि इनसे प्रशंसा करने के लिए विद्याचरण शुक्ल सूचना प्रसारण मंत्रि बनाये गये थे।

उन्होंने फिल्मकारों को सरकार की प्रशंसा में गीत लिखने और गाने पर मजबूर किया। ज्यादातर लोग झुक गये लेकिन किशोर कुमार ने आदेश नहीं माना। उनके गाने रेडिया पर बजने बंद हो गये। उनके घर आयकर के छापे पड़े।

फिल्मों ने दिखाया दर्द

1. **हजारों ख्वाहिशें ऐसी 2005**
   निर्देशक सुधीर मिश्रा की यह फिल्म आपातकाल की पृष्ठभूमि पर बनी है। फिल्म में उस दौरान बढ़ रहे नक्सलवाद पर भी प्रकाश डाला गया है।
2. **नसबंदी 1978**
   सरकार द्वारा चलाए गए नसबंदी अभियान पर कटाक्ष करती आइ.एस. जौहर की इस फिल्म की रिलीज को प्रतिबंधित कर दिया गया क्योंकि इसमें इंदिरा सरकार को दिखाया गया था।
3. **किस्सा कुर्सी का 1977**
   अमृत नाहटा की इस फिल्म में शबाना ने भोली–भाली जनता का किरदार निभाया है। आपातकाल पर बनी इस फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया गया और सभी प्रिंट जला दिये गये।
4. **आँधी 1975**
   गुलजार की इस फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया गया क्योंकि यह इंदिरा गाँधी पर आधारित थी।

भूल नहीं सकते आपातकाल

ए. सूर्यप्रकाश के दुःखदायी अनुभवों में से एक है। इंदिरा गाँधी ने 40 साल पहले जब देश पर आपातकाल थोपा था। तब कर्नाटक के पुलिस महानिरीक्षक मेरे संपादकीय बोस हो गये थे। उन्हें राज्य में सेंसर अधिकारी नियुक्त किया गया था। उनके पास पुलिस उपाधीक्षकों, इन्सपेक्टरों और सूचना विभाग के अफसरों की भारी भरकम टीम भी थी। ये सभी अखबारों में अगले दिन के संस्करणों में छापे जाने वाली सभी संपादकीय सामग्री को भंली प्रकार से जांच के लिए उत्तरदायी थे।

आपातकाल के दौरान भूमिगत संचार व्यवस्था के द्वारा एक समाचार प्रचार तंत्र खड़ा हो गया यदि ऐसा नहीं किया जाता तो जनजीवन को एकपक्षीय समचार मिल पाता और सच्ची खबरों से वंचित रह जाते। आपातकाल में संचार अवरोध का खामियाजा जनता पर नहीं पड़ सका किन्तु सत्ता और सरकार आपातकाल विरोधियों की मनोदशा को नहीं समझ पाये। संचार अवरोध का कितना बड़ा खामियाजा सत्ता को उठाना पड़ सकता है। यह वर्ष 1977 के चुनाव परिणाम से सामने आया।

अध्ययन का उद्देश्य

आपातकाल में मीडिया के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि लोकतंत्र में चौथा स्तम्भ माने जाने वाला मीडिया को किस प्रकार से निर्बल कर दिया गया और प्रेस पर सेंसरशिप लगा दिया गया। इस अध्ययन के माध्यम से आम जनता, राजनीति विश्लेषक, शोधार्थी यह जान सकेंगे। 25 जून 1975 को आपातकाल लगते ही मीडिया की आजादी पर पहला बार किस प्रकार किस गया जिसमें अनेक पत्रकारों ने सरकार की तानाशाही रवैये के चलते घुटने टेक दिये। जिन्होंने घुटने नहीं टेके उनके साथ किस प्रकार का व्यवहार किया गया।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है। आपातकाल का तानाशाही रूप बहुत ही भयानक था जिसका खामियाजा प्रेस, विरोधी दलों के नेता एवं आम जनता को भुगतना पड़ा था और सन 1977 का चुनाव परिणाम इसी का कारण था। हम आशा करते हैं कि भविष्य में आपातकाल की पुनरावृति न हो।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-5*January-2017
E: ISSN NO.: 2349-980X Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मुखर्जी प्रणव : द ड्रामेटिक डिकेड : इन्दिरा गाँधी ईयर्स।
2. नायर कुलदीप : द जजमेन्ट : इनसाइड स्टोरी ऑफ द इमरजेंसी इन इंडिया (विकास पब्लिशिंग हाउस) 1977।
3. डॉ.अरूण भगत,महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, पी एच. डी. सन 2009।
4. कपूर कूमी, द इमरजेंसी ए पर्सनल हिस्ट्री, पैंग्विन वाइकिंग।
5. दैनिक जागरण 25 जून 2015।
6. राजस्थान पत्रिका 25 जून 2015।
7. इण्डियन एक्सप्रेस।